धन्यवाद !

१. चिरंजीव कमलकिशोर जी, सुपुत्र श्री हेमराज जी कांसल बरनाला [पंजाब]।
२. श्री शिवजीराम हेमराज जी मित्तल, बरनाला (पजाब)।
३: श्री ओमप्रकाश ललितमोहन जी मित्तल, बरनाला (पंजाब)
४. श्री टी. आर. जैन, लुधियाना ने अपनी सुपुत्री आयुष्मती शशिबाला बी.ए. के शुभ-विवाहोपलक्ष में।
५. श्री ओमप्रकाश जी जैन, लुधियाना ने अपने सुपुत्र श्री सुरेशकुमार के शुभ-विवाहोपलक्ष में।
६. श्री धर्मचन्द जैन, संगरया मण्डी ने अर्पने सुपुत्र श्री जैनप्रकाश जी के शुभ विवाहोपलक्ष में।
७. श्री रौनकराम पालाराम जी गुप्ता, रामामण्डी ने श्री वज़ीरचन्द जी के शुभ विवाहोपलक्ष में।
८. श्री हंसराज चैनलाल जी जैन, जालन्धर शहर (पंजाब)।
९. श्री यशपाल जी जैन, मालेरकोटला (पंजाब)।
१०. श्री मुलखराज जी जैन, मालेर कोटला (पंजाब)।
११. मुनशी श्री वलीरामजी जैन, मालेर कोटला (पंजाब)।
१२. श्री देवीदयाल जी जैन मालेर कोटला (पजाब)।
१३. श्री रोशनलाल सतपाल गुप्ता, गीदड़बाहा मंडी (पंजाब)।
१४. श्री चाननराम रोशन लाल जैन, बलाचौर (दोआबा)।
१५. श्री कबूलचन्द जुगमिन्द्रलाल जैन, पद्मपुर (राजस्थान)।
१६. श्री पृथ्वीराज अभयकुमार जैन, पद्मपुर (राजस्थान)।
१७. श्री हिम्मतराय चन्द्रभान जैन, तलवण्डी मज्जूकी (संगरूर)।
१८. डा० देवकीनन्दन मित्तल, संगरूर (पंजाब)।

मुख्य सहायक-ग्रन्थ सूची

श्री आचाराङ्ग सूत्र	(पूज्य श्री अमोलक ऋषि जी महाराज)
श्री ठाणांग सूत्र	"
श्री समवायाग सूत्र	"
श्री भगवती सूत्र	"
श्री ज्ञाताधर्मकथाग सूत्र	"
श्री उवासगदसाग सूत्र	"
श्री अन्तगडदसांग सूत्र	"
श्री अनुत्तरोववाइअदसाग सूत्र	"
श्री विपाकश्रुत	"
श्री रायपसेणी सूत्र	"
श्री उत्तराध्ययन सूत्र	(पूज्य श्री आत्माराम जी महाराज)
श्री दशवैकालिक सूत्र	"
पर्युषण-प्रवचन	(राष्ट्र-सन्त उपाध्याय प. श्री अमर मुनि जी)
तीन बात	"
गृहस्थ-धर्म	(योगनिष्ठ प. मुनि श्री फूलचन्द्र जी 'श्रमण')
श्रावक-कर्त्तव्य	(पं मुनि श्री सुमनकुमार जी)
विचार-रेखा	(पं. गणेश मुनि जी शास्त्री, साहित्यरत्न)
जैन-सिद्धान्त बोल-सग्रह	(श्री भैरोदान जी सेठिया, बीकानेर)
श्रीमद्भगवद्गीता	
मनुस्मृति	
शतक-त्रय	(भर्तृहरि)
पचतन्त्र	(विष्णु शर्मा)

चन्दन-दोहावली

समीक्षात्मक-अध्ययन

जब मनुष्य इस ससार को देखता है तो दृश्य का प्रभाव उसके मन और मस्तिष्क को आन्दोलित कर देता है, यही आन्दोलन वाणी के माध्यम से व्यक्त होने के लिये मचल उठता है, इसी अवस्था में हृदय के भाव, मस्तिष्क के विचार और उन भावो एव विचारो से प्रभावित द्रष्टा का व्यक्तित्व मुखरित होकर साहित्य का रूप धारण कर लेता है। इस प्रकार युगयुगान्तरो से जो साहित्य-वर्षण हो रहा है, आज उसने एक विशाल साहित्य-सिन्धु का रूप धारण कर लिया है।

जब हम उस साहित्य-सिन्धु का मन्थन करते है तो उसमें तीन तत्त्वो की प्रधानता दृष्टिगोचर होती है—कल्पनातत्त्व, बुद्धितत्त्व और रस-तत्त्व। साहित्य में कही कल्पनातत्व की प्रधानता रहती है, कही बुद्धितत्व की और कही रस तत्त्व की, किन्तु उत्तम साहित्य में तीनो तत्त्वो का सामञ्जस्य होता है और इस सामञ्जस्य से युक्त साहित्य कल्पना के कारण सुन्दर, बुद्धितत्त्व के कारण शिव और रस-तत्त्व के कारण सत्य एवं स्थायी हो जाता है। ऐसा साहिन्य कभी पुराना नही पड़ता। हमारा प्राचीन साहित्य इसी सामञ्जस्य के कारण आज भी नवीन है और कल भी नवीन ही रहेगा।

समय-समय पर समाज में ऐसे मनीषी विद्वान् अवतरित होते रहते है जो मानवता के पथ को प्रशस्त करने के लिये प्राचीन साहित्य-परम्परा में युगोपयोगी नया अध्याय जोडकर उस परम्परा को अमरता एवं अक्षयता प्रदान करते है। हमारे प्रबुद्ध चेता-मनीषी सन्त श्री चन्दन मुनि जी इसी परम्परा के सन्त साहित्यकार

पक्ष को दृष्टि से भी चन्दन दोहावली के उक्ति-रत्न अत्यन्त मोहक, आकर्षक एवं प्रभावशील है।

पहली बात तो यह है कि कवि युग-गति को भूलता नहीं, क्योंकि कवि-मस्तिष्क को ज्ञात है—

वायुयान युग आज है, गाड़ी-युग नहिं जान।
इसको 'चन्दन' चाल तूं, चातुर बन पहचान॥

सचमुच कविश्री जी ने चतुर बन कर युग-गति को समझा है और वर्तमान के मार्ग पर प्राचीनता की गाड़ी कैसे चल सकती है? इसके मर्म को उपस्थित किया है।

आज के युग की पहली माग है 'समन्वय' और भगवान महावीर के युग की भी प्रबल मांग थी 'समन्वय'। भगवान् महावीर ने 'अनेकान्तवाद—स्याद्वाद' के सिद्धान्त-सूर्य से संसार को आलोकित किया था और श्री चन्दन मुनि जी ने उसी आलोक में बैठकर नवीन भाषा-शैली में समन्वयवाद को उपस्थित किया है। एक ओर वे जैन-सस्कृति की अमृत-वर्षिणी भावना को साहित्यिक रूप में उपस्थित करते हुए कहते है—

जन्म-मरण के चक्र की, जो सीमा से पार।
'चन्दन' जो भी हैं वहां, करें नमन स्वीकार॥

'जो भी हैं वहां'—इन शब्दो में कवि का औदार्य ही नमनशील है, इसकी वन्दना है उन सबको जो सासारिक बन्धनों से मुक्त है, शुद्ध है, बुद्ध है, सिद्ध है और वन्दनीय है। इस वन्दना मे सबको अपनी वन्दन भावनाए समर्पित कर कवि का उदारता और समन्वय को सन्तोष नही हुआ, अत. वह आगे बढ़कर स्पष्ट भाषा एव गद्गद्-वाणी मे बोल उठा है—

राम-जयन्ती आपको, कहती बनना राम।
जुल्म और अन्याय का, कभी न लेना नाम॥

करने के दायित्व को पूर्ण करती हुई कविवाणी स्पष्टता के लाउड-स्पीकर पर बोल उठी—

धन्य आज के श्रावको ! बने महा डरपोक !
मढ़ी मसानी कब्र को, देते फिरते धोक ?

समाज-दर्शन :

सन्त-कवि भी तो आखिर समाज का एक अग है और समाज के प्रति उसका एक कर्तव्य भी है–उसे बुराइयो से बचाना। कविश्री जी का कर्तव्य मौन नही रहा और उन्होने समाज पर ऐसे तीखे व्यंग्य किए है जो समाज को फ़ौरन ही जागृत करनेवाले है। पहला व्यंग्य तो 'मम्मी-डेडी' पर ही करते हुए कितनी ओजस्विनी भाषा में कहा गया है—

'चन्दन' मम्मी अब कहो, माँ कहने में पाप।
खबरदार जो बाप को, कहा किसी ने बाप॥

चाहे इस दोहे को पढकर मम्मी मिमिआए या डेडी डांडे मारे या कोई बच्चा चीखे-चिल्लाए, कवि जी ने तो जो कहना था सो कह दिया है, कहने योग्य जो है।

बरातो में भाडो-सा भगड़ा भारतीय-समाज के लिये एक कलंक ही तो है, उद्‌बुद्ध चेता समाज-सुधारक कवि इसे देखकर मौन कैसे रह सकता था, वह अफसोस की वाणी मे बोला—

'चन्दन' जिसका नाचता, बाप बीच बाजार।
डाले क्यों नहिं भंगड़ा, उसके बरखुरदार॥
पड़ती ज्यों-ज्यों ढोल पर, उलटी चन्दन चोट।
मूर्ख खूब उछालते, उछल-उछल तब नोट॥

आज का युग नारी के समानाधिकार की रट लगा रहा है, परन्तु उसकी दृष्टि में समानाधिकार का अर्थ यही है कि नारी

कुछ लोग हिन्दी को अपनाने भी लग गये हैं, परन्तु इगलिश के मोह का परित्याग नही कर पाए, ऐसे लोग भी क्रान्तद्रष्टा मुनिराज की नजरों से बच नही पाए। उनके लिये भी सजग कवि वाणी कह उठी है :-

नजर मार चन्दन ज़रा, देखो तो बाज़ार।
इंगलिश बोर्ड हैं सैकड़ों, हिन्दी के दो चार॥
उनमें भी हिन्दी तले, ऊपर इंगलिश मेम।
चन्दन हिन्दुस्तान का, यह है हिन्दी प्रेम ?

इस सन्दर्भ में यह समझना आवश्यक होगा कि मुनिराज इंगलिश भाषा के विरुद्ध नही, इंगलिश-प्रेम के विरुद्ध है। उनका कथन है—

इंगलिश पढ़ने के कभी, 'चन्दन' नहीं विरुद्ध।
बनिये पर अंग्रेज मत, रखिये निर्मल बुद्ध॥

राष्ट्र-भक्ति :

श्री चन्दन मुनि जी जो कुछ कह रहे है उस सबके पीछे प्रेरणा-बिन्दु के रूप में देश-प्रेम एवं राष्ट्र-भक्ति ही है, जैसे माला के सभी मनकों के बीच धागा है, वैसे ही उनके प्रत्येक वचन के पीछे राष्ट्र-प्रेम है। उदाहरण के रूप में—

तन मन धन चन्दन सभी, वारे वही सहर्ष।
रोम-रोम में रम रहा, जिसके भारतवर्ष॥

आज हमारा प्यारा विद्यार्थी-वर्ग पथभ्रष्ट हो रहा है। राष्ट्र के जागरूक सन्त 'चन्दन' जी की दृष्टि से राष्ट्रव्यापिनी यह बुराई भी छिपी नही रही। वे कहते है—

वैरी विद्या के बड़े, तोड़ फोड़ हड़ताल।
दोनों ही से दूर तुम, रहना चन्दनलाल॥

मैंने बटलोई के एक दाने के समान 'चन्दन दोहावली' का कुछ रूप प्रस्तुत किया है। वस्तुत: 'चन्दन दोहावली' का प्रत्येक दोहा अपने आप में पूर्ण है, परन्तु उसकी विस्तृत व्याख्या की जाए तो प्रत्येक दोहा अपने आप में सिमटा हुआ एक प्रवचन है।

सांस्कृतिक दृष्टि से चन्दन दोहावली को शीघ्र ही वह स्थान प्राप्त होगा जो कबीर दोहावली या तुलसी दोहावली को प्राप्त है, अनुभव की दृष्टि से 'चन्दन दोहावली' की तुलना रहीम की दोहावली से की जाया करेगी और कला की दृष्टि से 'चन्दन-दोहावली', बिहारी सतसई के समकक्ष मानी जायेगी, यह मेरा दृढ़ विश्वास है।

यह चन्दन - दोहावली,
सुन्दर सरस अनूप।
बिन्दु-बिन्दु में सिन्धु है,
या गागर में कूप॥

लुधियाना
वैशाख शुक्ला प्रतिपदा २०२८
२५-४-७१

तिलकधर शास्त्री
सम्पादक 'आत्म-रश्मि'

क्या कहां है ?

मङ्गलाचरण : ५
एक बात : ७
दो बात : ५९
तीन बात : ८५
चार बात : १०९
पांच बात : १३९
छः बात : १४७
सात बात : १५३
आठ बात : १५९
नौ बात : १६३
दस बात : १६७
विविध दोहे : १७१
चौबीसी : १७३
महान माला : १७७
पुण्यपर्व पच्चीसी : १९१
पर्युषण पच्चीसी : १९५
विवाह बावनी : १९९
वचन बहत्तरी : २०७
गुरु : २१८
जैनमुनि : २२१
मुनि-महिमा : २२३
मानव : २२५
नारिया : २२९
सन्नारिया : २३१
समय : २३५

चन्दन दोहावली

जीवन की
मार्मिक अनुभूतियों का
सुन्दर संग्रह

श्री हंसराज कमलकिशोर जी कांसल

(तपे वाले)

बरनाला (पंजाब)

मंगलाचरण

समर्पण

महावीर के संघ में, चमके चन्द्र समान ।
'धर्मदास जी' पूज्यवर, ज्ञान-ध्यान-गुण-खान ।।

शिष्य उन्हीं के पूज्यवर, 'योगराज' विद्वान ।
पूज्य 'हजारीमल्ल जी', उनके शिष्य सुजान ।।

लालचन्द जी' पूज्य थे, शिष्य उन्ही के और ।
जिनको कहना चाहिये, मुनि-मण्डल-शिर-मौर ।।

शिष्य उन्हीं के पूज्य थे, ज्ञानी 'गंगाराम' ।
जप-तप-संयम-साधना, करते थे अविराम ।।

कहते सीधा सत्य थे, बिन कुछ लाग-लपेट ।
यह 'चन्दन दोहावली'. 'चन्दन' करता भेंट ।।

चन्दन मुनि

पूज्य जीवनराम जैन पुष्प-माला का पुष्प नं०

पुस्तक
चन्दन-दोहावली
●
लेखक :
कविरत्न श्री चन्दन मुनि जी
●
सम्पादक :
श्री तिलकधर शास्त्री
सम्पादक आत्म-रश्मि
लुधियाना
●
संस्करण प्रथम
ज्येष्ठ २०२८
●
मूल्य :
दो रुपए
●
मुद्रक :
आत्म जैन प्रिंटिंग प्रेस,
३५०, इण्डस्ट्रियल एरिया-ए
लुधियाना. (पंजाब)
●
प्रकाशक :
पूज्य जीवनराम जैन
पुस्तक-प्रकाशक-समिति,
गीदड़बाहा मण्डी, (पंजाब)

❋ मंगलाचरण ❋

परम पुरुष चैतन्यमय, अजर अमर अविकार।
चरणन 'चन्दन' कर रहा, वन्दन बारम्बार॥

'चन्दन' चिन्ता, शोक, भय, दुःख का नही निशान।
लीन स्वकीयानन्द में, जयतु सिद्ध भगवान॥

जन्म-मरण के चक्र की, जो सीमा से पार।
'चन्दन' जो भी हैं वहां, करें नमन स्वीकार॥

जिनकी सेवा से सदा, हो 'चन्दन' कल्याण।
निश-दिन वे मन में बसें, वीतराग भगवान॥

एक बात

१

एक बात

ऊंचा उठने का अगर, है सच्चा चित-चाव ।
'चन्दन' सतत बनाइये, उन्नत-सरल स्वभाव ।।

'चन्दन' जो गुणवान हो, उच्च चरित्र महान ।
निर्धन हो, बदरूप हो, बनता विश्व-प्रधान ।।

पीड़ित-जन की जो करे, सेवा हो निस्वार्थ ।
'चन्दन' यश पाता वही, साध सके परमार्थ ।।

किसी धर्म को भी भले, आप लीजिये मान ।
बिना चरित्र 'चन्दन' कभी, होगा नहि कल्याण ।।

कष्ट, असुविधा हानि भय, पीड़ा जिससे होय ।
अय 'चन्दन' 'हिंसा' उसे, कहता है हर कोय ।।

कान खोल सुन लीजिये, कहता 'चन्दन' साफ़ ।
रिश्वत लेना पाप है, देना भी है पाप ।।

सदा महान विचार जो, रखता है इन्सान।
वह कुछकर जाता यहां, 'चन्दन' कृत्य महान ॥

'वीर' न जो करता फिरे, औरों का संहार।
वीर वही 'चन्दन' सही, जो ले मन को मार ॥

जिसके जीवन में नहीं, सुख-दाता सन्तोष।
'चन्दन' उस इनसान पै, लाख-लाख अफ़सोस ॥

'चन्दन' क्या है लेख में, पहले लीजे देख।
हस्ताक्षर नहिं कीजिये, बिना पढ़े ही लेख ॥

करता है व्यवहार क्या, लघु लोगों के साथ।
सदा बड़प्पन परखिये, 'चन्दन' छोटी बात ॥

जिसमें अच्छा एक भी, बने न सुन्दर काम।
'चन्दन' वह दिन समझिए, निष्फल हुआ तमाम ॥

वैर भूल जो आ गया, वैरी घर दरम्यान।
'चन्दन' उस नर का कभी, करो न तुम अपमान ॥

बड़े खड़े हों पास जो, तब यदि बैठें आप।
'चन्दन' शिष्टाचार के, है यह सख्त खिलाफ़ ॥

'चन्दन' कितना हो भले, उनका यों नुकसान ।
'आज नहीं कल' है यही, आलसियों का गान ॥

आत्म-तत्त्व का है नहीं, 'चन्दन' जिसको ज्ञान ।
वह नर हो विद्वान भी, कहलाता अज्ञान ॥

सच्चे गुरु के चरण से, जिसे न 'चन्दन' प्यार ।
ऐसे मूढ कुशिष्य को, कौन उतारे पार ?

सच्चे गुरु पर जो हुआ, विनयवन्त बलिहार ।
यहां-वहां उस का रहे, 'चन्दन' जय-जयकार ॥

कैसा गुरु जो शिष्य की, जेबें करदे साफ़ ।
सही वही गुरुदेव जो, करदे दिल निष्पाप ॥

जो चाहो 'चन्दन' मिले, मुक्तिधाम सुख-धाम ।
सभी इन्द्रियाँ जीत कर, जीतो वैरी काम ॥

मन समेत सब इन्द्रियाँ, जो लेता है जीत ।
स्वयं, स्वयं का है वही, सच्चा 'चन्दन' मीत ॥

इन्द्रिय, मन को जो नहीं, जीत सका इनसान ।
वैरी अपना आप है, वह 'चन्दन' नादान ॥

इस कपटी संसार की, किए बिना परवाह ।
'चन्दन' चलते जाइये, निश-दिन सीधी राह ।।

दुख - दाता संसार में, जितने भी हैं काम ।
'चन्दन' उनमें प्रथम है, 'लोभ' पाप का धाम ।।

वायु रहित घर में जले, 'चन्दन' दीप समान ।
निश्चल मन जिसका सदा, उसको योगी जान ।।

तज अपयश,वश मन नहीं, कर सकते जो लोग ।
ऐसे नर 'चन्दन' कभी, साध न सकते योग ।।

मानव ! तू इस जन्म में, जो चाहे कल्याण ।
ज्ञान-ध्यान से स्वयं की, कर 'चन्दन' पहचान ।।

सज्जन 'चन्दन-से' कहे, सद्‌गुण के भण्डार ।
करे सुगन्धित काटता, जो भी उसे कुठार ।।

वैर, वैर से नहि मिटे, वैर प्रेम से जाय ।
भरे रुधिर से वसन को, जल ही शुद्ध बनाय ।।

कितना ही हो आपका, अय 'चन्दन' विश्वास ।
किसी अकेली नार के, कभी न बैठो पास ।।

बीस वर्ष की जानिये, अय 'चन्दन' हर एक ।
जितनी रेख ललाट पर; उतना जीवन देख ॥

काले सरल सतेज हों, सिर के बिरले बाल ।
नारी-नर हो वह सुखी, कहता 'चन्दन लाल' ॥

सख्त, विकट, मोटे, फटे, जिसके सिर के बाल ।
चोर, चुगल, द्वेषी, दुखी, वह नर 'चन्दनलाल' ॥

पण्डित नहि धर्मात्मा, बेटा वह बेसूद ।
'चन्दन' जैसे व्यर्थ गौ, जो नहि देती दूध ॥

यश, विद्या, गुणयुक्त जो, जीवन जीवन जान ।
यों तो रखता काग भी, 'चन्दन' प्यारे प्रान ॥

डूब रहे का जो बने, अय 'चन्दन' आधार ।
नदी-तीर के घास का—भी है जीवन सार ॥

वृद्धि आयु आनन्द सुख, जो भी चाहे खास ।
वाचस्पति का भी करे, नहिं 'चन्दन' विश्वास ॥

'चन्दन' होता सफल जो, बौद्धिक बल से काम ।
नहि कर सकते है उसे, अस्त्र-शस्त्र, बल, दाम ॥

थोड़ा धन भी विज्ञ न, कभी दिखाए खोल।
ऋषियों के भी देखकर, जाते है मन डोल॥

पशुओं, पुरुषों, प्राणियों, का है जो आधार।
पेड़ सार 'चन्दन' वही, बाकी तो भू-भार॥

जितना सहता कष्ट है, धन खातिर इनसान।
सहे ज़रा भी धर्म-हित, हो जाए कल्याण॥

फूल खिला उद्यान में, लिये रूप-अभिमान।
'चन्दन' जाने मूढ़ न, दो दिन का महमान॥

नीच नरन को जानिये, जैसे विषधर सर्प।
'चन्दन झुकता है नहीं, उनके दिल का दर्प॥

'चन्दन' आशा-छोर का, जो जन करता त्याग।
सुप्त भाग्य भी एक दिन, उसका जाता जाग॥

हो हर्षित पर हानि लख, उल्टी दुर्जन - चाल।
ओला खेती गाल गल– जाता 'चन्दनलाल'॥

'चन्दन' हो जो पास में; मानवता हर तौर।
मानव-जीवन-सा नहीं, जीवन जग में और॥

छोटा जो खुद को गिने, 'चन्दन' वही महान।
ओछा अपने आपको, समझे शैल समान ॥

'चन्दन' भले असफलता, होवे शत-शत बार।
पुनः-पुन कोशिश करो, मत बैठो मन मार ॥

निर्मल मन हो आपका, चाहे बर्फ़ समान।
'चन्दन' निन्दा से कठिन, बचना जग में जान ॥

कौन जगत में है हुआ, सब से श्रेष्ठ महान ?
एक नहीं 'चन्दन' हुए, अनगिनती इन्सान ॥

बड़े-बड़े भी मात हों, जिससे सब नर-नार।
'चन्दन' है वह श्रेष्ठ गुण, सब से सद्-व्यवहार ॥

जो चाहे भगवान का, दर्शन तू अनमोल।
तो 'चन्दन' तू शीघ्र ही, मन की घुंडी खोल ॥

देख-देख 'चन्दन' हुआ, मन ही मन हैरान।
ज्यों-ज्यों मानव वृद्ध हो, त्यों-त्यों लोभ जवान ॥

बाहर बन्दे ! ढूंढता, बन कर क्या नादान ?
अन्तर आंखें खोल लख, है भीतर भगवान ॥

पुनर्जन्म जो जीव का, करता है स्वीकार।
'आत्मोपासक' है वही, 'चन्दन' कहे पुकार॥

दौलत से इज्ज़त बड़ी, 'चन्दन' जग दरम्यान।
परम मर्म इसका मगर, कब जाने नादान॥

'हिंसा' जिसको कह रहे, सारे आगमकार।
'चन्दन' बन्धन है यही; यही नरक का द्वार।

मोह-ग्रस्त साधक रहे, न इस न उस पार।
दुर्गति-दाता मोह को, 'चन्दन' शीघ्र निवार॥

बांट सके जो और का, किसकी कहो मजाल।
अपना-अपना है सभी, सुख-दुख 'चन्दन लाल'॥

रहता है दिन-रात जो, काम-भोग आसक्त।
बन सकता है वह नहीं, 'चन्दन' प्रभु का भक्त॥

बाल जीव के संग से, जो है रहते दूर।
'चन्दन' पाते सुख वही, नर-नारी भरपूर॥

इच्छा पूरी कर गया, कोई भी क्या वीर?
'चन्दन' चलनी में भला, कभी भरा है नीर?

जो कोई 'चन्दन' यहाँ, करे असत्य प्रचार ।
बार - बार जन्मे-मरे, नहिं पहुंचे भव-पार ॥

अन्तर तन का जानिये, अन्य न अन्तर जान ।
कीड़ी, कुंजर का कहा, 'चन्दन', 'जीव' समान ॥

जितने भी संसार में, है 'चन्दन' नर-नार ।
नही एक-से देखलो, सबके विविध विचार ॥

'चन्दन' पुरुष समर्थ जो, तजता विषय-विकार ।
महा निर्जरा वह करे, पाए अविचल-द्वार ॥

शब्द पड़ें नहिं कान में, ऐसा कैसे होय ।
राग-द्वेष उन पर मगर, करे न 'चन्दन' कोय ॥

नजर पड़े नहि रूप पर, ऐसा कैसे होय ।
राग-द्वेष उस पर मगर, करे न 'चन्दन' कोय ॥

गन्ध पड़े नहि नाक में, ऐसा कैसे होय ।
राग-द्वेष उस पर मगर, करे न 'चन्दन' कोय ॥

रस रसना पर नहि पड़े, ऐसा कैसे होय ।
राग-द्वेष उस पर मगर, करे न 'चन्दन' कोय ॥

पुण्यवान, गुणवान की, यह 'चन्दन' पहचान।
विनयवान बनता चले, ज्यों-ज्यों पाता ज्ञान॥

मनों बिगाड़े दूध ज्यों, एक बून्द भी ज़हर।
'चन्दन' छोटा झूठ भी, त्यों ढाता है क़हर॥

जो कोई नर भूल भी, कर्म करेगा नीच।
चुभता 'चन्दन' वह रहे, जीवन-भर उर बीच॥

पृष्ठ-मांस भक्षण-सदृश, चुग़ली 'चन्दन' जान।
जो नर इससे बच सके, वह ऋषि-तुल्य महान॥

झड़ जाते ज्यों पात सब, खड़िया-से हो पीत।
नर-जीवन की भी वही, है 'चन्दन' यह रीत॥

महा उदधि को तैर क्यों, थका किनारे आन।
'चन्दन' परले पार का, कर जल्दी सामान॥

'चन्दन' कुन्दन बदन क्या, देख-देख गर्वाय।
देख जरा के रूप को, रूप हवा हो जाय॥

जिनवाणी का सार है, 'चन्दन' सद्-आचार।
इसका ही आधार ले, कर भव-सागर पार॥

जल्दी या कुछ देर से, हैं फल देते पाप।
निष्फल जाते वे नही, कहता 'चन्दन' साफ़ ॥

'चन्दन' गुण बिन सन्त नहि, भले मांग कर खाय।
पीतल, पीतल ही रहे, चाहे स्वर्ण मढ़ाय ॥

सोए को क्या है पता, लगी भवन में आग।
'चन्दन' सच्चा बन्धु वह, जो झट कहदे जाग ॥

शान्ति मलिन मन को नहीं, शास्त्र पठन से मीत !
मैले कपड़े पर कहां, चढ़ता रंग पुनीत ॥

कभी न सद्गुण ठहरते, विनय हीन के पास ॥
'चन्दन' फूटे कलश में, क्या जल-स्थिति की आस ?

नहीं किसी का, स्वयं का, मानो सभी क़सूर।
'चन्दन' सदा उद्दण्ड से, सब ही रहते दूर ॥

ढूंढ-ढूंढ कर और को, गया स्वय को भूल।
ढूंढ स्वयं को जो मिटे, 'चन्दन' कष्ट समूल ॥

'चन्दन' दिया अपात्र को, ज्ञान बहुत दे कष्ट।
कच्चे घट का जल करे, घट को ही ज्यों नष्ट ॥

जल्दी - जल्दी आदमी, होता नहिं बीमार।
गुणकारी है बहुत ही, 'चन्दन' अल्पाहार॥

जो भी करना कीजिये, भली तरह से काम।
बुरी तरह से काम का, कभी न लीजे नाम॥

छोड़ सु-संग, कुसंग जो, मूढ़ सदा अपनाय।
कृष्ण पक्ष के चांद सा, 'चन्दन' घटता जाय॥

'चन्दन' सज्जन गुण कभी, कहें न अपने आप।
करे प्रकट आचरण से, उनका पुण्य - प्रताप॥

धन के ही क्यों ध्यान में, घड़ी-घड़ी लग जाय।
धन से अय 'चन्दन' उमर, बड़ी न कभी कहाय॥

वर्तमान जिस जीव ने, 'चन्दन' लिया सुधार।
भूत-भविष्य उसके स्वयं, सुधरें सभी प्रकार॥

देत दोष निर्दोष को, जो 'चन्दन' नादान।
उसी दोष से एक दिन, पाता वह अपमान॥

अय 'चन्दन' अपराध को, करले जो स्वीकार।
उसे क्षमा न दे उसे, लाख-लाख धिक्कार॥

वस्त्र बिगाड़ें रंग से, राख गुलाल उछाल।
कहें न 'हो-ली' खाक है, 'होली' 'चन्दनलाल' ।।

'चन्दन' चाहें वसन सब, चमकीले पुरजोर।
खबर मगर क्या आपको, नजर करे कमजोर ।।

लैटर खुलने के समय, कभी न जाओ पास।
अय 'चन्दन' कितने मरे, तज जीवन की आस ।।

नही वेदना भूख से, बढ़ कर कोई अन्य।
भूख जिन्होंने जीतली, 'चन्दन' जन वे धन्य !

स्कूटर पर 'चन्दन' बहुत, मुश्किल है कण्ट्रोल।
लेकर मुफ्त जहेज में, लो मत संकट मोल ।।

गोप सके न गुह्य न, मत्सर—हरण समर्थ।
'चन्दन' धर्म—विहीन नर, श्वान-पुच्छ सम व्यर्थ ।।

सार पठन का है यही, करो समझ सब काम।
'चन्दन' पढ़ना व्यर्थ ही, बनकर 'तोताराम' ।।

नही क्रिया में उतरता, जो है कोरा ज्ञान।
तीन काल में भी करे, 'चन्दन' नहि कल्याण ।।

हो ऐश्वर्यवान या, गुणी, बली, विद्वान।
पर, चरित्र से हीन जो, कौड़ी का इनसान॥

आत्म-बोध जिसको हुआ, करे कभी नहिं पाप।
'चन्दन' होगा अन्यथा, भारी पश्चाताप॥

पाप क्रोध है, काम है, पाप कपट है क्लेश।
'चन्दन' भारी पाप है, श्रेष्ठ जनों से द्वेष॥

भला अकेले का सफ़र, अय 'चन्दन' हर ढंग।
मूर्ख मनुज का पर कभी, भला न होता संग॥

'चन्दन' बार हज़ार भी, है कहना बेकार।
प्रामाणिकता का पता, देता है व्यवहार॥

धर्म-कर्म को भूल जो, कोई करता पाप।
'चन्दन' दोनों लोक में, पाय शोक, सन्ताप॥

भूख, जरा. इच्छा यही, तीन प्रथम थे रोग।
जब से पशु-वध है बढ़ा, 'चन्दन' रोगी लोग॥

करे और को किस तरह, पापी जन निष्पाप।
तारे कैसे अन्य को, डूब रहा जो आप।

काम करें जो लोग सब, 'चन्दन' सोच-विचार।
उनका ही संसार में, होता यश विस्तार॥

शोभे लालों से लदा– ऐसा नही नृपाल।
जैसे शोभें शील से, मानव 'चन्दन लाल'॥

बने बाल-सा सरल जो, तज विद्या का मान।
'चन्दन' ऐसा पुरुष ही, 'आत्मज्ञान की खान॥

बेटा ऐसा चाहिये, जिसको कहै जहान।
'चन्दन' 'दादा-बाप से, है आगे' गुणवान॥

कर्म करे जो शुभ सदा, रहे अशुभ से दूर।
'चन्दन' सद्गति-स्वर्गगति, उसको मिले जरूर॥

'चन्दन' चले न सग धन, मात-पिता, सुत, भ्रात।
धर्म एक सच्चा सुहृद, अन्त निभाता साथ॥

धर्म रहे जिस पक्ष में, अन्त उसी की जीत।
'चन्दन' काल अनादि की, है यह पक्की रीत॥

इज्ज़त से बढ़कर नहीं, दौलत कोई अन्य।
इज्ज़त वाला आदमी, अय 'चन्दन' है धन्य॥

कोशिश कितनी कीजिये, चाहे 'चन्दन लाल' ।
पता न धीरज का लगे, पर बिन आपद्-काल ।।

जो चाहो 'चन्दन' बने, शान्ति-धाम संसार ।
विश्व-प्रेम में पलटिये, जन्म-देश का प्यार ।।

कितने ऊंचे वश का, हो कोई नर-नार ।
सदाचार बिन पा सके, नहि 'चन्दन' सत्कार ।।

'चन्दन' सब ज्ञानी गुणी, कहते हैं यह सत्त ।
'हिसा' है वह जीव-वध, जिसमें योग-प्रमत्त ।।

यथातथ्य से उलट जब, तन, मन, वच बन जाय ।
अय 'चन्दन' सच जानिये, 'झूठ' वही कहलाय ।।

तोल-माप को कम करे, करे मिलावट आम ।
बिन आज्ञा हर चीज़ ले, 'चोरी उसका नाम ।।

दुराचार से प्यार हो, सदाचार में ढील ।
दुर्गति-दुख-दाता उसे, 'चन्दन' कहें 'कुशील' ।।

'चन्दन' ममता भाव को, जो भी चीज़ बढ़ाय ।
चाहे जड़ हो, जीव हो, 'परिग्रह' वह कहलाय ।।

हों, न हों कहता फिरे, दोष पीठ पश्चात्।
'चन्दन' 'चुग़ली' पाप है, विश्व बीच विख्यात ॥

चाहे निन्दे सामने, चाहे निन्दे बाद।
पाप उसी को है कहा, 'चन्दन' 'परपरिवाद' ॥

भली चीज पा हर्ष हो, शोक बुरी को पाय।
अय 'चन्दन' वह पाप ही, 'रति-अरति' कहलाय ॥

'चन्दन' माया युक्त हो, कहना झूठी बात।
दुखदायक 'मायामृषा', पाप वही विख्यात ॥

'चन्दन' जिससे मुक्ति औ - होता नहिं कैवल्य।
श्रद्धा का वैपरीत्य वह, 'मिथ्यादर्शनशल्य' ॥

आए नगे ही यहां, लाए नहिं कुछ साथ।
'चन्दन' चलते वक्त भी, खाली होंगे हाथ ॥

'चन्दन' जन धर्मान्ध जो, करे न धर्म लगार।
मगर धर्म के नाम पर, मरने को तैयार ॥

'चन्दन' नर नादान को, कहो कौन समझाय।
कर गलती से ग़लतियां, फिर पीछे पछताय ॥

मद, माया में रमण कर, मन! क्यों करता पाप।
अगर रमे भगवान में, मिटें सकल सन्ताप॥

ज़रा-ज़रा सी बात पर, लड़ मरते नादान।
पर, समता से काम ले, 'चन्दन' चतुर-सुजान॥

किसी जीव का जीव सुख, अगर करेगा नष्ट।
'चन्दन' कहता स्पष्ट है, सदा सहेगा कष्ट॥

औरों के दुख-दर्द को, अपना समझे दर्द।
चले नीति पर, न्याय पर, 'चन्दन' सच्चा मर्द॥

'चन्दन' गरिमा गुणन की, और सभी छल-छन्द।
पूनम-चन्दा छोड सब, देखें द्वितिया-चन्द॥

रहा फूल ! क्या फूल तू, होना इक दिन धूल।
'चन्दन' काल अनादिका, पक्का अटल असूल॥

पुण्य, पाप, परलोक औ– जो माने भगवान।
'आस्तिक'जन सच्चा उसे, अय 'चन्दन' तू जान॥

आस्तिक जन बन निर्दयी, करता है यदि पाप।
'चन्दन' वह जन तो सदा, है नास्तिक का बाप॥

१९. वैद्य तेजपाल जैन, भाईरूपा (भटिण्डा)।
२०. श्री हरचरण दास जैन, ग्रहमदगढ मण्डी, (पजाव)।
२१. श्री जयगोपाल जैन, जगरावां।
२२. श्री जगन्नाथ जैन, जगरावां।
२३. श्री ज्ञानचन्द जैन, जगरावा।
(स्व० श्री लछमनदाल जैन की पुण्य स्मृति में
उनके ऊपर लिखित तीनो पुत्रो की ग्रोर से)।
२४. श्रीमती निहालो देवी, धर्मपत्नी श्री हेमराज जी कांसल
वरनाला (पंजाव)।
२५. श्रीमती दुर्गा देवी, धर्मपत्नी श्री देसराज जी मित्तल
वरनाला (पंजाव)।
२६. श्रीमती विद्यादेवी, धर्मपत्नी श्री देवराज जी मित्तल
वरनाला (पजाव)।
२७ श्रीमती परमेश्वरी देवी, धर्मपत्नी श्री वंसीलाल जी गोयल,
वरनाला (पंजाव।)
२८ श्रीमती तारावन्ती, धर्मपत्नी श्री ग्रमरनाथ जी जैन,
रायकोट (पंजाव)।
२९. श्रीमती ग्राशारानी जैन, मेरठ।
३०. वैरागिन कुमारी शिमला जैन वी० ए० ग्रानर्ज प्रभाकर
ग्रवोहर मण्डी। ग्रपनी दीक्षा के उपलक्ष मे।

उक्त सम्माननीय दानियो के सराहनीय सहयोग से ही यह पुस्तक स्वल्प मूल्य मे प्रिय पाठको के कर-कमलो तक पहुंची है। ग्रत. समिति की ग्रोर से सभी का हार्दिक धन्यवाद किया जाता है। ग्राशा है भविष्य में भी सभी से इसी प्रकार स्तुत्य सहयोग प्राप्त होता रहेगा।

चरणदास जैन
मन्त्री

जो चाहो आनन्द के, खिलें हमेशा फूल।
आवश्यकता से अधिक, करो न सग्रह भूल ॥

एक तरह है जगत यह, 'चन्दन' साफ़ सलेट।
स्वार्थ साधा नाम लिख, लिखा दिया फिर मेट ॥

चाहे ठण्डक माघ की, चाहे गर्मी जेठ।
स्वासों की सरिता बहे, जीवन के पुल हेठ ॥

गुणग्राही गुण का नही, केवल करे बखान।
'चन्दन' अपनाकर उसे, बने स्वयं गुणवान ॥

उस जैसा दुखिया नही, 'चन्दन' जग दरम्यान।
करता तो कुछ भी नही, बड़े-बड़े अरमान ॥

पवन कदाचित पकड़ले, नभ में करदे छेद।
क्षण भी जीवन न बढे, 'चन्दन' कहे स-खेद ॥

जल-भंवरों को गाठ भी, कोई कभी लगाय।
संभव लेकिन यह नही, एक श्वास बढ़ जाय ॥

मेटेगे जो अन्य को, मिट जायेगे आप।
जाता निष्फल है नहीं, 'चन्दन' कोई पाप ॥

करें घृणा दुर्गुणन से, दुर्गुणियों से नाहि ।
एक तरह का जीव है, 'चन्दन' सब के मांहि ॥

यह स्वभाव है मनुज का, करता 'चन्दन' भूल ।
उत्तम जन ही पर उसे, करता सदा क़बूल ॥

धीरज से बढ़कर नहीं, दौलत जग में और ।
'चन्दन' यह रक्षा करे, जन को ठौर-कुठौर ॥

कर सकती जो कार्य है, 'चन्दन' मधु मुस्कान ।
कर सकती हरगिज़ नहीं, उसको तेज कृपान ॥

'चन्दन' गिरना क्या बुरा, गिर कर जो उठ जाय ।
गिरे और नहिं फिर उठे, गिरना निन्द्य कहाय ॥

'चन्दन' करता कौन न, बहुतों से हो भूल ।
पुनः-पुनः पर भूल वह, करता नामाकूल ॥

गीदड़ सम सौ साल भी, जीने का क्या अर्थ ?
उत्तम जीना एक दिन, बन कर सिंह समर्थ ॥

वही आत्मा शुद्ध है, जिसका है मन शुद्ध ।
'चन्दन' मगर अशुद्ध वह, उपजी जिसे कु-बुद्ध ॥

लालच वश जो ले रहे, प्रिय पत्नी के प्राण।
उन से बढ़ 'चन्दन' कहो, कौन और शैतान ?

'चन्दन' चमकाना अगर, अखिल विश्व मे नाम।
करे कभी नहि भूल कर, कोई घटिया काम ॥

धर्म-धर्म रटते रहें, कितना चाहे आप।
धर्म किये बिन पर कभी, कटे न 'चन्दन' पाप ॥

जिससे हो नहि भूल भी, आपस में मुठभेड़।
पंचम स्वर वह प्रेम का, अय 'चन्दन' दो छेड़ ॥

जीवन स्वप्न समान है, क्षण का नहि विश्वास।
बचते रहिये पाप से, अय 'चन्दन' हर श्वास ॥

वन, पर्वत, नदियां, नगर, 'चन्दन' ढूंढे खूब।
ढूंढा अन्तर नहि जहाँ, है बैठा महबूब ॥

'चन्दन' जिस रस-पान से, बने भक्त भगवान।
बड़े प्रेम से—प्यार से, करें भक्ति-रस-पान ॥

कड़छी चिकनी हो न ज्यों, घृत मे रह सौ साल।
करें अमन्न न बहुत त्यों, श्रोता 'चन्दन लाल' ॥

जीवन उसका सफल है, जिसे धर्म से प्यार।
अय 'चन्दन' है धर्म बिन, मानव भूतल-भार ॥

बहुत दुःख, सुख अल्पतर, करो भूल नहि प्यार।
छलिये की छाया सदृश, 'चन्दन' विषय-विकार ॥

धनिकों के संकेत पर, नाच रहा संसार।
कौन ग़रीबों की सुने, 'चन्दन' चीख-पुकार ॥

विद्या-धन-संयुक्त भी, दीजे दुर्जन त्याग।
मणियों से भी युक्त क्या, नहीं भयंकर नाग?

घिस जाती है एक दिन, लोहे की भी मेख।
बिन भोगे पर नहिं मिटै, 'चन्दन' क़िस्मत-रेख ॥

'चन्दन' विरला ही बचा, सेवक सब संसार।
रिश्वतदेवो! आपकी, महिमा अपरम्पार ॥

कभी यहां गोपाल थे, घर-घर माखन-दूध।
अब तो उनकी याद भी, अय 'चन्दन' बेसूद ॥

भारत में गोपाल कम, अब है 'चन्दन लाल'।
ज्यादा सूअरपाल या— कुत्ते-बिल्ली पाल ॥

करता तो हर एक है, सद्गुण की तारीफ़ ।
बनता पर वह आप नहिं, 'चन्दन' जरा शरीफ ।।

बूंद-बूंद से ज्यों बने, 'चन्दन' नदी महान ।
अक्षर-अक्षर के पढ़े, हो मानव विद्वान ।।

सरलरूप भगवान का, 'चन्दन' कोमल फूल ।
पांच वर्ष तक ताड़िये, बच्चों को नहि भूल ।।

सुमन-सुगन्धित-युत विटप, इक भी वन महकाय ।
अच्छा बेटा वंश त्यों, अय 'चन्दन' चमकाय ।।

रजनी जैसे चन्द्र से, शोभा भारी पाय ।
'चन्दन' एक सपूत से, सारा वंश सुहाय ।।

इक भी जलते पेड़ से, ज्यों जंगल जल जाय ।
'चन्दन' एक कपूत त्यों, सारा वंश मिटाय ।।

'चन्दन' आंखें खोलकर, देखो दुनिया आज ।
अधिक धनी जो पुरुष हैं, अधिक वही मोहताज ।।

'चन्दन' जो भी जगत में, बने शान्ति से काम ।
उस-सा कोई दूसरा, नही काम अभिराम ।।

जीव दया से नहि बड़ा, धर्म-पुण्य रे जीव !
जीव दया से ही मिले, 'चन्दन' प्यारा पीव ॥

जैसे बट के बीज में, बट का पेड़ विशाल ।
ऐसे ही हर जीव में, ईश्वर 'चन्दन लाल' ॥

दावानल जल से बुझे, अगर कभी लग जाय ।
बुझे न 'चन्दन' मन-अनल, जल सागर का पाय ॥

'चन्दन' ज्वाला जठर की, दो रोटी से जाय ।
भरे न भूखा मन मगर, लाखों मन भी खाय ॥

'चन्दन' इस संसार में, गए अनेक ठगाय ।
लेकिन ज्ञानी जन गए, अपना आप बचाय ॥

जिसके गुण जाने न जो, निंदत है दिन-रात ।
गजमुक्ता तज भीलनी, लेती गुंजा-पांत ॥

आवश्यकता से अधिक, लेना समझें दोष ।
'चन्दन' उसका नाम है, सुख-सागर 'सन्तोष' ॥

'चन्दन' देखो आ गया, कैसा समय खराब ।
गए गगन में कूप से, मंहगाई के भाव ॥

जो चाहो कि आपकी, करें बड़ाई लोग।
मुख से अपने आपकी, नहिं बड़ाई योग ॥

कमल कहां दिनकर कहां, जलधर कहा मयूर ?
जो जिसके मन में बसे, कैसा 'चन्दन' दूर ?

अपने पर शासन नहीं, रखता जो इनसान।
दुनिया में नहि दूसरा, उस-सा फिर नादान ॥

करे नर्क के वास्ते, जितना श्रम इनसान।
आधा भी शुभ में करे, पाए स्वर्ग-विमान ॥

सुधा उगलता जो रहे, करके भी विषपान।
चन्दन उस-सा दूसरा, मानव कहां महान ?

जाए 'चन्दन' धन भले, जाए नहि ईमान।
इसमें ही अय आदमी ! तेरी सच्ची शान ॥

अगर आपको चाहिये, स्वर्ग धाम औ' नाम।
नेकी बिन नहिं कीजिये, कभी दूसरा काम ॥

नक़ली हैं घी-दूध सब, नक़ली मोहनभोग।
नक़ली चली दवाइयां, लेकिन असली रोग !

दो बात

२

दो बात

‘चन्दन’ जप, तप, त्याग से, कर कर्मों का अन्त ।
मुक्त अनन्ते हो गए, होंगे और अनन्त ॥

‘चन्दन’ जिनसे नित्य ही, होते पावन कर्म ।
वीतराग-सा ‘देव’ नहि, दया धर्म-सा ‘धर्म’ ॥

शान्ति-वचन तो एक भी, ‘चन्दन’ समझे सार ।
व्यर्थ-वचन बेकार है, हों भी अगर हज़ार ॥

धर्म-दान-सा दान नहि, तीन लोक दरम्यान ।
सर्व रसों में धर्म-रस, ‘चन्दन’ परम प्रधान ॥

क्षुद्र नदी ‘चन्दन’ चले, करती शोर प्रलाप ।
बहती रहती पर सदा, बडी नदी चुपचाप ॥

‘चन्दन’ कायिक ‘मानसिक’, यों सुख के दो भेद ।
मुख्य मानसिक सुख मगर, हरता सब दुख-खेद ॥

धर्मीजन को धर्म है, करना ज्यों आसान ॥
पामर को 'चन्दन' वही, मुश्किल मगर महान ।

'चन्दन' चंचल हो नही, अनासक्त का चित्त ।
लेकिन जन 'आसक्त' का, मन मर्कट-सा नित्त ॥

अय 'चन्दन' नर धर्म-युत, सीधा स्वर्ग सिधाय ।
पर पापी जा नरक में, रोता है दुख पाय ॥

माने धर्म अधर्म को, औ' अधर्म को धर्म ।
ये 'चन्दन' ससार में, दो है मूर्ख-परम ॥

पूज्य जनों की जो करें, निन्दा या परिवाद ।
श्वान, गधे की वे बनें, अय 'चन्दन' औलाद ॥

धर्म किया है या नही, इसने 'चन्दन लाल' ।
रोग, मौत किंचित् कभी, करते नही खयाल ॥

अय 'चन्दन' आगम सभी, गरल बिना स्वाध्याय ।
पुनः-पुनः स्वाध्याय से, सुधा वही बन जाय ॥

'चन्दन' 'वक्ता' श्रेष्ठ वह, जिसकी मधुर जबान ।
'श्रोता' उत्तम वह, करे–जो गुण की पहचान ॥

अमरकोष (श्री मुनि अमरसिंह)
चाणक्यनीति-दर्पण (महर्षि चाणक्य)
आत्म-विकास (श्री आनन्दकुमार)
अमर-वाणी (हिन्दी पाकेट बुक्स प्रा० लि० दिल्ली)
श्री अमर-भारती (आगरा)
आत्म-रश्मि (लुधियाना)
जिनवाणी (मासिक)
ओसवाल हितैषी (मासिक)
श्रमण "
जैन प्रकाश (साप्ताहिक)
तरुण जैन "

हिन्दुस्तान, पंजाब केसरी, वीरप्रताप, हिन्दी मिलाप, नवभारत-टाइम्स आदि के साप्ताहिक और विशेष संस्करण आदि।

इनके लेखक विज्ञ जो, और प्रकाशक सुज्ञ।
सबका ही है स्नेह से, 'चन्दन' बहुत कृतज्ञ॥

मीठा मिश्री से अधिक, 'स्वार्थ' विश्व दरम्यान ।
कोमल माखन से अधिक, 'चन्दन' 'मधुर ज़बान' ॥

'आत्म-संयम' और फिर—'चन्दन' 'आत्म-ज्ञान' ।
जो हों दोनों पास में, कठिन कहाँ कल्याण ?

अल्प जियें या हम अधिक, तजो बहस बेकार ।
ठीक जिये, बे-ठीक या, 'चन्दन' करो विचार ॥

जो चाहो सुख-सम्पदा, 'चन्दन' आप अखूट ।
सत्य सदा कहना मधुर, 'मधुर न कहना झूठ' ॥

गुण से शोभा रूप की, सहस गुणी बढ जाय ।
कुल को 'चन्दन' चाँद-सा, सदाचार चमकाय ॥

जो चाहें 'चन्दन' खुशी, नहिं चाहें दुख-शोक ।
याद रखे हर क्षण सदा, लोक और परलोक ॥

जैसे जीना है कला, कला कही त्यो मरण ।
'चन्दन' पर कोई इसे, समझे तारण-तरण ॥

'चन्दन' थोड़े जानिये, जो हो मीत पचास ।
शत्रु अधिक पर एक भी, कदम-क़दम दे त्रास ॥

सभी जगह पर थूकता, बिन देखे नादान।
मगर किनारे थूकता, 'चन्दन' चतुर-सुजान।।

खेद सहित है एक तो, एक रहित है खेद।
है 'ससारी', 'सिद्ध' दो, जीवों के यो भेद।।

'स्थावर' 'त्रस' दो भेद सब, जग-जीवों के जान।
है चौरासी लाख ही, दोनों के दरम्यान।।

जन्म-मरण का एक दिन, हो जिससे उच्छेद।
समकित के 'चन्दन' कहें, 'द्रव्य' 'भाव' दो भेद।।

करें पार संसार से, 'चन्दन' आखिरकार।
समकित के फिर भेद दो, 'निश्चय' औ 'व्यवहार'।।

अहंकार में भूल तू, अय 'चन्दन' मत भूल।
शूल मिलेंगे शूल से, और फूल से फूल।।

भोजन दिन में जो करें, करें कभी नहिं रात।
फलियां भी और पुण्य भी, दोनों 'चन्दन' साथ।।

बचो बुराई से सदा, भजो भलाई नित्य।
कभी भलाई का छिपे, नहिं 'चन्दन' आदित्य।।

सुख-दुख 'चन्दन' नित्य नहिं, रहे याद यह बात ।
कभी उजेला दिवस का, कभी अन्धेरी रात ।।

'चन्दन' से जो पूछिये, यही बताये साफ़ ।
नेक ज़िन्दगी धर्म है, नीच ज़िन्दगी पाप ।।

आना-जाना सत्य है, इस में मीन न मेख ।
भला-बुरा 'चन्दन' अतः, निश-दिन अपना देख ।।

'चन्दन' माने 'आस्तिक', पुण्य, पाप, परलोक ।
नहीं मानता 'नास्तिक', शोक! शोक! हा शोक !

जीना उसका धन्य जो, बहुतों का आधार ।
निज हित ही जो जन जिये, है 'चन्दन' धिक्कार ।।

बनना स्वामी अन्य का, यहां बहुत आसान ।
बनना स्वामी स्वयं का, मुश्किल 'चन्दन' जान ।।

अधिक उछलते लोग लघु, उछले नही महान ।
'चन्दन' आधे छलकते– घड़े, न पूरे जान ।।

'तब तक रहे प्रसन्न मुख, 'पूज्य जनों से प्रीत
'चन्दन' जब तक नारी से, हुई न प्रीत की रीत ।।

‘चन्दन’ चाहे आज मत, मानें आप जनाब ।
अधिक सिनेमा-शौक से, आंखें, खून-ख़राब ।।

जितने भी भगवान के, हैं उपदेश महान ।
‘चन्दन’ कहने से नहीं, करने से कल्याण ।।

घटते उनके रोग हैं, खुश जो रहते लोग ।
‘चन्दन’ रहते जो दुखी, बढ़ते दिन-दिन रोग ।।

‘ज्ञान बिना की जो क्रिया, ‘क्रिया बिना जो ज्ञान ।
कर सकते ‘चन्दन’ नहीं, तीन काल कल्याण ।।

‘दुराचार से’ ‘द्वेष से’, जिनको द्वेष महान ।
पाते सद्गति, स्वर्ग गति, ‘चन्दन’ वे इनसान ।।

मानव जब जग में स्वयं, लाया क्लेश, विद्वेष ।
रोता क्यों अब आप है, ‘चन्दन’ वही विशेष ।।

मिलते ही करता सुखी, मानव देव समान ।
मिलते ही करता दुखी, दानव-सा इनसान ।।

‘करे मिलावट जो बणिक’, ‘अफ़सर रिश्वतख़ोर’ ।
‘चन्दन’ सभ्य समाज में, दोनों ही है चोर ।।

सदा सुखी 'चन्दन' रहें, पक्के प्रभु के भक्त ।
उभय लोक में हों दुखी, 'चन्दन' विषयासक्त ॥

हिंसा कारण से करें, बिन कारण कुछ लोग ।
'चन्दन' हिंसा द्विविध यह, बतलाते मुनि लोग ॥

डरे हुए को घेरते, अय 'चन्दन' भय-भूत ।
भूत भागते दूर ही, जो हो मन मज़बूत ॥

'पर-निन्दा' 'स्व स्तव' कहे, दोनों झूठ समान ।
जो इनसे बचता वही, 'चन्दन' मर्त्य महान ॥

'जिसे न डर परलोक का', 'नहीं किसी की शर्म' ।
तज सकता 'चन्दन' न वह, कभी निकम्मे कर्म ॥

सदाचार से, ज्ञान से, जो नर-नारी युक्त ।
मरण समय में भी रहें, अय 'चन्दन' भय-मुक्त ॥

वीर नहीं जो—युद्ध में, जीते लाख-हज़ार ।
वीर वही जो मन चपल, अय 'चन्दन' ले मार ॥

'सुख तो देते क्षणिक ही', 'दुख देते चिरकाल' ।
विषय-भोग संसार के, विष सम 'चन्दन लाल' ॥

सम्यग् यदि उत्साह है, 'चन्दन' सुधा-समान।
है अन्धे उत्साह में, मगर महा नुक़सान ॥

मानव आता किस तरह, यह चर्चा बेकार।
जीवित रहता किस तरह, 'चन्दन' करें विचार ॥

मर कर भी गुण से अमर, बहुत विश्व दरम्यान।
गुण बिन पर लाखों फिरें, जीवित मृतक समान ॥

न वह सच्चा त्याग है, न वह सच्चा ज्ञान।
जिस से कि उत्पन्न हो, अय 'चन्दन' अभिमान ॥

अपने पीछे, अन्य के— रहें सामने दोष।
इसीलिये संसार यह, डूब रहा अफ़सोस !!

रखें दबा कर धन अगर, रखें छुपा कर ज्ञान।
दोनों का ही लाभ क्या, कहें धनी, विद्वान ॥

नक़ल बुराई-पाप की, अय 'चन्दन' आसान।
नक़ल भलाई-धर्म की, मुश्किल मगर महान ॥

ईश-भक्ति 'चन्दन' तथा, मानवता से प्यार।
दोनों को ही है कहा, गुणियों ने इकसार ॥

पत्नी सेवा भाविनी, बेटा आज्ञाकार।
जिसके हों 'चन्दन' उसे, स्वर्ग सदा ससार॥

व्याख्याता पहले लखो, लखो बाद व्याख्यान।
दोनों ही जो ठीक हों, हो 'चन्दन' कल्याण॥

उत्तम ही आचरण है, उत्तम ही व्यवहार।
वही भक्त भगवान का, 'चन्दन' गुण-भण्डार॥

जो 'चन्दन' धर्मात्मा, बनने का चित चाव।
दुराचार पहले तजो, पीछे क्रूर स्वभाव॥

मन-वाणी से, कर्म से, सज्जन होता एक।
मन-वाणी से, कर्म से, दुर्जन मगर अनेक॥

बलशाली वह नर नहीं, जो दे सिंह पछाड़।
'चन्दन' बलशाली वही, क्रोध, काम ले मार॥

बिना विचारे मत करो, सहसा कोई काम।
निकलेगा नहिं अन्यथा, 'चन्दन' शुभ परिणाम॥

सादा जीवन और फिर, जिनके उच्च विचार।
'चन्दन' वे संसार में, है बिरले नर-नार॥

नृप-सा 'चन्दन, वह सुखी, अर्द्धचन्द्र-सम भाल ।
सकल भोग, पण्डित, गुणी, जिसका भाल-विशाल ॥

करे न गो-वध बन्द जो, करे न मद्य-निषेध ।
'चन्दन' उस सरकार पर, लाख-लाख है खेद !!

करने से अज्ञान तप, मुक्ति न हो त्रैकाल ।
वह तो सम्यग्ज्ञान से, मिलती 'चन्दनलाल' ॥

पाने को सुख स्वर्ग का, पाने को निर्वाण ।
नहिं महत्व है जाति का, 'चन्दन' कर्म प्रधान ॥

'चन्दन' सज्जन तो सदा, स्वर्ग-द्वार दिखलाय ।
लेकिन दुर्जन नरक में, प्राणी को पहुंचाय ॥

अच्छा ही आचार है, अच्छे और विचार ।
'चन्दन' वे नर-नार है, तीन लोक का सार ॥

आमदनी से खर्च कम, असल वही धनवान ।
खर्च अधिक, कम आमदन, निर्धन 'चन्दन' जान ॥

मन का स्वामी ही सदा, स्वामी-पदवी पाय ।
'चन्दन' मन का दास पर, दास पुकारा जाय ॥

वैरी आलस-सा नहीं, उद्यम-सा नहिं मीत।
जीवन की इक हार है, इक है जीवन-जीत ॥

सदाचार को सत्पुरुष, 'सतयुग' कहते आम।
'चन्दन' 'कलियुग' है मगर, दुराचार का नाम ॥

सुखिया है संसार में, जिन्हें नाम आधार।
बाक़ी 'चन्दन' है दुखी, सारा ही संसार ॥

बेटा हो या छात्र हो, अधिक दुलारे जाँय।
बिगड़ें वे हर हाल में, हरगिज सुधरे नाँय ॥

दुर्जन, अहि में है भला, अहि ही 'चन्दनलाल'।
दुर्जन तो प्रतिपल डसे, अहि पर अन्तिम काल ॥

अमर वही जो धर्म पर, मिटता है इनसान।
धर्महीन 'चन्दन' मगर, जीवित मृतक समान ॥

दूर रहा भी दूर नहि, जो जिसके मन माँहि।
निकट रहे भी दूर पर, जो जिसके मन नाहि ॥

जगत रूप इस वृक्ष के, दो फल सुधा समान।
'चन्दन' 'सज्जन-संग इक, 'दूजे मधुर ज़बान' ॥

रिश्वत देना पाप है, लेना भी है पाप ।
'चन्दन' रिश्वत छोड़िये, जो हों धर्मी आप ।।

आलस में जो कार्य है, 'चन्दन' कठिन महान ।
वही कार्य पुरुषार्थ से, बन जाता आसान ।।

'चन्दन' जीवन में अगर, होना चाहें पास ।
'प्रेम सभी से कीजिये', 'थोड़ों का विश्वास' ।।

आंधी में टीले उड़ें, उड़ें न परबत-मूल ।
दोनों से शिक्षा सरस, 'चन्दन' करें क़बूल ।।

जिन कीड़ों से खोखला, हो जाता इनसान ।
'चन्दन' उनका नाम है, 'आलस' वा 'अज्ञान' ।।

बने गुणी गुणहीन भी, गुणियों का गुण गाय ।
लघु हो जाता इन्द्र भी, 'चन्दन' स्वयं बड़ाय ।।

पूरी सभी ज़रूरतें, होनी है आसान ।
इच्छाएं पूर्ण सभी, मुश्किल मगर महान ।।

जीवन हर जग-जीव का, है 'चन्दन' इक फूल ।
खिलना, मुर्झाना सदा, जिसका अटल असूल ।।

हैं, जिनकी कवि-लेखनी ने समय-समय पर अपने रस से जन-मानस को उद्बुद्ध किया है, उसकी सुप्त धार्मिक चेतना को झकझोरा है और उसे श्रेय-मार्ग पर चलने के लिये प्रेरित किया है।

श्री चन्दन मुनि जी की प्रतिभा बहुमुखी है, वे काव्यकार हैं, कथाकार हैं, गीतिकाव्य के गायक हैं, आशुकवि हैं, परन्तु प्रस्तुत रचना "चन्दन-दोहावली" ने उनके एक नए ही उद्बुद्ध रूप को जनता के समक्ष प्रस्तुत किया है।

'चन्दन-दोहावली' दोहा छन्द मे लिखी गई रचना है। साहित्य-इतिहास के मर्मज्ञ इस निष्कर्ष पर पहुँच रहे है कि जिसको प्राचीन भाषा मे 'दूहा-वन्ध' कहा जाता था, वही आज का 'दोहा छन्द' है और यह दोहा छन्द जैन मुनियो के मस्तिष्क की ही देन है। श्री हेमचन्द्राचार्य जी ने अपने सिद्ध शब्दानुशासन मे अपने से ५-६ शती पूर्व तक के जैन मुनीश्वरो की जो रचनाएं उदाहरण रूप मे सग्रहीत की है, उनमें 'दूहा' का प्रयोग अभीष्ट रूप मे प्राप्त होता है। मुनिराज स्वयम्भू के 'पउम-चरिउ' की रामकथा-धारा मे दोहो के कमल खिले दृष्टिगोचर होते है। नाथो ने और कवीर आदि सन्तो ने अपनी अनुभूतिया दोहो मे ही व्यक्त की है। तुलसी की 'दोहावली', रहीम की 'सतसई,' विहारी की 'विहारी सतसई', वृन्द की 'वृन्द सतसई' और वियोगी हरि जी की 'वीर-सतसई' इसी परम्परा के रत्न है।

परन्तु 'चन्दन दोहावली' का स्तुत्य प्रयास पहले तो सख्या में ही सवसे आगे वढ गया है। २२६० दोहो को देखकर सोचता हूँ कि मुनिराज का मस्तिष्क है या दोहे रचने की मशीन ?

परन्तु रचना के गौरव की श्रेष्ठता का आधार उसकी छन्द-सख्या नही होती, वह तो होता है उसका अनुभूति पक्ष जिसमे वुद्धितत्त्व और रस-तत्त्व की प्रमुखता रहती है, अत हम अनुभूति-

तीन बात

३

तीन बात

'प्रतिक्रमण' 'स्वाध्याय' में, 'माला' में मत बोल ।
भक्ति कही है मौनयुत, अय 'चन्दन' अनमोल ।।

दिया वचन नहिं भंग हो, करें सत्य व्यवहार ।
मन, वच, काया तीन ही, हों 'चन्दन' इकसार ।।

मात-पिता, गुरुदेव के, दया-धर्म के और ।
वश में रहना चाहिये, अय 'चन्दन' हर तौर ।।

अय 'चन्दन' 'सौजन्य' औ– 'शील' व 'शिष्टाचार' ।
कभी कही नहि भूलते, सभ्य-शिष्ट नर-नार ।।

'चन्दन' करता क्रोध है, मन-मलीन, तन-क्षीण ।
क्षमा, मौन व विलम्ब हैं, दवा क्रोध की तीन ।।

बचपन, यौवन, तीसरी– वृद्धावस्था जान ।
रहे अडिग जो बीच में, 'चन्दन' वही महान ।।

'चन्दन' क्षमा समर्थ में, दरिद्रता में दान।
यौवन में इन्द्रिय-दमन, तीनों कठिन महान॥

प्रज्ञा-बल से, विनय से, करने से सम्मान।
'चन्दन' मिलता मान है, दुनिया के दरम्यान॥

तन से, मन से, वचन से, बने नित्य जो दोष।
'चन्दन' चिन्तन कीजिये, नित्य बैठ खामोश॥

भूत, भविष्यत, तीसरा, वर्तमान है काल।
काल अन्य नहिं जगत में, कहता 'चन्दनलाल'॥

स्व-चिन्तन औ ब्रह्मचर्य, शास्त्रों का स्वाध्याय।
'चन्दन मुनि' उपवास में, आवश्यक बतलाय॥

गरिष्ठ, अधिक, औ चटपटा, अय 'चन्दन' आहार।
पहले दिन उपवास के, देना आप बिसार॥

देव-मनौती, ख्याति औ— स्वर्गों की अभिलाष।
इनके हित नहिं कीजिए, 'चन्दन' तप-उपवास॥

गर्भवती, अति दुर्बली, जिसका छोटा बाल।
तीनों को उपवास नहि, करना 'चन्दनलाल'॥

एक प्रव्रज्या-वृद्ध हैं, एक ज्ञान से वृद्ध ।
आयु-वृद्ध हैं तीसरे, 'चन्दन' जगत-प्रसिद्ध ।।

कर, कानों से, जीभ से, जो सच्चे नर-नार ।
करते हैं 'चन्दन' सदा, निर्मल यश-विस्तार ।।

तिरछी जिनकी नज़र है, टेढ़ी जिनकी चाल ।
मुख में जिनके गालियां, सभ्य न 'चन्दनलाल' ।।

जैसा समझे आपको, जैसा समझे और ।
जैसा हो वह असल में, नर के यों त्रय तौर ।।

अय 'चन्दन' कितना करे, कोई पुनः प्रयास ।
गए कभी नहि फिर मिलें, शक्ति, शील औ श्वास ।।

कुछ तो होते जन्म से, कुछ है बनते बाद ।
'चन्दन' मगर महानता, कुछ पर दे जग लाद ।।

अच्छा अधिक विचारना, अल्प बोलना ठीक ।
लेखन सब से कम करे, है 'चन्दन' की सीख ।।

मात-पिता, गुरुदेव औ— तीजा स्वामी जान ।
तीनों के उपकार का, बदला कठिन महान ।।

अपना हर इक दोष औ, औरों का सम्मान।
रहे निरन्तर ध्यान में, अय 'चन्दन' भगवान॥

करे न निन्दा अन्य की, हंसे न दुखिया-देख।
अपनी करे सराहना, नहिं 'चन्दन' नर नेक॥

राग-द्वेष औ डाह हैं, अय 'चन्दन' दुख-खान।
तीनों के ही निकट नहिं, जाये प्रज्ञावान॥

काम-वासना और फिर, क्रोध लोभ से हीन।
'चन्दन' ऐसे शुभ पुरुष, बनते कभी न दीन॥

वाणी में तो मधुरता, आँखों में अनुराग।
मन में 'चन्दन' सरलता, 'श्रावक' वह बडभाग॥

साधू को साधू कहे, कहे धर्म को धर्म।
'चन्दन' श्रावक खोलता, नहीं पराया मर्म॥

श्रावक-जीवन की अहो! कैसी अद्भुत बात।
द्वन्द्व, अनर्थ, अन्याय का, कभी न देता साथ॥

दुराचार पर, झूठ पर, कूटनीति पर और।
'चन्दन' कर विश्वास मत, कभी किसी भी तौर॥

अय 'चन्दन' 'मानव-तनू'; दूजा 'भारत देश'।
'उत्तम कुल' में जन्म फिर, चाहें देव-सुरेश।।

'आत्म' औ 'उत्सेद' औ, तीजी कही 'प्रमाण'।
तीन तरह की 'अंगुली', अय 'चन्दन' पहचान।।

'चन्दन' एक 'अलोक' है, एक 'लोक' 'परलोक'।
जो मानें नहि 'नास्तिक, पड़ता पल्ले शोक।।

'चन्दन' 'माया-शल्य' औ, दूजा शल्य-'निदान'।
'मिथ्यादर्शन-शल्य' ये' तीनों दुख की खान।।

अय 'चन्दन' 'मन-दण्ड' इक, 'वचन-दण्ड' है दोय।
'काय-दण्ड' इन तीन से, दण्डित दुनिया होय।।

विनय, विवेक,विचार हो, सरल सत्य सयुक्त।
होना फिर है क्या कठिन, 'चन्दन' बन्धन-मुक्त।।

झूठे होते फैसले, झूठे चलते केस।
इनके कारण तीन है– लोभ, मान, विद्वेष।।

नही हुआ, जो मर गया, तीजा बेटा मूढ़।
'चन्दन' दो से अल्प दुख, तीजे से पर गूढ।।

'चन्दन' जिसके हृदय में, करता क्रोध निवास।
शील,सत्य का,विनय का, हो जाता है नाश।।

अल्प क्रोध में दस गिनो, सौ जब ज्यादा जोश।
गिनो सहस अति क्रोध में, 'चन्दन' रह ख़ामोश।।

प्रथम व्यक्ति को परखिये, देश और फिर काल।
गुप्त रहस्य प्रगटाइये, तब ही 'चन्दन लाल।।

'चन्दन' धीरज विपद में, बन्धु पड़े जब काम।
सन्त परखिये त्याग में, है यह नियम महान।।

गौतम से यों कह गए, महावीर भगवान।
शान्ति, शील, शम से बने, 'चन्दन' पुरुष महान।।

'चन्दन' मिलता भाग्य से, नहीं भाग्य का लेख।
'सूरत' और 'स्वभाव' की, मिलती कभी न रेख।।

'चुगलखोर' 'जनस्वार्थी', तथा 'विदेशी राज'।
तीन भलाई नहि करे, 'चन्दन' दे आवाज।।

कर्ज, मर्ज को, फ़र्ज को, जो जन जाते भूल।
'चन्दन' उनकी राह में, बिछते तीखे शूल।।

रोग, बुढ़ापा, मृत्यु ये, तीनों जब तक दूर ।
धर्म-कर्म कर लीजिये, अय 'चन्दन' भरपूर ।।

कोविद क्रोधी नहिं भला, अन्यायी भूपाल ।
सन्त भला नहिं लालची, हरगिज 'चन्दन लाल' ।।

मन, वच, काया का अशुभ, जिस का है व्यापार ।
है 'अज्ञानी' पुरुष वह, 'चन्दन' करें विचार ।।

शिक्षित भी हो, शूर हो, शुद्ध शील हो पास ।
'चन्दन' ऐसे पुरुष की, सारी दुनिया दास ।।

राग, द्वेष की, मोह की, महा अग्नियाँ जान ।
'चन्दन' जिनसे जल रहा, सारा अहो ! जहान ।।

'चन्दन' जाए धर्म, धन, लगते भारी रोग ।
सेवन मादक द्रव्य का, फिर भी करते लोग ! !

मन में तो कुछ और है, कहता है कुछ और ।
करता है कुछ और ही, दुर्जन के ये तौर ।।

लिए हुए गम्भीरता, वाणी, कर्म, विचार ।
अय 'चन्दन' व्यक्तित्व को, देते अधिक निखार ।।

पलटे से पलटे नहीं, अय 'चन्दन' तक़दीर ।
कर्म कमाये भोगते, राजा, रंक, फ़क़ीर ।।

सत्य, शील, सन्तोष से, जिसको 'चन्दन' प्यार ।
लोक और परलोक हैं, दोनों ही गुलज़ार ।।

जीवन, निश्छल, शुद्ध हो, मधुर-मधुर व्यवहार ।
क्यों नहिं फिर फूले-फले, वह 'चन्दन' परिवार ।।

'सभी जगत मम देश है' 'सभी मनुज मम भ्रात' ।
'चन्दन' 'नेकी धर्म मम', यह सोचो दिन-रात ।।

'मैत्री हर इक जीव से, सबसे करना प्रेम ।
'सब से सद्व्यवहार हो', 'चन्दन' लो यह नेम ।।

सत्य अहिंसा, ब्रह्मचर्य, बिन नहिं सुख कल्याण ।
जितना 'चन्दन' दे सकें, अधिक-अधिक दें ध्यान ।।

'कैसे दुखिया-दुख हरूं ?' 'पाऊं सज्जन-प्यार ?'
'कैसे मन निष्पाप हो !' 'चन्दन' सदा विचार ।।

जीवन में सुख-सफलता, 'चन्दन' अगर क़बूल ।
दान, पठन, प्रभु-भजन में, करें बिलम्ब नहिं भूल ।।

जो भी 'चन्दन' बेचता, करता या आहार।
मद्य, मांस, अण्डे सदा, दिखलाते यम-द्वार॥

जहां अनन्ती भूख है, जहां अनन्ती प्यास।
जहां अनन्ते अन्य दुख, वह है नर्कवास॥

या सन्तोषी आदमी, या फिर सच्चा सन्त।
'चन्दन' सुखिया तीसरा, याद जिसे भगवन्त॥

'चन्दन' ले प्रण पालिये, ले लौटाइये क़र्ज़।
करें काम विश्वास दे, समझ स्वयं का फ़र्ज़॥

तन, धन, यौवन स्थिर नहीं, क्या करता अभिमान।
तीन दशा से गुज़रता, एक दिवस में भान॥

'चन्दन' प्रज्ञा, क्रोध, मन, वश जो रक्खें आप।
तीन मिटेगे आपके, चिन्ता, दुख, सन्ताप॥

चोरी, चुगली, झूठ ये, जो भी तज दे तीन।
वही बड़ा गुणवान है, 'चन्दन' वही प्रवीण॥

गुण-अवगुण-अनजान औ, सत्य, धर्म से द्वेष।
'चन्दन' जो दम्भी पुरुष, कठिन उसे उपदेश॥

युगद्रष्टा कवि मे एक असाधारण गुण होता है—निर्भीकता, क्योंकि वह सत्य का उपासक है और सत्य-प्रवचन निर्भीकता के बल से ही व्यक्त होता है। इस प्रकार के सत्यवक्ता को आज की भाषा मे 'क्रान्तिकारी' कहा जाता है, परन्तु मैं 'क्रान्तिकारी' नही कह सकता, क्योंकि 'क्रान्ति' शब्द मे ध्वस की गन्ध भर गई है. अत मैं मुनिश्री को सत्य का समर्थक निभीक कवि एव व्यग्य का मर्मज्ञ विचारक कह सकता हू। वैसे तो भारतीय सस्कृति की प्रत्येक परम्परा 'गुरु-गुण-गान' मे ही अपनी धार्मिकता की पराकाष्ठा समझती है और साधु-वर्ग तो 'गुरु-महत्त्व' पर प्रवचन देता थकता ही नही है, किन्तु स्वार्थों की कुण्ठाओ से मुक्त कवि की सत्यशील वाणी कहती है—

गुरु को तारे जाति नहि, गुरु का तारे त्याग।
गुरु के तप से त्याग से, करें अतः अनुराग॥
जो है कामी लालची, जो है दुनियादार।
तीन काल भी वह कभी, गुरु नहि तारनहार॥
माया-ममता मे बंधा, गुरु ही हो जो आप।
दूर करेगा आपके, कहिए कैसे पाप?

मुनिराज गुरुडम से ऊचे है, तप एव त्याग के समर्थक है। उन्होंने देखा त्यागी सन्यासियो के नाम होती जायदादो को। बाप-दादो की जायदादो को छोडकर जन-धन से जायदादें बनवा कर अपने नाम से रजिस्ट्रिया करवाना सन्तत्व को कैसे सहन हो सकता है. अतः मुनिजी का त्यागमय मुनित्व कह उठा—

जिसको प्यारा त्याग-तप, ज्ञान, ध्यान भगवन्त।
रजिस्ट्री खेत मकान की, क्यो करवाए सन्त॥

दिव्य-द्रष्टा कवि-हृदय के सत्य ने किसी को बख्शा नही है। तथाकथित सन्तो की साज सम्भाल की है तो श्रावको को भी उद्बुद्ध

चुग़लख़ोर के, चोर के, भूल न फटको पास।
'चन्दन' झूठे का कभी; करो नहीं विश्वास॥

दान सुपात्र है बड़ा, बड़ा अभय का दान।
सबसे बढ़कर दान पर– देना सम्यग्ज्ञान॥

सरिता से सागर बड़ा, सागर से आकाश।
सबसे ही 'चन्दन' बड़ा, आत्म-ज्ञान – प्रकाश॥

मिलता है उपदेश 'टन', मगर समझते 'मन'।
"चन्दन' अचरज है यही; ग्रहण करें जो 'कण'॥

तजने से सद्धर्म के; करने से रिपु-नमन।
बहुत दुखों से जो मिले, कभी न लीजे धन॥

बुद्धि, नाभि, स्वर-तीन ये, अगर गहन-गम्भीर।
'चन्दन' चन्दा-सा सजे; हर इक पुरुष-शरीर॥

अंग शास्त्र में लिख गए, 'चन्दन' पुरुष प्रवीण।
माथा, वक्षस्थल, तथा, सिर विशाल शुभ तीन॥

पूछे से 'चन्दन' चले, हर इक का हर काम।
पृच्छा, प्रश्न, अनुयोग है, तीन 'प्रश्न' के नाम॥

अय 'चन्दन' मन इन्द्रियां, और आत्मा जान।
तीन किये बिन वश नहीं, तीन काल कल्याण॥

शिष्य, पुत्र और पुत्र वधू, अधिक तीन नहिं ताड।
अधिक तीन की ताड़ मे, 'चन्दन' बहुत बिगाड़॥

अय 'चन्दन' प्रभु-भक्ति औ, निज बल, शुद्धाचार।
तीनो पै विश्वास कर, कीजे बेड़ा पार॥

'सम्यग्दर्शन' साथ हो, 'चन्दन' 'सम्यग्ज्ञान'।
'सम्यक् ही चारित्र ये, 'मोक्ष-मार्ग' पहचान॥

सरल-सत्य-संयुक्त हों– विनय, विवेक, विचार।
होना फिर है क्या कठिन, 'चन्दन' भव से पार॥

जो चाहो 'चन्दन' खिलें, जीवन में सुख-फूल।
मानी, मायावी तथा, बनो कृतघ्न नहिं भूल॥

नाक, नयन औ जीभ का, सर्वाधिक उपयोग।
अय 'चन्दन' संसार के, करते है सब लोग॥

अय 'चन्दन' बहिरात्मा, अन्तरात्मा और।
परम आत्मा तीसरी, परम सुखी हर तौर॥

चार बात

४

चार बात

सन्त, सती औ, श्राविका, श्रावक गुण-भण्डार।
जैन-धर्म में 'तीर्थ' ये, 'चन्दन' है शुभ चार॥

दान, शील, तप, भावना, धर्म-भेद ये चार।
श्रेय 'चन्दन' भव से तरे, कर जन अंगीकार॥

क्रोधी, कपटी, अविनयी, पाँच विगय—आसक्त।
बने नहीं 'चन्दन' कभी, गुरुवर का वह भक्त॥

दमितेन्द्रिय, हो शान्त चित, माया रहित, विनीत।
शिष्य युक्त गुण चार से, करता गुरु से प्रीत॥

नहीं भूलना भूल भी, 'चन्दन' रखना याद।
मूढ़, जनक, जननी, गुरू, से नहिं भला विवाद॥

दया, सत्य औ शील नहिं, पल्ले प्रत्याख्यान।
वह 'चन्दन' परलोक में, पछताता इनसान॥

पय-भोजन, सत्संग औ, नृप-प्रदत्त सम्मान ।
प्रिय-दर्शन 'चन्दन' कहे, चारों सुधा समान ॥

रिपु नहिं 'चन्दन' लोभ-सा, निधि नहि दान समान ।
भूषण नहि है शील-सा, तप-सा नहिं स्नान ॥

रूपवान, बलवान औ, द्रव्यवान, विद्वान ।
धर्म बिना 'चन्दन' कहे, चारों धूल समान ॥

दया, सत्य, सन्तोष औ– 'चन्दन' शुद्धाचार ।
लक्ष्मी लखती जिस जगह, देती डेरे डार ॥

पाता 'श्रद्धावान' है– 'चन्दन' सम्यग्ज्ञान ।
उत्तम करणी, कर्म-क्षय, आख़िर पद निर्वाण ॥

पतिव्रता का जो करे, अय 'चन्दन' अपमान ।
मिले उसे नहिं शान्ति, सुख, लक्ष्मी औ भगवान ॥

बिन शशधर ज्यों शर्वरी, दिवस बिना ज्यों भान ।
नृप बिन 'चन्दन' राज्य-ज्यों, मन्त्र-बिना गुरु जान ॥

रोग-मीत औषधि कही, गृह-मीत मा-बाप ।
धर्म मीत द्वय लोक का, नर्क मीत है पाप ॥

'चन्दन' ऋण, व्रण, औ अनल, चौथी कही कषाय ।
थोड़ से ये हों अधिक, अधिक उपेक्षा पाय ।।

'बंधा वैर से पुरुष जो', 'स्वच्छन्दी', 'खल' होय ।
'चन्दन' चौथा 'आलसी', संग करो नहिं कोय ।।

अय 'चन्दन' माता-पिता, यौवन, रूप अहो !
कभी किसीको क्या मिले, दूजी बार कहो ?

'चन्दन' समझेंगे इसे, समझदार ही मर्द ।
भोज,भजन,धन,भामिनी, भले नही बे-पर्द ।।

जन्म, जरा का, रोग का, और मृत्यु का जान ।
दुःख है ये संसार में, 'चन्दन' चार महान ।।

जो चाहो 'चन्दन' मिले, दिल का चैन-करार ।
तजो साझ का काम औ, सट्टा द्यूत, उधार ।।

खाना, सोना, जागना, चौथे विषय-विकार ।
अगर अधिक हों चार ये, 'चन्दन' रोग अपार ।।

'चन्दन' रोना बाल-बल, वनिता - बल है हठ ।
आगम बल है सन्त का, वनचर-बल है लट्ठ ।।

'ब्रह्मचर्य-सा तप नही', 'अभयदान-सा दान'।
'चन्दन' उत्तम वीर-सा, 'वचन न सत्य समान'।।

ग्रामांतर जाते जपे, पहले प्रभु का नाम।
'चदन' त्यागें क्रोध औ, आलस वा आराम।।

'चदन' इज्जत, आबरू, नैतिकता औ त्याग।
जिनमें होते चार ये, वे जन है बड़ भाग।।

रतन, रजत या स्वर्ण के, 'चन्दन' सभी महान।
नही सादगी-सा मगर, गहना जग दरम्यान।।

दुष्टा पत्नी, मीत शठ, उत्तरदायक दास।
मृत्यु-तुल्य ही जानिये, सर्प-सहित गृह-वास।।

त्यागभाव, भय, चतुरता, चौथी 'चन्दन' लाज।
जिसमें नहिं ये चार हों, ऐसी तजो समाज।।

मीत विपद किकर कर्म, निर्धनता में नार।
बान्धव संकट के समय, परखो 'चन्दन' चार।।

जहां न 'चन्दन' जीविका, जहा न बान्धव, मान।
जहां न विद्या प्राप्त हो, रहे न चतुर-सुजान।।

‘पत्नी तो हो पतिव्रता’, ‘आत्मज आज्ञाकार’ ।
‘धर्म-रुचि हो’, ‘स्वस्थता’, स्वर्ग निशानी चार ॥

शील हरे दुर्गति, तथा— निर्धनता को दान ।
है हरती भव भावना, हरे ज्ञान अज्ञान ॥

‘त्यागी को तृण जगत है’, ‘मन-जित जन को वाम ।
‘तृण-सम मरना शूर को, ‘ज्ञानी को सुरधाम’ ॥

‘वर्षा सागर में वृथा’, ‘धनवानों को दान’ ।
‘चन्दन’ ‘भोजन तृप्त को’, ‘दीपक दिन दरम्यान’ ॥

‘निर्धन धन चाहे सदा’ ‘मीठे वचन जहान ।
‘चन्दन’ सुर सब नर-तनू, ‘चाहें मुनि निर्वाण’ ॥

सखा - अध्यापक-पत्नियां, तथा सासू, नृप-नार ।
अय ‘चन्दन’ संसार में, माता-सम ये चार ॥

‘पशुओं में-श्वा’, ‘विहग में— कौवा’ ‘चन्दनलाल’ ।
‘मुनियों में-क्रोधी’, तथा— ‘पुरुष पिशुन चंडाल’ ॥

भ्रमणशील मुनिवर, नृप, विप्र लहें सत्कार ।
अय ‘चन्दन’ हो नष्ट पर, भ्रमणशील हर नार ॥

'सेवा', तथा 'सुशीलता', 'करुणा', 'पर-उपकार'।
जो 'चन्दन' मन मोह ले, बातें है ये चार ॥

'अतिशबाजी', 'झगड़े', 'चन्दन' 'मदिरा', 'माँग'—
जहाँ न, वही विवाह है, बाकी तो सब साग ॥

'नवयौवन' 'फल' 'फूल' औ—'काचन' लख एकान्त।
'चन्दन' बिरला वीर ही, रख सकता मन शान्त ॥

'अधम लोग धन चाहते', 'मध्यम जन-धन, मान'।
'चन्दन' उत्तम मान ही, 'साधू मुक्ति - स्थान' ॥

'चन्दन' चाहो मुक्ति जो, तजो विषय विष जान।
दया, सत्य को, शील को, पीओ सुधा समान ॥

रोगों में है पूतना, सुख में भोजन जान।
इन्द्रियगण में नयन, शिर— 'चन्दन' सर्व - प्रधान ॥

सर्प, सिह, मूर्ख मनुज, अन्यायी भूपाल।
नही जगाने चाहिये, चारो 'चन्दनलाल' ॥

दुग्ध-घृत, गुड़-ईख औ— पुष्प-गन्ध, तिल-तेल।
'चन्दन' ऐसे देह से, देही का है मेल ॥

रूप व्यर्थ गुण हीन का, वंश दुष्ट का व्यर्थ।
दान बिना धन, धर्म बिन— नर तन का क्या अर्थ?

ज्ञान, दान, तप, वीरता, लख कर कही महान।
चकित न हो, 'चन्दन' कभी, जग रत्नों की—खान॥

धन, धरनी, पत्नी, सखा, मिलते वार हजार।
पर, नर-तन 'चन्दन' नही, मिलता वारम्बार॥

नम्र पुत्र हो, पौत्र, धन, पतिव्रता हो नार।
'चन्दन' वासव-सम सुखी, कहे उसे ससार॥

सुख, साता, आजीविका, तथा—मान - सम्मान।
'चन्दन' चीजें चार ये, चाहे हर इनसान॥

जिज्ञासा, स्वाध्याय औ— अनुभव औ अभ्यास।
साधन ज्ञान-विज्ञान के, 'चन्दन' चारों ख़ास॥

अय 'चन्दन' बल, बुद्धि औ— तेज और उद्योग।
इन चारों के साथ ही, उन्नति करते लोग॥

बहुत शास्त्र, विद्या बहुत, अल्प काल, बहु विघ्न।
सार ग्रहण में हस सम, हो 'चन्दन' संलग्न॥

समस्त सांस्कृतिक बन्धनों का परित्याग कर, लज्जा के आभूषणों को उतार फेंके, परन्तु मुनिराज इसके विरुद्ध हैं, वे नारी को मर्यादा की देवी के रूप में पूजनीय ही देखना चाहते हैं। उन्हीं के शब्दों में—

पत्नी को गृह-लक्ष्मी, समझ सदा दें मान।
'चन्दन' घर को वे पुरुष, पाते स्वर्ग समान॥
जो चाहो चन्दन बने, जीवन यह खुशहाल।
पत्नी को पीटो नहीं, नहिं निन्दा सुसराल॥

दूसरे पक्ष में वे इस सामाजिक बुराई की ओर भी समाज का ध्यान खींचना चाहते हैं—

मानें चाहे आप न, मानें मेरी बात।
ठीक न लेकिन देवियां, वर-यात्रा के साथ॥

साथ ही वे गृहस्थ-जीवन के लिये आवश्यक निर्देश देते हुए कहते हैं—

पत्नी में पति देव में, छिड़ी जहां भी जंग।
चन्दन सुख का काफिया, हुआ वहीं बस तंग॥

हिन्दी-प्रेम :

हिन्दी देश की राष्ट्र-भाषा है और अपनी भाषा का व्यवहार ही राष्ट्र-गौरव को सुरक्षित रखता है। सजग कवि-बुद्धि इस सत्य के प्रति उदासीन नहीं हैं। वे हिन्दी की उपेक्षा के दुख को अभिव्यक्त करते हुए कहते हैं—

इंगलिश है हर काम में, हिन्दी से परहेज़।
'चन्दन' हिन्दी बन चले, एक तरह अंग्रेज़॥
पत्रों पर इंगलिश पते, तन पर इंगलिश वेश।
बोर्ड हैं इंगलिश के यहां, यह है भारत देश!!

अय 'चन्दन' सौजन्य औ स्नेह, शील, सत्कार ।
इन्हें बताए—शकल औ नयन, बयन, व्यवहार ।।

कुलटा सतियों से जले, दुर्जन लखकर सन्त ।
मूढ जले लख विज्ञको, निर्धन लख धनवन्त ।।

'चन्दन' लक्ष्मी, लाज औ- प्रज्ञा तथा विवेक ।
रहे न मद्यप के निकट, चारो मे से एक ।।

बोले बिना बुलाय जो, बिना बुलाये जाय ।
पर-निन्दा, तारीफ़ निज, लघु-लक्षण बतलाय ।।

मधुर वचन, प्रभु-भक्ति औ दया, दान से प्यार ।
स्वर्गागत जन में लखे, मुख्य चिह्न ये चार ।।

भूख हरे जो अन्न है, नीर हरे जो प्यास ।
कष्ट हरे बान्धव वही, सुत जो-चरणन-दास ।।

पीना हो तो क्रोध पी, लेना हो ले ज्ञान ।
ग़म खा खाना हो अगर, देना हो दे दान ।।

कहना हो तो सत्य कह, रखनी हो रख लाज ।
तजनी हो तज ईर्ष्या, छोड़ प्राण पर-काज ।।

दुनिया में आनन्द का, जो हो गाना गीत।
हर्ष, अमर्ष, उद्वेग, भय, चारों 'चन्दन' जीत॥

प्रिय जो 'चन्दन' भूप का, सर्प, मूढ़, परनार।
रहे दूर इन चार से, यदि हो सुख दरकार॥

दया, सत्य औ सन्त औ– 'चन्दन' अपना देश।
चारों से ही कीजिये, प्रेम हमेश विशेष॥

बेकारी, महगाई औ– शोषण, भ्रष्टाचार।
'चन्दन' आज अशान्ति के, ये ही जिम्मेवार॥

जीवन, वनिता, वित्त औ– चौथा भोजन जान।
गया न इनसे तृप्त हो, कोई भी इनसान॥

शकट पांच, दश अश्व से, हाथी हाथ हजार।
दुर्जन का तो देश ही, 'चन्दन' शीघ्र बिसार॥

दशन, अंगुली, नख, त्वचा, सूक्ष्म 'चन्दन' चार।
कहें सन्त अत्यन्त वे, पुण्यवन्त नर-नार॥

पृष्ठदेश, जंघा तथा, 'चन्दन' ग्रीवा, कान।
अंग ह्रस्व शुभ चार ये, कहता तनु-विज्ञान॥

वातज, पित्तज, कफ़ज फिर, सन्निपात से जान ।
चार किस्म की व्याधियां, 'चन्दन' जग दरम्यान ॥

दर्शन, भाषण श्रवण है, और स्मरण भी जान ।
कारण चारो 'हास्य' के, अय 'चन्दन' पहचान ॥

'आगम' औ प्रत्यक्ष औ, 'अनुमान', 'उपमान' ।
'चन्दन' चार 'प्रमाण' ये, गए भाख भगवान ॥

'प्राण' 'भूत' 'चन्दन' तथा, 'जीव' 'सत्व' फिर जान ।
'जीव-भेद' है चार ये, हने न चतुर सुजान ॥

अपलक लोचन, तेज तन, पुष्पमाल अम्लान ।
भू से ऊंचा कुछ रहे, चिह्न 'देव-पहचान' ॥

पण्डक, नन्दन, सौमनस, भद्रशाल सुखकार ।
जम्बूद्वीप—सुमेरु के, 'चन्दन' 'बन' ये चार ॥

द्रव्य, क्षेत्र औ काल औ, चौथा 'चन्दन' भाव ।
बिना विचारे चार ये, करिये नहि बर्ताव ॥

जिनकी महिमा का नही, अय 'चन्दन' कुछ पार ।
दर्शन, ज्ञान, चरित्र, तप, कहे मुक्ति-मग चार ॥

सरल-सुशीला भामिनी, बेटा विज्ञ–विनीत ।
गेही के दुख-शोक हर, अय 'चन्दन' धन, मीत ।।

बहुत शास्त्र, विद्या बहुत, अल्पकाल, बहु विघ्न ।
सार ग्रहण में हस सम, हो 'चन्दन' सलग्न ।।

समकित, श्रुत औ देशव्रत, सर्व-विरति फिर जान ।
'चन्दन' चार प्रकार की, 'सामयिक' तू मान ।।

सूत्र-श्रवण श्रद्धा-सहित, सत सुपात्र को दान ।
सम्यक्त्वी, बारह व्रती, 'चन्दन' 'श्रावक'[१] जान ।।

पिता, मात सम, भ्रात सम, सौत[२], अभिन्न[३] समान ।
श्रावक चार प्रकार यों, कहे स्वय भगवान ।।

खरकण्टक[४] सम एक है, दूजा स्तम्भ[५] समान ।
दर्पण[६] ध्वजा[७] समान फिर, श्रावक–भेद बखान ।।

---

[१] देशव्रती को 'श्रावक' कहते हैं । जो प्रतिदिन प्रात काल सम्यग्दर्शन को प्राप्त किये हुए साधुओं के समीप प्रमाद-रहित होकर श्रेष्ठ चरित्र का व्याख्यान सुनते हैं वे 'श्रावक' कहलाते है ।

[२] साधुओं मे सदा दोष देखनेवाले और उनका बुरा करनेवाले ।

[३] मित्र की तरह दोषों को ढकने वाले और गुणों का प्रकाश करनेवाले ।

[४] जो श्रावक समझाने पर भी अपने दुराग्रह को नहीं छोडता बल्कि समझानेवाले को कठोर वचन रूपी काटों से कष्ट पहुचाता है ।

[५] स्तम्भ समान ।

[६] जो साधुओं से उत्सर्ग, अपवाद आदि आगम-सम्बन्धी भावों को यथार्थ रूप से ग्रहण करता है ।

[७] ध्वजा के समान धर्म मे अस्थिर मनवाला ।

'ठाणांग' ठाणा चार में, किया 'वीर' विस्तार।
सुनना 'चन्दन' ध्यान से, कहे 'मेघ' फिर चार॥

'बरसे खेत, अखेत न', 'एक अखेत, न खेत'।
'चन्दन' खेत-अखेत इक', 'इक नहिं खेत-अखेत'॥

ऐसे ही भगवान ने, चार कहे दातार[1]।
समझ स्वयं ही लें इसे, समझदार नर-नार॥

श्रोत्रेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, स्पर्शन चौथी घ्राण।
चार प्राप्यकारी[2] कही, इन्द्रिय श्री भगवान॥

महारंभ, परिग्रह महा, 'चन्दन' मासाहार।
पंचेन्द्रियवध-नरक के, कारण मोटे चार॥

कूड़-कपट, पाखण्ड औ- कूड़-तोल व माप।
चारों गति तिर्यञ्च के, कारण 'चन्दन' साफ॥

---

[1] —१-कोई पुरुष पात्र को दान देता है, पर कुपात्र को नही।
२-कोई पुरुष पात्र को दान नही देता, पर कुपात्र को देता है।
३-कोई पुरुष पात्र और कुपात्र दोनों को दान देता है। और—
४-कोई पुरुष पात्र और कुपात्र दोनो को ही दान नही देता।

[2] —विषय से सम्बद्ध होकर उसे जाननेवाली इन्द्रियाँ।

मैथुन, भोजन, परिग्रह, 'चन्दन' चौथी भीत।
उत्तरोत्तर संज्ञा अधिक, नारकियों की रीत॥

परिग्रह औ मैथुन पुनः– 'चन्दन' भय, आहार।
उत्तरोत्तर सज्ञा अधिक, तिर्यञ्चो में चार॥

भय, भोजन औ परिग्रह, मैथुन चौथी जान।
उत्तरोत्तर सज्ञा अधिक, मानव गण में मान॥

भोजन, भय, मैथुन पुनः, और परिग्रहवान।
उत्तरोत्तर सज्ञा अधिक, देवगणों में जान॥

क्रोध, मान, माया, तथा– चौथा है फिर लोभ।
'चन्दन' चार कषाय[1] ये, भरें हृदय में क्षोभ॥

चार किस्म का 'क्रोध' है, चार किस्म का 'मान'।
चार किस्म का 'लोभ' 'छल', 'चन्दन' दुख की खान॥

क्रोध-क्षमा से जीतिये, और विनय से मान।
माया-सरल स्वभाव से, लोभ-सबर से जान॥

क्रोध अधिक है नरक में, अधिक मनुज में मान।
माया पशुओं में अधिक, लोभ देव-दरम्यान॥

---

[1] *कष ससारस्तस्य आयो लाभो येभ्यस्ते कषाया।*

गणिम[1], धरिम[2] औ मेय[3] औ- परिच्छेद्य[4] है अन्य।
'ज्ञाता' में कही चार यों, 'चन्दन' चीजें पण्य[5] ।।

'चन्दन' क्रिया, अक्रिया फिर, विनय और अज्ञान ।
ऐसे चार प्रकार के, 'वादी' जग दरम्यान ।।

औत्पातिकी, वैनयिकी, कार्मिकी सुखकार ।
'चन्दन' पारिणामिकी, कही बुद्धियां चार ।।

भोभर सम, अंगार सम, शीत, शीत-भण्डार ।
अय 'चन्दन' है नरक में, चार किस्म आहार ।।

ककोपम, विलोपम पुनः, यथा मांस चण्डाल ।
सुतमांसोपम-ढोर का, भोजन 'चन्दनलाल' ।।

अशन, पान, खादिम पुनः, स्वादिम जानो और ।
चार मनुज-आहार ये, कीजे 'चन्दन' गौर ।।

---

[1] जिस चीज का गिनती से व्यापार हो। जैसे नारियल आदि।

[2] जिस चीज का तराजू से तोल कर लेन-देन हो। जैसे गेहूं आदि।

[3] जिस चीज का व्यवहार पायली, हाथ, गज आदि से नाप कर होता है।

[4] गुण की परीक्षा कर जिस चीज का मूल्य स्थिर किया जाता है और बाद मे लेन-देन होता है। जैसे जवाहरात।

[5] भाण्ड (पण्य-वस्तु)

पांच बात

५

पांच बात

●

प्रेम, अहिंसा, शान्ति औ- शील, सत्य-सन्देश।
'चन्दन' जो है दे गये, जय-जय 'वीर' जिनेश॥

सदाचार हो, सत्य हो, दमन दया हो, दान।
कुछ भी तब 'चन्दन' कहो, कठिन कहां कल्याण ?

सच्चे, सरल, सुशील औ- करुणावन्त, विनीत।
बन कर 'चन्दन' लीजिये, जीवन-बाज़ी जीत॥

'चन्दन' दया, उदारता, शान्ति, शील, उपकार।
पांच गुणों के बिन सभी, नर-जीवन बेकार॥

गाँव, नगर 'चन्दन' तथा, वन, पर्वत, उद्यान।
सन्त जहां हों विचरते, वे सब स्वर्ग समान॥

क्रोध, काम, छल, लोभ को, करदे 'चन्दन' नष्ट।
सन्त वही जो दे नही, कभी किसी को कष्ट॥

हिंसा, मिथ्या, स्तेय औ, मैथुन, परिग्रह जान ।
इनका पूरा त्याग ही, पांच 'महांव्रत'[1] मान ॥

'चन्दन' कुल, गण, संघ औ- नवदीक्षित जो सन्त ।
साधर्मिक-सेवा किये, कर्म-नाश अत्यन्त ॥

पृथ्वी, अप, तेजस, पवन, वनस्पती है और ।
पांच 'स्थावर' जीव ये, कीजे 'चन्दन' गौर ॥

एकेन्द्रिय औ द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय को फिर जान ।
चतुरन्द्रिय, पचेन्द्रिय, 'जाति'[2] पांच पहचान ॥

श्रोत्र, चक्षु, घोणा, रसन, स्पर्शन 'चन्दन' और ।
पांच 'इन्द्रियां' जीत ये, सुखी बनो हर ठौर ॥

पृथ्वी, पानी, अगन औ, मन्त्र, ब्रह्म[3] से जान ।
'चन्दन' पांचो 'शुद्धिया' कही 'वीर' भगवान ॥

देशव्रती श्रावक की अपेक्षा साधु के व्रत बडे है इसलिये ये 'महाव्रत' कहलाते है ।

अनेक व्यक्तियों मे एकता की प्रतीति करानेवाले समान-धर्म को 'जाति' कहते है । जाति 'शब्द' का अर्थ समूह भी होता है ।
ब्रह्मचर्य ।

लेकर अच्छे अक जो, होना चाहो पास।
फिल्म सुरा सिगरेट के, कभी न फटको पास ॥

इस प्रकार चन्दन दोहावली मे धर्म, जाति, देश और समाज के लिये जो कुछ उपयोगी है उसे कहने मे कोई कसर नही रक्खी गई है। कहना कवि-धर्म है, समाज माने या न माने। मुनिराज जी ने अपने धर्म का पालन करते हुए अन्त मे दृढ विश्वास के साथ यह कह अवश्य दिया है—

चन्दन की सुनते नहीं, अब जो नेक सलाह।
इक दिन वे पछतायेंगे, होकरके गुमराह ॥

इस प्रकार चन्दन-दोहावली का अनुभूति-पक्ष अत्यन्त व्यापक, मार्मिक, उपयोगी समर्थ एव सत्य की सुदृढ आधार शिला पर व्यवस्थित है।

चन्दन-दोहावली का कला-पक्ष भी अत्यन्त समर्थ रहा है। बडी से बडी बात को दोहे जैसे छोटे छन्द मे और वह भी खड़ी बोली मे कह देने की कवि-कला अभिनन्दनीय है। देखिए गागर में सागर कैसे छलक रहा है—

आलस निन्दा ईर्ष्या, काम क्रोध मद मोह।
करें दोष दस मन मलिन, कपट कुटिलता द्रोह ॥

'बाप बीच बाजार' आदि श्रुत्यनुप्रासो और 'तन मन धन' 'चन्दन' सभी जैसे अन्त्यानुप्रासो ने भाषा को मोहक बना दिया है। भाषा की दृष्टि से कवि को अभिव्यक्ति का मोह है, किसी शब्द-विशेष के प्रति आसक्ति नही। न उन्हे हिन्दी से प्रयोजन है, न उर्दू से घृणा है, वे भाषा से जबरदस्ती वह कहलवा देते है जो उन्हें कहना होता है। बीच-बीच मे मुहावरो के प्रयोग ने भाषा को अत्यधिक व्यावहारिक बना दिया है।

शब्द, रूप, रस, गन्ध औ– पंचम कहा स्पर्श ।
अय 'चन्दन' ये 'कामगुण', करते है अपकर्ष ।।

अह, अमर्ष, प्रमाद औ– 'चन्दन' आलस, रोग ।
जिसमें इनकी अधिकता, शिक्षा के नहि योग ।।

मात, पिता, गुरुदेव, नृप, और चिकित्सक जान ।
'चन्दन' इनसे झूठ से, नष्ट होय इनसान ।।

'चन्दन' बन्धन, दुर्व्यसन, दुख, दरिद्रता, रोग ।
पाप-पेड़ के कटुक फल, कहते विद्वत् लोग ।।

ज्ञान, दान, तप, वीरता, विनय विशेष लखाय ।
'चन्दन' चकित न हों यहां, रत्न बहुत मिल जायं ।।

मद्यप, चोर, जुआरिया, वेश्या और कुलाल ।
पाचों के घर भूल भी, जायं न 'चन्दनलाल' ।।

दुराचार, जूआ, अलस, दुष्ट-सग, मधुपान ।
अय 'चन्दन' धन-नाश के, कारण पांच प्रधान ।।

चोरी, चौधर, चिलम औ– चालाकी, चाण्डाल ।
पांच चकारो से बचे, चातुर 'चन्दनलाल' ।।

छः बात

◆

६

◆

छः बात

'चन्दन' आत्मसंयमी, स्नेही; प्रतिभावान।
उद्यम, विद्या, बुद्धि से, यश पाता इनसान॥

शील, सरलता, नम्रता, विनय, विचार, विवेक।
महापुण्य से छः मिलें, नहिं पाए हर एक॥

पागल, बनिता, बालिका, बाल, वृद्ध, बीमार।
अधिक दया के छः सदा, है 'चन्दन' हकदार॥

विधवा, दीन, अनाथ औ— दुखिया, अन्ध, अपग।
'चन्दन' भारी पाप है, छः को करना तग॥

गुरु, गुरुणी, माता, पिता, सासु, श्वसुर ये लोग।
वृद्धावस्था में अधिक, 'चन्दन' सेवा-योग॥

साधु, ऋषि, योगी, तपी, ज्ञानी, ध्यानी जान।
कौड़ी के नहिं जो किया— नहिं चरित्र-निर्माण॥

पूर्व, पश्चिम और फिर, उत्तर, दक्षिण जान ।
ऊर्ध्व अधो, 'चन्दन' 'दिशा', छः भाखी भगवान ॥

चिन्ता, भय, उद्विग्नता, द्वेष, ईर्ष्या, क्रोध ।
पाचन क्रिया का करें, षट 'चन्दन' अवरोध ॥

सज्जन, स्नेही, मित्रजन, मात, पिता, परिवार ।
'चन्दन' क्रोधी पुरुष को, छः देते दुत्कार ॥

जिसमें--विद्या, धर्म नहिं, शील न गुण, तप, दान ।
'चन्दन' भू पर वे रहैं, जंगल-जीव--समान ॥

लोचन, नाक, ललाट औ, मस्तक, दन्त, हृदय ।
अंग महा उत्तम कहे, 'चन्दन' उन्नत छः ॥

शीर्ष, मस्तक, मूर्धा, उत्तमाँग, शिर, मुण्ड ।
नाम 'शीश' के छः जहां-- सजे कृष्ण कच-झुण्ड ॥

कच, कुन्तल व चिकुर औ- केश, शिरोरुह, बाल ।
केशों के ये नाम छः, कहता 'चन्दन लाल' ॥

श्रवण, शब्दग्रह, श्रुति तथा, कर्ण कहो या कान ।
अय 'चन्दन' श्रव, श्रोत्र ये, कान-नाम छः जान ॥

सात बात

७

सात बात

लज्जा, श्रद्धा, शील, श्रुत, प्रज्ञा, त्याग, संकोच।
असली 'धन' ये सात हैं, कहता 'चन्दन' सोच॥

चुगली, निन्दा, ईर्ष्या, क्रोध, काम, छल, मान।
'चन्दन' सातों में फंसा, मन भूले भगवान॥

पुत्र, मित्र, माता, पिता, पत्नी, भगिनो, भ्रात।
सातों साथी लोक के, चलें न 'चन्दन' साथ॥

स्नेह, श्रुति, संयम, वचन, सेवा, दृष्टि, विचार।
'सु' सातों के आदि जो, 'चन्दन' बेडा पार॥

सरस, सरल, फिर, सार्थक, हित, मित, संयत, शुद्ध।
वाणी से ही ज्ञात हो, 'चन्दन' मानव-बुद्ध॥

'चन्दन' दर्शन, ज्ञान, फिर- चरित्र, मन, वच, काय।
सप्तम है उपचार यों, 'विनय'-भेद बतलाय॥

जिह्वाग्र, हृदय, कण्ठ औ- जिह्वा-मध्य, कपाल ।
दन्त-होंठ, फिर नाक, 'स्वर-स्थान' ये 'चन्दनलाल' ॥

मादल, गोमुखी, शंख, औ- झालर, भेरी, ढोल ।
दुर्दरी, क्रमशः सात स्वर, 'चन्दन' जड़ के बोल ॥

पहला, दूजा, तीसरा, चौथा, सप्तम जान ।
स्वर ये दें यश-लक्ष्मी, दो अघ-कलह-निधान ॥

हाथ, पांव, काकुद, अधर, नाखुन, नयन, जबान ।
सात जिन्हों के अरुण ये, 'चन्दन' सुखी महान ॥

कृष्ण, नील, मेचक, असित, काला श्यामल, श्याम ।
'चन्दन' हैं विख्यात ये, 'नील' रंग के नाम ॥

पुहुप,पुष्प सुम,सुमन औ- फुल्ल, प्रसून सुजान !
कुसुम, 'पुष्प' के नाम ये, है कहते विद्वान ॥

पुत्र, सूनु, अंगज, तनय, सुत, नन्दन, तनुजात ।
नाम मुख्य ये 'पुत्र' के, 'चन्दन' जग-विख्यात ॥

मन,मानस,हृत्, हृदय औ, स्वात्म चित्त व चेत ।
'चन्दन' 'मन' के नाम ये, कहे सात हित हेत ॥

आठ बात

८

आठ बात

तीर्थङ्कर, अरिहन्त, जिन, वीतराग, भगवान।
सुगत, सर्वज्ञ, मारजित, 'जिनवर'–नाम बखान॥

सुख, दुख, वैरी, मीत में, मान और अपमान।
शीत, उष्ण मे भाव सम, रखते सन्त महान॥

सत्य, दया, दम, ब्रह्मचर्य, सम्यग्दर्शन, ज्ञान।
अय 'चन्दन' अस्तेय, तप, अंग 'शील' के जान॥

हिसा, चोरी, झूठ, छल, दुराचार, दुष्कर्म।
चुगली, निन्दा त्याग दे, जो चाहे सुख परम॥

शील, छिमा, सम, दम, दया, विद्या, विनय, विवेक।
अय 'चन्दन' गुण अष्ट युत, वनिता विरली देख॥

दम्भ, द्वेष, छल, क्लेश औ– लोभ, मोह, मद, मान।
'चन्दन' बचना आठ से, जो चाहो कल्याण॥

नौ बात

९

नौ बात

अरिहन्त, सिद्ध, आचार्य, उवज्झाय, अणगार ।
दर्शन, ज्ञान, चरित्र, तप, 'चन्दन' 'नवपद' सार ॥

'चन्दन' जीव, अजीव फिर, पुण्य, पाप, आस्रव ।
सम्वर, निर्जरा, बन्ध औ- मोक्ष, 'तत्त्व'[1] यों नव ॥

अन्न, पान, 'चन्दन' वसन, लयण, शयन, मन, वचन ।
काय, प्रणाम, नव 'पुण्य' के, भेद कहे मन-हरण ॥

अन्धा, निन्दक, नास्तिक, कृपण, पाप की खान ।
कामी, क्रोधी, मूढ, खल, 'चन्दन' मरे-समान ॥

ब्राह्मी, भाषा, भारती, सरस्वती, व्याहार ।
वाक, वचन वाणी, वचः, 'वचन'—नाम सुखकार ॥

---

[1] वस्तु के यथार्थ स्वरूप को 'तत्त्व' कहते है । इन्हे सद्भाव पदार्थ भी कहा जाता है ।

दश बात

◆

१०

दश बात

खंत्ती, मुत्ती, आर्जव, मार्दव, संयम, ज्ञान ।
सत्य, शौच, तप, ब्रह्मचर्य, 'श्रमण-धर्म' दश जान ॥

आलस, निन्दा, ईर्ष्या, काम, क्रोध, मद, मोह ।
करें दोष दश मन मलिन, कपट, कुटिलता, द्रोह ॥

वत्सल, वीर, बीभत्स व, करुणा, हास्य, शृंगार ।
शान्त, भयानक, रौद्र औ- अद्भुत 'रस' उर धार ॥

तीन पूर्वा, आर्द्रा, पुष्य, अश्लेषा, हस्त ।
चित्रा, मूला, मृगशिरा, 'चन्दन' पठन प्रशस्त ॥

मनुष्य, मानुष, मनुज, नर, मानव, मर्त्य, पुमान ।
पूरुष, पुरुष व पञ्चजन, 'पुरुष'–नाम दश जान ॥

महिला, अबला, अंगना, प्रमदा, वनिता, वाम ।
ललना, कान्ता, कामिनी; रमणी, 'नारी'–नाम ॥

विविध दोहे

चौबीसी

जो चाहो सुख-सम्पदा, जो चाहो कल्याण ।
निशदिन अय 'चन्दन' जपो, चौबीसों भगवान ।।

प्रथम तीर्थंकर हुए, 'ऋषभदेव' भगवान ।
चरण-शरण ले तर गए, लाखों ही इनसान ।।

करने को ससार से, भव्य जनो को पार ।
'श्री अजित' जिनवर किया, 'चन्दन' धर्म-प्रचार ।।

किया अहिसाधर्म को, जिनने जग विख्यात ।
जय-जय जिनवर तीसरे, 'चन्दन' 'सम्भवनाथ' ।।

राजा 'संवर' तात तो- 'श्री सिद्धार्थ' मात ।
नगर 'अयोध्या' के रतन, जय 'अभिनन्दन नाथ' ।।

'चन्दन' सम्यग् ज्ञान दे, गए तार ससार ।
'सुमतिनाथ' भगवान की, महिमा अपरम्पार ।।

एक सहस औ आठ थे, लक्षण शुभ अत्यन्त।
सदा रहें जयवन्त वे, जिनवर 'श्री अनन्त'॥

दया, सत्य जिसमें नहीं, धर्म न 'चन्दन लाल'।
'धर्मनाथ जी' धर्म की, व्याख्या करी कमाल॥

रोग महामारी मिटा, शान्ति हुई हर ओर।
'शान्तिनाथ' भगवान को, है वन्दन कर जोड॥

सहज बताया काटना, जिनने माया-जाल।
'कुन्थुनाथ' भगवान को, नमो-नमो त्रैकाल॥

नगर 'हस्तिनापुर' जहां, भूप 'सुदर्शन' जान।
तारा जग शुभ जन्म ले, 'अरहनाथ' भगवान॥

जो चाहे कल्याण तू, जो चाहे निर्वाण।
रे मन! कर तू स्मरण नित, 'मल्लिनाथ' भगवान॥

वन्दनीय ससार के, सर्वगुणो के धाम।
'चन्दन' 'श्री मुनिसुव्रत', जपिये आठो याम॥

जिनके सुमरन से खुले, स्वर्ग-मुक्ति का द्वार।
'नमीनाथ' भगवान को, वन्दन लाखो बार॥

'चन्दन' संगम देव ने, दीने कष्ट अनेक।
चकित हो गया 'वीर' की, अद्भुत समता देख ॥

सोए केवल दो घडी, श्रमण[1] 'वीर'[2] भगवान।
'चन्दन' देखे स्वप्न दश, उसी नींद दरम्यान ॥

गोशालक कु-शिष्य के, 'वीर' बचाए प्राण।
अय 'चन्दन' करुणार्णव[3], धन्य! धन्य! भगवान ॥

बेले-बेले तप सदा, ज्ञान-ध्यान-भण्डार।
बड़े शिष्य थे 'वीर' के, 'इन्द्रभूति'[4] अणगार[5] ॥

'अग्निभूति' ने 'वीर' से, समझ कर्म का मर्म।
दीक्षित हो संसार को, समझाया सद्धर्म ॥

---

[1] महात्मा
[2] महावीर
[3] अनुकम्पा के सागर
[4] श्री गौतम स्वामी जी महाराज
[5] गृह-त्यागी साधु

संशय जब निर्वाण का, किया 'वीर' ने दूर ।
मुनिवर बने 'प्रभास जी' हो हर्षित भरपूर ॥

तीन वधाइयां 'भारत' को, मिली एक ही साथ ।
'चन्दन' पर प्रभु-चरण में, प्रथम झुकाया माथ ॥

चक्रवर्ति पहले हुए, जो भारत दरम्यान ।
शीशभवन में ज्ञान पा, बने 'भरत' भगवान ॥

चक्रवर्ति 'सागर' हुए, सुमतिविजय के नन्द ।
पहुंचे 'चन्दन' मुक्ति में, काट कर्म के फन्द ॥

धन्य! धन्य! फिर धन्य! वे, चक्रवर्ति 'मघवान' ।
जो ले संयम कर गए, श्रय 'चन्दन' कल्याण ॥

चक्रवर्ति 'चन्दन' अहो ! सुन्दर 'सनत्कुमार' ।
रूप-गर्व से पर पड़े, कीड़े मुख मंझार ॥

'शान्ति' कुन्थु' 'अर' जिन हुए, चक्रवर्ति भूपाल ।
तरे स्वयं भी, जगत भी- तारा 'चन्दनलाल' ॥

जिनने मारी एक दिन, ताज-तख्त पर लात ।
चक्रवर्ति 'चन्दन' हुए, 'महापद्म' विख्यात ॥

इन्द्रध्वज के स्तम्भ, देख हाल-बेहाल ।
श्रमण बने पांचाल-पति, दक्ष 'द्विमुख' भूपाल ।।

आम्र-पेड़ की दो दशा, 'निग्गति' नयन निहार ।
महाव्रती बन एकदम, तजा ताज गाधार ।।

'ऐवन्ता' के वाहवा ! कैसे निर्मल भाव ।
मुक्ति सिधाया तार कर, 'चन्दन' जल में नाव ।।

प्रथम स्वर्ग में जा लिया, जिसने शुभ अवतार ।
धन्य!'वीर' का शिष्य वह, 'तिष्यगुप्त' अणगार ।।

पहले भव का प्रेम जब, बतलाया भगवन्त ।
सुन करके हर्षित हुए, गौतम जी अत्यन्त ।।

गौतम जी से था जिन्हें, सरल स्नेह अत्यन्त ।
'खन्दक परिव्राजक' बना, महावीर का सन्त ।।

संन्यासी 'शुकदेव' कर, थावर्चा से वाद ।
शिष्य उन्हीं का बन गया, अथ 'चन्दन' साल्हाद ।।

'कुँवर इलाची नट बना, मात-पिता घर छोड़ ।
'चन्दन' मुनिवर देख पर, फेंके बन्धन तोड़ ।।

'चन्दन' 'चित' 'सम्भूत' थे, पांच भवों से साथ।
छठे जन्म में पर हुए, अलग-अलग द्वय भ्रात॥

'बाहुबली' ने जिस समय, दूर किया अभिमान।
उसी समय ही हो गया, 'चन्दन' केवलज्ञान॥

मृगावती का लाडला, 'मृगापुत्र' गुणवान।
संयम लेकर कर गया, अय 'चन्दन' कल्याण॥

दो बेटे औ 'भृगु' 'यशा', 'कमला' नृप 'इषुकार'।
छः के छः ही कर गए, 'चन्दन' खेवा पार॥

जिसने समताभाव से, थी खिचवाई खाल।
क्षमावान 'खन्दक' सदृश, मुनि नहि 'चन्दनलाल'॥

'विक्रम' गाथापति हुआ, राजगृही दरम्यान।
संयम लेकर कर गया, अय 'चन्दन' कल्याण॥

सुनकर वाणी 'वीर' की, गया 'मकाई' जाग।
मुक्त सिधाया शेर वह, अय 'चन्दन' जग त्याग॥

महावीर भगवान से, पांच महाव्रत धार।
'कासव' गाथापति हुआ, अय 'चन्दन' भव पार॥

मन २३९
दान २४३
शासक २५१
विद्यार्थियो मे २५३
अश्रिम पुजारी २५५
खान-दान २५९
हसना २६१
चोरी २६३
मूर्ख २६५
मूर्ख-नीति २६९
बुद्धि २७१
मित्रता २७३
युवा वर्ग मे २७९
सिगरेट २८३
वचन-वीर २८७
वाणी मे परीक्षा २८९
समादर २९१
गृह-जीवन २९३
व्यापार २९५
शिष्टाचार २९९
सन्तति ३०३
वेश ३०५
दृष्टि ३०७
नीति निचोड ३११
क्रोध ३१९
अहकारी ३२३
माया ३२५
लोभ ३२९
विनय ३३७
हम कि आप बताए ३३९
आत्म-परिचय ३४१
उपसहार ३४३

'चन्दन' 'मण्डीपुत्र' थे, ज्ञान-रसिक अणगार।
समझा जिनवर 'वीर' से, कठिन क्रिया-अधिकार॥

मनका कांटा बदलते, पतन बना—उत्थान।
'कपिल केवली' की कथा, 'चन्दन' आलीशान!!

'विजय कुंवर' ने शील के, विजया के सुन भाव।
'चन्दन' सयम ले लिया, मन में भर कर चाव॥

'थावर्चा' था द्वारका— वासी सेठ कुमार।
संयम लेकर कर गया; 'चन्दन' बेड़ा पार॥

'बिम्बसार' कहिये उन्हें, या 'श्रेणिक' भूपाल।
निकल नर्क से 'जिन' प्रथम, होंगे 'चन्दनलाल'॥

श्रेणिक-सुत 'जालीकुंवर', 'कुंवर वयाली' और।
गए अनुत्तर स्वर्ग में, 'चन्दन' मुनि-सिरमौर॥

'चन्दन' 'उवाली कुवर', 'पुरिससेन' गुणवन्त।
गए अनुत्तर स्वर्ग में, दोनों ही बन सन्त॥

'दीर्घदन्त' 'विहल्ल जी', औ 'वेहासकुमार'।
'वारिसेन' आदिक तरे, 'चन्दन' संयम धार॥

गुणी 'महासिहसेन जी', 'शुद्धदन्त जी' और।
गए अनुत्तर स्वर्ग में, त्याग निभा हर तौर॥

'चन्दन' जिनके स्मरण से, होता बेड़ा पार।
महा तपस्वी धन्य ! वे, 'धन्ना जी' अणगार॥

चोर सुधारे पाच सौ, तारे रिश्तेदार।
'जम्बू स्वामी' पर सदा, 'चन्दन' है वलिहार॥

'चन्दन' आचार्य 'प्रभव', हुए विश्व-विख्यात।
जैन-धर्म चमका गए, जम्बू के पश्चात्॥

'शय्यंभवाचार्य' धन्य ! अल्प 'मनक'[1]–वयजान।
'दशवैकालिक' का किया, जिनने शुभ निर्माण॥

'चन्दन' मगध, विदेह औ– अग देश मंझार।
'यशोशद्र' आचार्य वर, कीना अथक प्रचार॥

---

[1] *मनक मुनि शय्यभवाचार्य के पुत्र भी थे और फिर शिष्य वन गए। विशिष्ट ज्ञान से उनकी षट मास आयु शेष जानकर उनके कल्याण के लिये पूर्व साहित्य मे से दशवैकालिक सूत्र का सकलन किया। जिसका रचना-काल वीर-निर्वाण स० ८२ के आस-पास माना जाता है।*

‘वज्रसेन’ आचार्यवर, पुण्यवन्त – गुणवन्त ।
शासन जिनसे जैन का, था चमका अत्यन्त ।।

श्री ‘देवर्द्धिगणी’ गुणी, ‘क्षमाश्रमण’ पदधार ।
नगर ‘वल्लभी’ में किया, सम्मेलन सुखकार ।।

मूर्ति-पूजा का नही, आगम बीच विधान ।
‘चन्दन’ ‘लौकाशाह’ ने, साफ किया ऐलान ।।

‘चन्दन’ मिले उदाहरण, और न ऐसा अन्य ।
किया सिहासन शूलि का, ‘सेठ सुदर्शन’ धन्य !!

‘चन्द्रगुप्त’ थे सुप्त जब, अर्द्ध निशा दरम्यान ।
देख स्वप्न सोलह हुए, अय ‘चन्दन हैरान ।।

‘चन्दन’ ‘केशी श्रमण’ से, पाकर बोध-विवेक ।
भूप ‘प्रदेशी’ नास्तिक, बना आस्तिक-नेक ।।

यात्रा, यज्ञादिक-विविध, ‘चन्दन’ प्रश्न चलाय ।
‘सोमल’ श्रावक ‘वीर’ का, बना बहुत हर्षाय ।।

‘चन्दन अस्सी सहस सब, जिसके था गोवंश ।
सु-श्रावक ‘आनन्द’ ज्यों, पक्षीगण मे हंस ।।

पुण्यपर्व-पच्चीसी

चैत्र कृष्णा अष्टमी, जब-जब भी बस आय।
'ऋषभ-जयन्ती'[1] जगत यह, 'चन्दन' मुदित मनाय ॥

जिसे भूलते जा रहे, भारतवासी लोग।
'चन्दन' 'सम्वत् विक्रमी', नही भूलने योग ॥

'राम-जयन्ती' आपको, कहती बनना राम।
जुल्म और अन्याय का, कभी न लेना नाम ॥

'वीर-जयन्ती' 'वीर' का, लाई शुभ सन्देश।
बनो वीर 'चन्दन' सभी, सुनो वीर - उपदेश ॥

'चन्दन' 'अक्षय तीज' है, तीजों की सरताज।
वर्षी तप पूर्ण किया, 'ऋषभदेव' जिनराज ॥

---

[1] भगवान आदिनाथ (ऋषभ देव) आर्य सस्कृति के स्रष्टा, वर्तमान अवसर्पिणी-काल मे जैन धर्म के प्रथम सस्थापक, परम दार्शनिक और मानव-सभ्यता के जन्मदाता के रूप मे प्रसिद्ध है।

—स्वर्णजयन्ती ग्रन्थ

भाई - भंगिनी-प्रेम का, जो 'चन्दन' त्योहार।
'रक्षाबन्धन'–नाम से, जाने सब ससार ॥

परम प्रिय तो न्याय था, परम प्रिय थी गाय।
'जन्म-अष्टमी' कृष्ण की, 'चन्दन' याद दिलाय ॥

लोभ, क्रोध न काम हो, 'चन्दन' छल नहिं गर्व।
समता की है साधना, शुभ 'पर्युपण-पर्व' ॥

शुभ 'सम्वत्सरी पर्व' का, है 'चन्दन' सन्देश।
'क्षमा दीजिये - लीजिये, तजकर वैर - विद्वेप' ॥

'चन्दन' आकर 'दशहरा', कहता है प्रतिवर्ष।
रावण के घर शोक तो, रामचन्द्र - घर हर्ष ॥

आई कार्तिक की अमा, हुआ 'वीर'– निर्वाण।
'महावीर-सम्वत' तभी, 'चन्दन' चला महान ॥

अमावस कातिक गए, 'वीर' मुक्त मझार।
तब से 'दीवाली' हुई, जैन - धर्म - अनुसार ॥

अय 'चन्दन' दीपावली, आ कहती हर साल।
'ज्ञान-दीप प्रज्ज्वलित कर, अन्तर तमस निकाल ॥

पर्युषण-पच्चीसी

◆

महावीर-सन्देश ले, आया पर्व[१] महान।
ग़फ़लत तज कर कीजिए, अय 'चन्दन' कल्याण॥

---

[१] *पर्व शब्द का अर्थ है—परम पवित्र दिवस। वैसे तो जीवन का प्रत्येक दिवस पवित्र होता है, परन्तु आज का दिवस तो विशेष रूप से पवित्र है। पर्व दो प्रकार के होते हैं—"लौकिक और लोकोत्तर।" लौकिक पर्व का अर्थ होता है—हर्ष, उल्लास और आमोद-प्रमोद। वह शरीर की सीमाओं मे ही बन्द रहता है। शरीर मे स्थित चेतनामय ज्योति तक वह नहीं पहुच पाता। लौकिक पर्व मनुष्य के शरीर का ही पोषण करता है उसके मन और आत्मा का नहीं। इसके विपरीत लोकोत्तर पर्व शरीर की सीमाओं से ऊपर ज्योतिर्मय चेतना के दिव्य-लोक मे पहुच कर मनुष्य को आत्म-रत, आत्म-संलग्न और आत्म-प्रिय बनाता है। इस शरीर का शोषण भले ही हो, परन्तु आत्मा का तो पोषण ही होता है। शरीर को भोजन भले ही न मिले, किन्तु आत्मा को तो तप, त्याग, सयम, वैराग्य और विवेक का भोजन मिलता ही है। शरीर का आधार भौतिक है। अतः उसका भोजन भी भौतिक पदार्थों का ही होता पर, आत्मा तो एक दिव्य शक्ति है। अत उसका भोजन भी दिव्य एव अमृतमय होता है। इन पर्व दिवसों मे आप लोग भौतिक भोजन छोडकर आध्यात्मिक भोजन करते है, जिससे आपके चित्त को आत्मा को पुष्टि एव तुष्टि मिलती है। यही लोकोत्तर पर्व की मूल-भावना है।*

राष्ट्रसन्त उपाध्याय श्री अमर मुनि जी के—
'पर्युषण-प्रवचन' मे।

'अर्जुनमाली' का न क्या, सुना चरित्र विचित्र ?
परम क्षमा से हो गये, 'चन्दन' परम पवित्र ॥

'ऐवन्ता' की सरलता, सीना दे जो वेध ।
जड़ से ही 'चन्दन' मिटे, जनम-मरण-दुख-खेद ॥

ज्ञान-ध्यान के कीजिये, चाहे लाख उपाव ।
कपट-कुटिलता की तरे, कभी न लेकिन नाव ॥

महावीर के आप सब, भक्त बने मजबूत ।
'सेठ सुदर्शन' सामने, रहा खड़ा क्या भूत ?

अर्जुन का तन त्याग कर, गया देवता भाग ।
इकदम ठण्डी हो गई, जलती हिंसा-आग ॥

धन्य! आजके श्रावको ! बने महा डरपोक ।
मड़ी—मशानी-क़बर को, देते फिरते धोक !!

दशा देख कर आपकी, आती बहुत दया ।
आत्मिक बल वह 'वीर' का, कहिये किधर गया ?

आत्म बल प्रगटाइये, ऐसा तेज प्रचण्ड ।
निकट न आए आपके, ढोंग - पाप - पाखण्ड ॥

विवाह-बावनी

चलते रहने को सदा, सदाचार की राह।
'चन्दन' नर औ नारियां, दोनों करे विवाह[1]॥

---

[1] जो साधक अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन नहीं कर सकता, किन्तु दुराचार से बचकर सन्तोष धारण करना चाहता है, उस गृहस्थ को विवाह की रस्म अदा करनी पडती है। जो विवाह किया जाता है, वह सदाचार की रक्षा के लिये किया जाता है—न कि भोग-पूर्ति के लिये। पुरुष और स्त्री के लिए आजीवन साहचर्य को ही 'विवाह' कहते हैं। यह साहचर्य कामवासना के तीव्रोदय को शान्त करने की दव। है। यह साहचर्य तभी निभता है जबकि एक दूसरे के स्वभाव, गुण, आयु, बल, वैभव तथा सौन्दर्य आदि को दृष्टि मे रखा जाय। उपर्युक्त गुणों से युक्त हो उनका पचों की साक्षी से पाणिग्रहण करना ही 'विवाह' है।

श्रावक का चौथा अनुव्रत है—स्वदार-सन्तोषित। जिसने स्वपत्नी पर सन्तोप धारण कर लिया वह भी ब्रह्मचारी है। इस व्रत का नाम 'स्वदार-सन्तोष' है—'स्वदार-रमण' नहीं, क्योंकि स्वदार-रमण मे स्वच्छन्दता को स्थान है, परन्तु स्वदार-सतोष मे स्वच्छन्दता को स्थान नहीं।

जो अपनी स्त्री पर सन्तोष रखता है—वह अन्य स्त्रियों पर कैसे आसक्त हो सकता हे? जो कर्मचारी अपने वेतन पर ही सन्तुष्ट है, वह

सभी समझते धन नही, अन्त चलेगा साथ।
फिर भी मरते माल पर, देखो तो दिन-रात !!

प्रेम नही, पैसा हुआ, कितना आज प्रधान !
सुख के बदले बन रहे, दुख के यों सामान ॥

देते बिल्कुल कम नहीं, बेटी को मां-बाप।
बिन मांगे ही बहुत कुछ, देते अपने आप ॥

महा लालची मन मगर, करते नही यक़ीन।
'चन्दन' मुख से मांगकर, है बन जाते हीन ॥

'चन्दन' दौलत लूट की, कब तक देगी साथ ॥
स्वय पड़ेंगे आप को, अन्त हिलाने हाथ ॥

दो घर वालो का जहां, बढता प्यार अथाह।
कहना 'चन्दन' चाहिये, उसको असल विवाह ॥

सुने साफ यह आप जी ! 'लोभ पाप का बाप'।
'चन्दन' आख़िर लालची, करते पश्चाताप ॥

''उत्तम जन' बन मंगते, मांगें नहीं दहेज।
'चन्दन' उन्हें दहेज़ से, सख्त सदा परहेज़ ॥

शोर, शराबें, झगड़े, नये-नये उत्पात ।
'चन्दन' वनिता वर्ग का, क्या बढ़िया है साथ ?

बचे हुए कुछ थे बड़े, चढ़ा उन्हें भी जोश ।
वे भी अपने अब अहो ! खो बैठे है होश ।।

न थे सरल सम्भालने, अरे ! अकेले मर्द ।
'चन्दन' मगर खरीद यह, नया लिया सिर दर्द ।।

संख्या सब ही कह रहे, और घटाओ और ।
छोटी हो बारात पर, कहिये तो किस तौर ।।

मानें चाहे आप न, माने मेरी बात ।
ठीक न लेकिन देवियां, वर-यात्रा के साथ ।।

होश मन्द यदि आप हों, करें अभी से होश ।
ऐसा न हो आप को, हो पीछे अफ़सोस ।।

पांच-सात से अधिक नहिं, बन्दे जिस में जायं ।
समझदार नर-नार सब, अच्छा उसे बतायं ।।

छोटी की जो जगह पर, जुड़े बड़ी बारात ।
दुखिया दोनों पक्ष हों, देख-देख उत्पात ।।

होगा जिसके पठन से,
पाठक - वर्ग निहाल।
वह 'चन्दन - दोहावली',
लिखता 'चन्दनलाल'॥

हंसी जगत से यदि नहीं, करवानी है व्यर्थ।
छोड़ दीजिये झगड़ा, जिसका कुछ नहिं अर्थ ॥

'चन्दन' जिसका नाचता, बाप बीच बाज़ार।
डालें क्यों नहि झगड़ा, उसके बरखुरदार ॥

पड़ती ज्यों-ज्यों ढोल पर, उलटी 'चन्दन' चोट।
मूर्ख खूब उछालते, उछल-उछल तब नोट ॥

कोई किसी स्कूल को, अगर माँग ले दान।
सारी ही बारात की, निकल जायगी जान ॥

मंगलमय सु-विवाह को, कहते है जब आप।
भ्रष्ट रिकार्ड फिर बजा, क्यो करते है पाप ?

कामुकता है फैलती, सुन-सुन गन्दे गीत।
गन्दे गीतों की अतः, बहुत बुरी है रीत ॥

जो चाहो 'चन्दन' बने, जीवन यह खुशहाल।
पत्नी को पीटो नही, नहि निन्दो ससुराल ॥

पत्नी को गृह-लक्ष्मी, समझ सदा दें मान।
'चन्दन' घर को वे पुरुष, पाते स्वर्ग समान ॥

वचन-बहत्तरी

'चन्दन' धर्म, अधर्म का, हो वाणी से ज्ञान ।
वाणी नहि होती अगर, होता सब सुनसान ॥

---

1. *मानव-जीवन मे भाषा (वाणी-बोली) का बडा महत्त्व है । इसके द्वारा ही व्यक्ति के कुलीन, बडप्पन तथा स्वभाव एव विचारों का ज्ञान हो जाता है। भाषा, वाणी, मीठी, वचन आदरसूचक तथा संयमित होने से जीवन व्यवहार तथा आचार भी सुन्दर रहता है । अन्यथा भाषा-सयम के अभाव से घर, समाज, देश मे सर्वत्र कलह अप्रतीति और असमाधि दोष उत्पन्न हो जाते है, इसलिये नैतिक विज्ञान का आग्रह भाषा-सयम के लिये पहिले है । इस मे शिष्टाचार तथा आध्यात्मिकता दोनो का समावेश है ।*

यह भाषा चार प्रकार की है—सत्य, असत्य व्यवहार और मिश्र । इन मे से सत्य और व्यवहार भाषण योग्य है, असत्य तथा मिश्र कलह सन्देह, अविश्वास आदि के हेतु होने से त्याज्य है । व्यवहार और सत्य भी जो सावद्य है उस के सम्भाषण का निषेध है । इन का भी हित मित तथा मधुर होना आवश्यक है ।

उपर्युक्त भाषा-सयम मनुष्य मात्र के लिए है, किन्तु श्रावकत्व के कारण मनुष्य के दायित्व का रूप कुछ अधिक बडा हो जाता है अतः

निन्दा, चुग़ली, गालियां, झूठ, मर्म की बात।
'चन्दन' खोटे वचन सब, करें महा उत्पात ॥

'चन्दन' जिसकी जीभ है, कैंची–कुलिश—कटार।
ख़तरनाक नहि दूसरा, कोई भी नर-नार ॥

वाणी—सरल-स्पष्ट हो, संयत और सुबोध।
'चन्दन' वाणी ख़ाक जो, करे अर्थ अवरोध ॥

तिरस्कार के, क्रोध के, देते वचन उबाल।
वचन—मान-सम्मान के, दें मन मगर पिघाल ॥

देखा 'चन्दन' ढूण्ढ कर, अचला औ आकाश।
नही किसी में और जो, मीठे वचन मिठास ॥

भ्रमर-वृत्ति से देखिये, मीठा मधु का स्वाद।
मगर मक्षिका–वृत्ति से, 'चन्दन' मिले मवाद ॥

वाणी की यह बात भी, रहे सर्वदा याद।
नही काटने दौड़िये, तज करके मर्याद ॥

नहि 'चन्दन' घबराइये, छटपटाइये नही।
गौरवपूर्ण ढंग की, हो वाणी हर कही ॥

स्वर पर अय 'चन्दन' नही, जिनका कुछ अधिकार ।
विनय-बात में भी लगें, डाल रहे फटकार ॥

न तो दागें तोप ही, न ओले बरसांय ।
शब्दोच्चारण के समय, मानस स्वस्थ बनाय ॥

रूपवती भी भामिनी, अगर कर्कशा होय ।
'चन्दन' कोई भी कभी, नहि सत्कारे कोय ॥

कोई अगर अ-सुन्दरी, मधुर भाषिणी होय ।
अधिक-अधिक सत्कार दे, अय 'चन्दन' हर कोय ॥

व्यक्तित्व की सौम्यता, शील रसीले वचन ।
नहि किसका करते कहो, अय 'चन्दन' मन हरण ॥

लखी न किसने कोकिला, काली-कुटिल-कुरूप ।
'चन्दन' मीठे वचन से, उसको पालें भूप ॥

जब भी मुखड़ा खोलता, और बोलता काग ।
उसका भी कोई कभी, सरस ! सराहे राग ?

शीतल जल से जिस तरह, मिटता दूध-उफान ।
मधुर वचन से उसी तरह, थमे क्रोध-तूफ़ान ॥

सारे ही संसार पर, मार देखिये ध्यान ।
झूठे, निन्दक नरन का, कहीं नहीं सम्मान ॥

रहे वार्तालाप में, ध्यान सत्य की ओर ।
रहे याद यह बात भी, हो नहि सत्य कठोर ॥

जहां प्रश्न हो न्याय का, खपता सत्य कठोर ।
लेकिन बिन मज़बूरियां, देखो नहिं उस ओर ॥

निज-पर-हित रख ध्यान में, जो भी बोला जाय ।
'चन्दन' असली अर्थ में, सत्य-स्वरूप कहाय ॥

कोई हित की वार्ता, अगर कहे साल्हाद ।
कभी न 'चन्दन' चूकिये, कीजे साधुवाद ॥

तजें करेले नीम-से, कड़वे जो अत्यन्त ।
'चन्दन' मिश्री-से वचन, सभी सराहें सन्त ॥

प्रेम बढ़ाना आपको, जिनके भी हो साथ ।
बहुत ध्यान से मान से, सुनें उन्हीं की बात ॥

अपनी तो थोडी कहें, सुने उन्हों की अधिक ।
प्रबल विरोधी आपके, सन्मुख सके न टिक ॥

पाते आदर अधिक नहिं, लिए उधार विचार ।
नई सूझ का बूझ का, है 'चन्दन' सत्कार ॥

'चन्दन' अपना काट लें, कहीं न आप बयान ।
सोच-समझ कर दीजिये, हर इक अतः प्रमाण ॥

'चन्दन' धीरज से सदा, कीजे शब्द-प्रयोग ।
जिससे जग में यश मिले, समझ सकें सब लोग ॥

बनिये और वकील को, देखो लोचन खोल ।
एक-एक हैं बोलते, वचन किस तरह तोल ॥

कहो वकीलो की तरह, 'चन्दन' वचन स-तर्क ।
मगर उन्हों-सी कर जिरह, नहीं निकालें अर्क ॥

सजती है 'चन्दन' यथा, लज्जा से कुल-नार ।
शील और सौजन्य त्यों, भाषा के श्रृंगार ॥

'चन्दन' की यह बात भी, नहीं भूलने योग ।
बहु वक्ता होते सदा, हीन विचारी लोग ॥

शब्दाडम्बर छोड़ कर, सार-सार ही बोल ।
'चन्दन' बनकर जौहरी, हीरे - मोती तोल ॥

जहां ज़िक्र हो हास्य का, भावुक वहां रहें।
नपी-तुली व्यापार में, लेकिन बात कहें॥

'चन्दन' हास्य-विनोद के, शब्द हंसाएं नित्त।
लेकिन चिन्ता-दुःख के, सदा दुखाएं चित्त॥

॥ ७२ दोहे सम्पूर्ण ॥

शिक्षा दें गुरुदेव जी, चाहे कभी कठोर।
'चन्दन' हित ही जानकर, रहें सदा कर जोड़ ॥

भेदभाव गुरुदेव से, जो रखते नादान।
अय 'चन्दन' उनका नहीं, तीन काल कल्याण ॥

गुरु की निन्दा जो करें, करें और अपमान।
'चन्दन' चौरासी रुले, वे मूर्ख - नादान ॥

गुरु के तप को-त्याग को, करें भग नहि आप।
वरना 'चन्दन' आपको, बड़ा लगेगा पाप ॥

गुरु-चरणों का जो बना, 'चन्दन' सच्चा दास।
तीन लोक की सम्पदा, उस सेवक के पास ॥

जो है कामी, लालची, जो है दुनियादार।
तीन काल भी वह कभी, गुरु नहि तारनहार ॥

माया-ममता में बंधा, गुरु ही हो जो आप।
दूर करेगा आप के, कहिये कैसे पाप ?

भवजल तारणहार हैं, अय 'चन्दन' अतएव।
वही वन्दना कीजिये, जहां मिलें गुरुदेव ॥

जैन मुनि

जीवों की हिंसा नही, करते जैनी सन्त ।
मनसा - वाचा - कर्मणा, 'चन्दन' करुणावन्त ।।

कभी असत्य नहिं बोलते, वाणी सुधा समान ।
'चन्दन' जैनी सन्त की, यह पक्की पहचान ।।

'चन्दन' चोरी के निकट, नही भूल भी जायं ।
महाव्रत यह तीसरा, निर्मल नित्य निभाय ।।

विषय-विकार-श्रृंगार से, रह कर दूर अत्यन्त ।
ब्रह्मचर्य निर्दोष ही, निश-दिन पालें सन्त ।।

गेह-गलीचा-खाट औ- खेत - बगीचा - बाग़ ।
'चन्दन' जैनी सन्त के, धन-दौलत का त्याग ।।

अन्धा खाना रात का, आगमकार बताय ।
सभी सन्त नहिं भूल भी, कभी रात को खाय ।।

मुनि-महिमा

●

जिसके तप का, त्याग का, कोई भी नहिं अन्त ।
मिलना मुश्किल हर जगह, 'चन्दन' सच्चा सन्त ॥

शील, सत्य, सन्तोष से, शोभित जो अत्यन्त ।
कल्प विटप भू-लोक का, 'चन्दन' सच्चा सन्त ॥

'चन्दन' महिमा सन्त की, रूप-रंग नहि राग ।
महिमा सच्चे सन्त की, ज्ञान, त्याग, वैराग ॥

प्रेम पगे, तप में लगे, 'चन्दन' सगे समान ।
भाग्य जगे तब ही मिलें, ऐसे सन्त महान ॥

अय 'चन्दन' साधू वही, सहनशील हो धीर ।
साधू क्या जो हो नहीं, सागर सम गम्भीर ॥

माया-ममता में फंसा, जो ढूंढे भगवन्त ।
कोल्हू का ही बैल है, 'चन्दन' ऐसा सन्त ॥

मानव

'चन्दन' जिससे आपका, जीवन बने विराट।
पढ़ना पहले चाहिये, मानवता का पाठ ॥

अधिक-अधिक जिससे बने, औरों का कल्याण।
सर्व श्रेष्ठ 'चन्दन' वही, है होता इनसान ॥

अय 'चन्दन' जिस पुरुष का, बाहर-भीतर एक।
दुनिया में नहिं दूसरा, उस - सा कोई नेक ॥

सच्चा मानव वह जिसे, मानवता से प्यार।
अभिनन्दन 'चन्दन' करे, सारा ही संसार ॥

जीना भी है इक कला, जिसको भी बस आय।
सुर दुर्लभ जीवन वही, 'चन्दन' सफल बनाय ॥

शिक्षित और सु-सभ्य जो, अपने को प्रगटाय।
'चन्दन' अपने आप पर, पहले क़ाबू पाय ॥

मिर्च - मसाला - दूध में, करें मिलावट आम ।
उसको भी इनसान का, कहिये क्या दें नाम ?

दुराचार से दोस्ती, महा मलिन मन-बुद्ध ।
मानव कहने के उसे, हम है सख्त विरुद्ध ॥

'चन्दन' लोभी स्वार्थी, दिखें अधिक अब लोग ।
मानव मुश्किल से मिले, मानव कहने योग ॥

नाचें नर बाज़ार में, रही कहां फिर लाज ?
चला किधर है जा रहा, 'चन्दन' आज समाज ?

'चन्दन' जो हंस-हंस करे, यौवन में अपराध ।
आखिर रोता वृद्ध हो, कर-कर उनको याद ॥

पहले - पहले आदमी, मदिरा पी हर्षाय ।
पीछे मदिरा ही उसे, अय 'चन्दन' पी जाय ॥

अण्डे-मांस चबाय जो, भूल अहिंसा धर्म ।
नर्कों में दुःख पांयगे, मानव वे बे-शर्म ॥

दया, सत्य से, शील से, जिसे न 'चन्दन' प्यार ।
नर्कों में जा खायगा, यमदूतों की मार ॥

नारियां

नारी हो तो नेक हो, सीता सती समान।
'चन्दन' जीवन वार जो, रखती कुल की आन॥

जिसमें 'चन्दन' हो दया, जिसमें विनय-विवेक।
बिना पुण्य के नहिं मिले, नारी निश्छल–नेक॥

भामनियां जो पतिव्रता, रहें फटे भी हाल।
कौन उन्हों की कर सके, समता 'चन्दन लाल'॥

'चन्दन' जीवन वार कर, रखी धर्म की टेक।
'अबला' सबला को कहे; देखो पुरुप-विवेक!!

शान्ति,शील,शम, सत्य की, जगा हृदय में जोत।
अय 'चन्दन' सन्नारियां, करती कुल उद्योत॥

नारी को विश्वास के, कहता कौन अयोग।
नारी-सा विश्वस्त तो, अधिक न कोई लोग॥

सन्नारियां

गज-हौदे पर मुक्ति है, जिसकी जग विख्यात ।
धन्य! ऋषभ भगवान की, 'मरुदेवी, जी' मात ॥

पिता जिन्हों के पूज्य थे, आदिनाथ जिनराज ।
'चन्दन' 'ब्राह्मी', 'सुन्दरी', सतियों में सिरताज ॥

'चन्दन' जिसने शीलहित, सकट सहे महान ।
'चन्दनबाला'-सी सती, देखी-सुनी न कान ॥

भूप शतानिक की प्रिया, 'मृगावती' शुभ नाम ।
संयम ले कर पा लिया, 'चन्दन' अविचलधाम ॥

जिसकी पावन कोख से, 'चन्दन' जन्मे राम ।
अरुण-चन्द्र-सा चमकता, 'कौशल्या' का नाम ॥

ममता, समता; शील, शम, सेवा, सत्य-निधान ।
'चन्दन' दुर्लभ देवियां, 'सीता' सती समान ॥

सती 'सुभद्रा' पर लगा, 'चन्दन' झूठ कलंक।
चलनी में भर नीर तब, खोले द्वार निशंक॥

समाधान जिनका किया, महावीर भगवान।
प्रश्न 'जयन्ती' के अहो ! निरे ज्ञान की खान॥

चला भगवती सूत्र में, जिसका शुभ अधिकार।
गाथा-पत्नी 'रेवती' जैसी दुर्लभ नार॥

शादी के भी बाद में, जिसने जीता काम।
'विजयाकुंवरी' कर गई, रोशन जग में नाम॥

खेले जिसकी गोद में, महावीर भगवान।
'तृशला'-सी अब मां कहां, दुनिया के दरम्यान॥

जिनको सुनकर नीद से, जागे नृप इषुकार।
अय राणी 'कमलावती'! तेरे धन्य ! विचार॥

अय 'चन्दन' घनश्याम के, महलों का शृंगार।
राणी जी 'पद्मावती', हुई जगत से पार॥

'गोरी' राणी के जगा, जब मन में वैराग।
दुनिया की सुख-सम्पदा, क्षणभर में दी त्याग॥

समय

●

समय बराबर धन नहीं, 'चन्दन' जग दरम्यान।
पल भी खोएं एक नहि, ज्ञानवान - गुणवान ।।

समय बहुत अनमोल है, थोड़े में कहे बात।
हर आगत से बात यह, कहता था सुकरात ।।

आगे बढ़ स्वागत करें, प्राज्ञ समय का सब।
मूर्ख पीछे भागते, मिले मगर वह कब ।।

पीछे से खल्वाट है, आगे सिर पर बाल।
पकड़ें आगे से अतः, इसको "चन्दनलाल' ।।

'चन्दन' पीछे दौड कर, समय न पकडा जाय।
जो मूर्ख ऐसा कहे, शीश पकड़ पछताय ।।

दिनकर स्वामी समय का, चलने का अभ्यस्त।
एक आयु का भाग ले, होता हर दिन अस्त ।।

---

१. अमर्सन भी यही कहा करता था।

‘कल करना जो आज कर; कल को कहते ‘काल’।
कभी प्रतीक्षा नहिं करें, ‘कल’ की ‘चन्दनलाल’॥

आज ‘आज’ तो हाथ है, पता न कल क्या होय।
अय ‘चन्दन’ मतिमान जन, अतः ‘आज’ नहिं खोय॥

जहां खड़े हैं आप, है– जीवन की बस राह।
सफ़र यहीं से कीजिये, मेरी मान सलाह॥

आंखों का इस देह में, है यों उच्च स्थान।
‘चन्दन’ जिससे दूर तक, देख सके इनसान॥

वायुयान-युग आज है, गाड़ी युग नहि जान।
इसकी ‘चन्दन’ चाल तू, चातुर बन पहचान॥

होना ‘चन्दन’ कालज्ञ, गुण है एक महान।
त्रिकालज्ञ कहला गए, कई एक विद्वान॥

‘चन्दन’ यह तो बात है, सूरज के सम स्पष्ट।
नष्ट समय उसको करे, करे समय जो नष्ट॥

मूल्यवान है जगत में, सोना - हीरे - लाल।
सबसे समय अमोल है, ‘चन्दन’ करें खयाल॥

मन

मन की दुनिया है अजब, रचे अनेकों खेल।
गगन-कुसुम यह तोड़ता, खींचे वालू - तेल ॥

एक जगह पर चौकड़ी, बैठे मुश्किल मार।
चंचल 'चन्दन' मन बड़ा, दौड़े बारम्वार ॥

करती 'काया' पाप कम, बहुत 'वचन' नादान।
सर्वाधिक यह 'मन' करे, 'चन्दन' है हैरान ॥

दिल को दास बनाइये, बनिये मत दिल-दास।
'चन्दन' कारज आपके, होंगे सारे रास ॥

खाली मन मत छोड़िये, खाली खींचे खाल।
काम इसे शुभ सौंपिये, कोई 'चन्दनलाल' ॥

स्वर्ग-मुक्ति में तो गया, कोई 'चन्दनलाल'।
बहुतों को पर ले गया, मन पापी पाताल ॥

माशा सोना मांगते, जगी ताज की चाह ।
बने 'कपिल' मन जीत पर, शाहों के भी शाह ॥

नहीं पहाड़-उजाड़ में, बैठा बन में नाहि ।
'चन्दन' प्यारा ढूढिये. अपने ही मन माहि ॥

जब तक मन में है भरे, कूट - कपट - तूफ़ान ।
'चन्दन' कितना नाम रट, नहि होगा कल्याण ॥

मन माला नहिं फेरता, फेरें केवल हाथ ।
इस से तो 'चन्दन' कभी, बने न बिगड़ी बात ॥

माला तो मन की भली, बिन मन माला भार ।
'चन्दन' चाहे मुक्ति जो, चंचल मन को मार ॥

पढ़ें मन्त्र मन शान्तकर, साथ विचारें अर्थ ।
'चन्दन' सुमरन आपका, कभी न होगा व्यर्थ ॥

जो चाहें सुख-सम्पदा, जो चाहें कल्याण ।
निश्चल-निश्छल मन जपें,अय 'चन्दन' भगवान ॥

जिस बिन अय 'चन्दन' नही,तीन काल कल्याण ।
देह-शुद्धि से है बड़ी, मन की शुद्धि सुजान !

दान

औरों का उत्थान हो, हो अपना कल्याण ।
इसी भाव से जो दिया; कहें उसे ही 'दान'[1] ।।

यह भी कहते है कई, भारत के विद्वान् ।
'चन्दन' जाए जो दिया, वही कहाए 'दान'[2] ।।

नेक नरन ने नेक दी, 'चन्दन' सहज सलाह ।
अर्पण[3] करना सीखिए, पाने की जो चाह ।।

लेना जितना सहज है, देना कठिन महान ।
दिये बिना 'चन्दन' मगर, मिलें नहीं भगवान ।।

सोच-समझ कर दीजिए, हो जिससे कल्याण ।
शुभ कामों में जो लगे, वह ही सच्चा दान ।।

---

[1] *अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानम् ।—तत्त्वार्थ सूत्र अ० ७/३८*

[2] *दीयते इति दानम् ।*

[3] *दान सविभाग. ।—आचार्य शकर*

मंगलकारी काम हो, किए मंगलाचरण ।
अत आज 'चन्दन' गहे, प्यारे प्रभु की शरण ॥

दान वही 'चन्दन' हरे, जो कि कष्ट, अज्ञान ।
दुर्गुण-पोषक दान को, समझो पाप महान ।।

जिसमें यश की-कामना, कहें उसे नहिं दान ।
दान, मान 'चन्दन' कभी, रहें न एक स्थान ।।

धन संचय से नहिं धनी— पाता है सम्मान ।
है 'चन्दन' संसार में, गौरव-दाता दान ।।

आवश्यकता हो जिसे, उसको[1] ही दें दान ।
आवश्यकता - हीन को, करे दान नादान ।।

'चन्दन' अन्धे पुरुष को, दर्पण बिल्कुल व्यर्थ ।
गंजे को कंघी भला, देने का क्या अर्थ ?

भोजन भूखे को भला, भरे पेट को पाप ।
औषधि रोगी को यथा, 'चन्दन' सोचे आप ।।

वही आपका है जिसे, आप करेंगे दान ।
'चन्दन' बाक़ी तो सभी, औरों का सामान ।।

---

[1] *दरिद्रान् भर कौन्तेय । मा प्रयच्छेश्वरे धनम् ।*
व्याधितस्यौषधं पथ्य, नीरुजस्य, किमौषधम् ?

—हितोपदेश

दान-दान नहिं एक-से, दान-दान में फ़र्क ।
मिले एक से मुक्ति तो, मिले एक से नर्क ।।

निर्मल मन से ही दिया, दान करे कल्याण ।
'नागश्री' भव-भव भ्रमी, देकर खोटा दान ।।

तामस, राजस, सात्विक, कहती गीता दान ।
तीनों पर ही दीजिये, 'चन्दन' गहरा ध्यान ।।

देश-काल और पात्र का, ठीक-ठीक कर ज्ञान ।
अनउपकारी को दिया, ही है 'सात्विक' दान ।।

जो उपकारी को दिया, या फल का अरमान ।
देने से हो दिल दुखी, है वह 'राजस' दान ।।

देश-काल के ज्ञान बिन, अथवा बिन सम्मान ।
दिया अपात्र को तथा, तीनों 'तामस' दान ।।

जैन, बौद्ध का, हिन्दुओं–का है यह ऐलान ।
अन्न, अभय औ ज्ञान का, सबसे दान महान ।।

अभयदान औ ज्ञान औ-औषध औ आहार ।
दान कहा कुछएक ने, 'चन्दन' चार प्रकार ।।

बदले में उपकार के, देता जो इनसान।
अय 'चन्दन' विद्वान सब, कहें उसे 'कृत' दान ॥

किसी मृतक के शोक में, किया जाय जो पुण्य।
"चन्दन' उसको ही गुणी, दान कहे 'कारुण्य' ॥

दिया जाय जो सामने, रख कर प्रत्युपकार।
दान 'करिष्यति' है वही, 'चन्दन' कहे पुकार ॥

हिसा - चोरी - झूठ औ— दुराचार के कर्म।
जिससे हों 'चन्दन' वही, जानो दान 'अधर्म' ॥

दश दानों का जो किया, किंचित यह विस्तार।
भला-बुरा है कौन सा, पण्डित करे विचार ॥

बिना दान दुश्वार है, श्रावक का कल्याण।
चौथा शिक्षाव्रत अतः, है सिखलाता दान ॥

पूज्य तीर्थङ्कर हुए, जितने जग दरम्यान।
सब ने ही तो था दिया, 'चन्दन' वर्षी - दान ॥

'ऋषभदेव' के जीव ने, पहले भव मझार।
दिया दान जो सन्त को, पाई समकित सार ॥

शासक

कच्चा हो नहि कान का, रसिया नहि वाचाल ।
भावुक नहिं उद्दण्ड हो, शासक 'चन्दनलाल' ।।

अय 'चन्दन' न्यायी नहीं, अकलमन्द नहि और ।
न निष्ठा कर्त्तव्य की; शासक वह किस तौर ?

शोषण नहि, पोषण करे, उजड़ा नगर बसाय ।
'चन्दन' दे न धमकियां, शासक वही कहाय ।।

अनुशासन के नियम सब, शासक खुद अपनाय ।
जिससे जनता आप ही, उन पर चलती जाय ।।

अनुशासन को तोड़ दे, शासक हो जव आप ।
'चन्दन' उसके राज्य में, क्यों न पनपे पाप ।।

पक्षपात से जो बचे, शासक सच्चा होय ।
बने नही दुस्साहसी, गुण गावे हर कोय ।।

विद्यार्थियों से

प्यारे छात्रो ! देश को, है तुम पर अभिमान ।
सभ्य-भव्य बन कीजिये, जीवन का निर्माण ॥

जिसमें विनय, विवेक, शम, शील, सत्य, सन्तोष ।
उसी छात्र का ही बढ़े, विद्या धन का कोष ॥

लेकर अच्छे अंक जो, होना चाहो पास ।
फ़िल्म, सुरा, सिगरेट के, कभी न फटको पास ॥

वैरी विद्या के बड़े, तोड़ - फोड़, हड़ताल ।
दोनों ही से दूर तुम, रहना 'चन्दन लाल' ॥

दया, सत्य से, प्रेम से, रख कर पूरा प्यार ।
दुराचार को दूर से, ही देना दुत्कार ॥

हिसा, चोरी, झूठ, छल, देना द्वेष विसार ।
आपस में रखना सदा, वहन-वन्धु-सा प्यार ॥

पश्चिम-पुजारी

'चन्दन' चाहे लाख है, हिन्द हमारा देश ।
प्यारा प्राण समान पर, हमे विदेशी वेश ! !

किसी फिरगी के कभी, दिखा न हिन्दी-वेश ।
'चन्दन' पर यह नक़लची; धन्य ! हमारा देश ॥

अय हिन्दी ! अंग्रेज का, क्यों भरता है रूप ।
रूप बदल कोई बना, अभिनेता क्या भूप ?

हिन्द देश की ही सजे, तव तन पर हर चीज।
हिन्द देश को भूलना, अच्छा नहीं अजीज !

भूलेगा जो हिन्द को, मूले गा मा-वाप ।
भूल जायगा एक दिन, फिर तो अपना आप ॥

जिसको प्यारा प्राण से, 'चन्दन' अपना देश ।
तन पर नहीं सजायगा, कभी विदेशी वेश ॥

अधिक पढ़े हिन्दी यहाँ, कम इंगलिश-विद्वान् ।
छोड़ अधिक,कम के लिये, बोर्ड क्यों श्रीमान् ?

ऊपर हिन्दी, बाद में. चाहे इंगलिश होय ।
ऐसे बोर्ड को बुरा, कहे न 'चन्दन' कोय ॥

पहले अपना देश हो, सभी विदेशी बाद ।
उत्तम पुरुषों की यही, है 'चन्दन मर्याद ॥

तन,मन,धन 'चन्दन' सभी, वारे वही सहर्ष ।
रोम-रोम में रम रहा, जिसके भारतवर्ष ॥

ऊपर से तो हिन्द का, अन्दर जिसके द्वेष ।
'चन्दन' ऐसे ढीठ से, रहना दूर हमेश ॥

जड काटे जो हिन्द की, बैठ हिन्द के बीच ।
कोई होगा और क्या, उससे भी बढ़ नीच ?

सिर पर चढ़ने दे न जो, कभी विदेशी भूत ।
'चन्दन' भारत मात का, सच्चा वही सपूत ॥

देश-द्वेष मन में भरा, शीश विदेशी भूत ।
'चन्दन' भारत मात का, असली वही कपूत ॥

खान-पान

खाना खाना चाहिये, कभी न धर्म-विरुद्ध ।
खाना खाना चाहिये, सदा-सर्वदा शुद्ध ॥

जिसका 'चन्दन' शुद्ध नहि, खान-पान-पहरान ।
वह भी दुनिया मे भला, है कोई इनसान ?

जो चाहें 'चन्दन' अधिक, रहना आप निरोग ।
अधिक खटाई-खाण्ड का, करिये नहीं प्रयोग ॥

अय 'चन्दन' मधुमेह-से, उपजत उनको रोग ।
चीनी आदिक अधिक जो, खाते मूर्ख लोग ॥

सारे जग से हिन्द की, उलटी 'चन्दन' चाल ।
खाण्ड खायंगे खूब ही, खीर-दूध मे डाल ॥

अधिक मसाला-मिर्च से, होते रोग अनेक ।
भोजन में 'चन्दन' अतः, रखिये वहुत विवेक ॥

हंसना

है हंसना भी इक कला, हरइक को नहि आय ।
रोता एक हंसाय तो- हंसता एक रुलाय ।।

सन्तन का हंसता हृदय, पण्डित के द्वय नैन ।
मार ठहाका मूढ जन, है हंसता दिन-रैन ।।

हंसे सरलजन खिलखिला, शान्त पुरुष मुस्काय ।
नीच-निकम्मा जिस तरह, घोड़ा हिनहिनाय ।।

हंसे शिष्ट अवसर लखा, अवसर बिना अशिष्ट ।
महा शुष्क स्वभाव को, कभी न हंसना इष्ट ।।

सदा करे उपहास को, धूर्त या चालाक ।
जो नर गन्दी प्रकृति का, भद्दे करे मज़ाक ।।

देख सुखी संसार को, हो नहि जो सन्तुष्ट ।
संकट में लख और को; 'चन्दन' हंसता दुष्ट ।।

चोरी

छल से-बल से और के, लेना हक को मार।
अथ 'चन्दन' चोरी उसे, कहता सब संसार॥

पहुंचे जिससे और को, भारी दुख-सन्ताप।
चोरी-सा संसार में, नही दूसरा पाप॥

रस्ता चलते लूटना, या फिर खनना खात।
जेब काटना, चोर के, लक्षण है साक्षात॥

बने सहायक चोर का, ले चोरी का माल।
ताला तोड़े—तीन ये, तस्कर 'चन्दनलाल'॥

चीज और की और दे, लेना ज्यादा दाम।
हीन-अधिक भी तौलना, चोरी का है काम॥

करें मिलावट लोभ से, चीजों में जो लोग।
वे भी 'चन्दन' चोर है, भारी निन्दा योग॥

मूर्ख

मलिन रूप पहुंचे सभा, बैठे अंग भिड़ाय।
अनहोनी इच्छा करे, महा मूढ़ कहलाय ॥

दो में बनता तीसरा, बिन न्योते घर जाय।
बोले बिना बुलाय ही, महा मूढ कहलाय ॥

बिना भूख ही खाय या, अधिक भूख से खाय।
मग में खाता जाय जो, महा मूढ़ कहलाय ॥

बिन परिचय अनजान के, साथ सफ़र में जाय।
धर्मी की निन्दा करै, मूढ़न - भूप कहाय ॥

बेटा रखकर लाड़ला, विद्या नहीं पढ़ाय।
विषसे जो करता नशा, मूढन - भूप कहाय ॥

नगन नाक जो छींकता, नंगे मुख जमुहाय।
गुप्त बात चौड़े कहे, मूढ़न-भूप कहाय ॥

दीपक के आगे खड़े, निशि में खींचे खाट ।
बिना सुहाती सीख दे, मूर्ख बारह वाट ।।

करता आलस पठन में, लिखते करता बात ।
पत्नी से करता कलह, जानो मूर्ख-जात ।।

बात कहे समझे बिना, करे प्रकाशित मर्म ।
खर्च बढ़ावे लाभ बिन, जानो मूर्ख परम ।।

रुष्ट मनावे मीत नहिं, करे मीत से वाद ।
हसी-हसी में हो कुपित, मूर्ख की औलाद ।।

मात-पिता-गुरुदेव औ— कहे बड़ो को 'तू' ।
उस मूर्ख मतिहीन पर, सब ही करते 'थू' ।।

लघुशङ्का निर्लज्ज हो, जो करता नादान ।
मूढ शिरोमणि जानिये, करे ज्ञान पा मान ।।

रूपवती लख भामिनी, मन में करता चाह ।
मूर्ख जानो जो चले, एकाकी भय - राह ।।

बैठे आगे आन कर, बिना दिये सम्मान ।
करे राड़ जो जोर विन, महामूढ़ लो जान ।।

मूर्ख-नीति

सोच-समझ कर कीजिये, मूर्ख से व्यवहार।
मूर्ख से व्यवहार है, ‘चन्दन’ कठिन अपार।।

बुद्धिहीन हर आदमी, वड़ा भयंकर होय।
सुनता वह ‘चन्दन’ नहीं, बात किसी की कोय।।

अधिक सुनाता आप ही, सुनना जाने व्यर्थ।
‘चन्दन’ सुनता भी अगर, करता अर्थ - अनर्थ।।

कहा न माने और का, समझ स्वयं की नाहि।
रहे सलामत किस तरह, मूर्ख जन जग माहि।।

‘मूर्ख जन जो कुछ करे, करे नहीं मतिमान।’
देखो मिलता मूढ़ से, अय “चन्दन’ यों ज्ञान।।

जिससे मूर्ख पुरुष का, पलटें शीघ्र स्वभाव।
कोई भी औषधि नही, कोई नही उपाव।।

बुद्धि

वृषभ, अश्व, गज, सिंह से, मानव मानी हार ।
तन-बल से 'चन्दन' गये, ढोर मोरचा मार ॥

पर, प्रज्ञा में और नहिं, मानव के समकक्ष ।
कभी कहे वह बात जो, मोल पड़े शत-लक्ष ॥

जिसके प्रज्ञा पास है, पुरुष वही बलवान ।
बुद्धि बिना 'चन्दन' मगर, मानव ढोर समान ॥

कुटिल अगर प्रज्ञा बने, हने अनेकों लोग ।
प्रज्ञा का बन्दूक-सम, है दुस्तर उपयोग ॥

खोज-खोज कर सत्य को, करना सतत प्रकाश ।
धिषणा का 'चन्दन' यही, काम एक है खास ॥

पाप, पुण्य की धर्म की, असल जिसे पहचान ।
अय 'चन्दन' है असल में, वही मनुज मतिमान ॥

मित्रता

◆

मधुर मित्रता का वहीं, होता आविर्भाव।
दोनों में हो सरलता, दोनों सम स्वभाव॥

आए दोनों के नहीं, सन्मुख स्वार्थ गिद्ध।
होती है 'चन्दन' तभी, मधुर मित्रता सिद्ध॥

जल्द बनाना मीत या– बनता जल्दी मीत।
प्रीत-रीत के सर्वथा, अय 'चन्दन' विपरीत॥

फंसकर मीठी बात में, लख कर केवल रूप।
'चन्दन' बनता मीत जो, मूढ़न का है भूप॥

बनना परिचित प्रथम तो, आपस का फिर ज्ञान।
उसके पीछे मित्रता, करने में कल्याण॥

नहिं ऋण दीजे मित्र को, नहीं लीजिए आप।
वरना 'चन्दन' मित्रता, पाप-शाप-सन्ताप॥

नहिं मिलना,मिलना अधिक, बिन अवसर की मंग।
तीनों से ही मित्रता, हो जाती है भंग ।।

नहीं भला है मित्र का, अय 'चन्दन' उपहास ।
वश करने को भी बुरा, दम्भों भरा प्रयास ।।

बहुत अधिक भी मित्र का, ठीक नहीं विश्वास ।
वैरी वह बन कर कभी, करदे पर्दाफ़ाश ।।

शीघ्र भड़कना चाहिये, 'चन्दन' नहीं कभी ।
दूर रहेंगे आप से, वरना मित्र सभी ।।

अगर मित्र की चाहते, सदा देख़ना शकल ।
निज जीवन मे मित्र के, कभी न दीजे दख़ल ।।

सज्जन से सज्जन भले, कैसा ही हो मीत ।
सीमा तक ही त्याग की, सदा निभाहे रीत ।।

दृढ़ रहे जो मित्रता, शिक्षा सुने अनूप ।
'चन्दन' बनना मीत को, कभी न भार स्वरूप ।।

कभी बनो वल अन्ध नहिं, ऊच्च दोस्त को पाय ।
वैद्य भरोसे पर कभी, क्या कोई विष खाय ?

सिनमा से सीता बनी, कहिये कोई नार ?
बनी सरूपनखा मगर, 'चन्दन' कई हज़ार ॥

उसी सिनेमा का अहो ! 'चन्दन' कितना प्यार !
आज दिखा करती सखी, सखियों का सत्कार ! !

बना एक भी राम नहिं, रावण बने अनेक ।
मूर्ख गाल बजा रहे, सड़ियल सिनमा देख ॥

जहां कला के कण्ठ पर, चलता काम-कुठार ।
'चन्दन' ऐसे खेल पर, लाख-लाख धिक्कार ! !

खेल बुरा नहिं देखना, अगर बनाए राम ।
बुरे खेल को दूर से, 'चन्दन' करो सलाम ! !

सच्ची उसकी प्रीत है, सच्चा है वह मीत ।
'चन्दन' भाता है जिसे, सन्त-संग - संगीत ॥

दुराचार - दुर्व्यसन का, महा लगावे रोग ।
दोस्त न, दुश्मन ही उसे, कहते पण्डित लोग ॥

चिता-धूम की तरह से, दुष्ट मीत से भाग ।
लग जायगा अन्यथा, कड़ा कलंकित दाग ॥

युवा-वर्ग से

जागो युवको ! युवतियो ! करो समाज सुधार ।
देश आपका आपको, कब से रहा पुकार ॥

आज रिवाज समाज के, हुए और के और ।
अफ़रा-तफ़री का इसे; क्यों न कहिये दौर ?

बैठी बहुत कुमारियां, मुश्किल बहुत विवाह ।
लालच का घुण क़ौम को, करे न कही तबाह ?

बिन मांगे ही जो मिले, वही लीजिये आप ।
छीना-झपटी छोड़िये, जो है भारी पाप ॥

जीवन भर देते रहें, बेटी को मा-बाप ।
उनके नही कृतज्ञ क्या; फिर भी होंगे आप ?

औरों को जो लूटते, कभी लुटेंगे आप ।
आख़िर को पछताँयगे, बन बेटी के बाप ॥

तोड़ - फोड़ - विध्वंस न, करना बन नादान ।
नहीं किसी भी अन्य का, है अपना नुक़सान ।।

भारत भर है आपका, भारत के हैं आप ।
भारत के नुक़सान को, अतः समझना पाप ।।

जिसकी प्यारी गोद में, पलकर हुए जवान ।
उच्च चरित्री बन करें, भारत का उत्थान ।।

भारत देश - विदेश में, जिस से हो बदनाम ।
ऐसा कोई भूल भी, कभी न करना काम ।।

पश्चिम का न अनुकरन, करना आंखें मीच ।
भारतीयता हो भरी, भारी रग-रग बीच ।।

सुन्दरता न सादगी, जैसी और महान ।
सादा सारा चाहिये, खान-पान - पहरान ।।

कैंसर जैसे रोग की, है जो जननी ख़ास ।
बीड़ी के - सिगरेट के, कभी न फटके पास ।।

बड़ा न कोई डाक्टर, वैद्य, वज़ीर, वकील ।
सबसे ही बस वह बड़ा, जिसके पल्ले शील ।।

सिगरेट

●

खुश्की, खांसी जो करे, भरे कभी न पेट।
पता न 'चन्दन' लोग क्यों, पीते फिर सिगरेट !!

दूध-दही को तरसता, खालमखाली पेट।
'चन्दन' पीने को बचा, आग लगा सिगरेट ?

पीयेंगे सिगरेट ही, अगर लगी हो प्यास।
कैसी दुनिया बन चली, दुर्व्यसनों की दास !!

तम्वाकू-दुर्व्यसन को, कहे न छोटा आप।
'चन्दन' इसमें है छुपा, वहुत पाप - सन्ताप ॥

किस्मत में माखन नहीं, किस्मत मे न घी।
मूर्ख रक्त सुखायेंगे, वीड़ी पर पी-पी !!

दुर्व्यसनों का दास है, जो 'चन्दन' नादान।
तीन काल न वन सके, मानव कभी महान ॥

ऋषभदेव, अथवा कहें, आदिनाथ भगवान ।
'चन्दन' चरणन का धरे, गद्-गद् मन से ध्यान ॥

राग - द्वेष का, काम का, किया जिन्होने क्षय ।
'वर्द्धमान' भगवान की, 'चन्दन' जय-जय-जय ॥

ऋषभदेव जिनराज से, महावीर - पर्यन्त ।
'चन्दन' चौबीसों रहें, जिनवर जी जयवन्त ॥

'गणधर' ग्यारह वीर के, ज्ञान, ध्यान, गुण खान ।
'चन्दन' वन्दन कर रहा, सादर कर सम्मान ॥

कोई भी जिससे नहीं, 'चन्दन' मन्त्र महान ।
'महामन्त्र नवकार' का, धरूं हृदय मे ध्यान ॥

सौम्य मूर्ति तपशीलयुत, उन्नत भाल विशाल ।
प्रिय गुरुवर ज्ञानी गुणी, जय जय 'पन्नालाल' ॥

दिव्य दया, दम, दान से, शोभित जो अत्यन्त ।
युग-युग तक 'चन्दन' रहे, 'जैन - धर्म' जयवन्त ॥

दान्त, हाथ भी पीत हों, मुख देता बदबू।
बहुत बुराइयाँ देख भी, क्यों न करते थू ?

शौक लगाते शान से, पहले तो नादान।
बहुत-बहुत-पश्चात् पर, हैं होते हैरान ॥

खट्टा- मीठा- चटपटा, कोई भी न स्वाद।
'चन्दन' पी-पी किसलिये, होते फिर बरबाद ?

नहीं सुखाना आप को, अपना जो है रक्त।
तम्बाकू के भूल न, 'चन्दन' बनिये भक्त ॥

छोटे-छोटे बाल भी, करके आंखे बन्द।
बीड़ी का–सिगरेट का, लेते हा ! आनन्द ॥

पीते है जब सामने, उनके भाई - बाप।
समझे कैसे फिर भला, वे हो पीना पाप ॥

उन्हे पता क्या–रक्त है, उनका सुमन समान।
पहुचेगा सबसे अधिक, उनको ही नुकसान ॥

नही समझते बात यह, वे बच्चे अनमोल।
देखा - देखी रोग यों, ले लेते है मोल ॥

वचन वीर

लम्बी-चौड़ी ही करे, बातें जो दिन - रात।
'चन्दन' उसका नाम है, 'वचन-वीर' विख्यात ॥

वचनवीर का दूसरा, 'गप्पी' भी है नाम।
गप्प हांकना दून की, 'चन्दन' उसका काम ॥

हमने है यह-वह किया, छेड़े यही वृतन्त।
उसकी बातों का कहीं, कोई भी न अन्त ॥

'चन्दन' चाहे श्रवण कर, श्रोता जाए ऊब।
बात-बात में गरजता, और उफनता खूब ॥

मनगढन्त किस्से अगर, रहें न उसके पास।
पूर्वजों के झूठ तब, ले बैठे इतिहास ॥

कटु भाषी भी हो बड़ा, और असहनशील।
'चन्दन' अच्छी एक न, उसके पास दलील ॥

वाणी से परी

●

संयत शुभ शब्दावली, सुन सब लेते जान।
सभ्य-शिष्ट नर नेक है, पण्डित है गुणवान॥

मूर्ख अपनी बात से, खुल जाता तत्काल।
अतः मौन ही शोभता, उसको ‘चन्दनलाल’॥

मुख्य विषय रख सामने, सदा समयानुसार।
श्रोता का स्वभाव लख, ‘चन्दन’ करे प्रचार॥

अर्थहीन - अस्पष्ट जो, भाषा को अपनाय।
अविवेकी-अनपढ़-कुटिल, मूर्ख माना जाय॥

‘मैं’, ‘मैंने’ का बहुत जो, करता पुरुष प्रयोग।
बकरी का बेटा उसे, कहते पण्डित लोग॥

‘चन्दन’ सज्जन,सरल जन, जब भी बोले वयन।
स्वर मीठा,मन सरल हो, खिले कमल-से नयन॥

समादर

आदर अद्भुत मन्त्र है, सब का ले मन मोह ।
भूल करें 'चन्दन' नहीं, कभी किसी से द्रोह ॥

सब का आदर जो करे, सब से आदर पाय ।
करे अनादर मूढ़ जो, हाथ अनादर आय ॥

करे बड़ों का ही नही, केवल आदर-मान ।
छोटों का भी चाहिये, 'चन्दन' मान महान ॥

आदर औ सम्मान पर, खर्च न कौड़ी आय ।
लाभ मगर अनगिनत है, 'चन्दन' सत्य सुनाय ॥

अय 'चन्दन' जो चाहता, जग में यश-कल्याण ।
अधिक मीत से भी करे, वैरी का सम्मान ॥

जहां अनादर बहुत दे, बनते काम विगाड़ ।
बनते आदर से वहां, बिगड़े काम हजार ॥

गृह-जीवन

अपने - अपने गेह में, सब है भूप समान।
चाहे 'चन्दन' नहि कभी, कोई भी अपमान ॥

जिस घर में नहिं न्याय हो, उठे उपेक्षा - लहर।
भीतर ही भीतर वहां, फैल जायगा जहर ॥

सत्य, अहिंसा, प्रेम, शम, सुन्दर सेवा-भाव।
'चन्दन' ऐसा गेह-पति, पार लगाता नाव ॥

चौबीसों घण्टे रहे, जिसे कोप का ज्वर।
'चन्दन' थानेदार-सा, मुखिया घाले घर ॥

सब के पीछे गुप्तचर, लगा-लगा ले भेद।
ऐसे गेहाध्यक्ष पर, अय 'चन्दन' है खेद !!

सहनशील हो; स-क्षमा, छोटे वड़े समक्ष।
सब से आदर पायगा, ऐसा गेहाध्यक्ष ॥

व्यापार

मुनिजन पुजते त्याग से, धन से दुनियादार ।
धनोपार्जन को अतः, बना बनज-व्यापार ।।

धन से ही जन सद्गुणी, रूपवान विद्वान ।
'चन्दन' जान जहान में, पैसा परम प्रधान ।।

बुद्धिमान इनसान हर, अय 'चन्दन' बतलाय ।
भला नौकरी से अधिक, छोटा भी व्यवसाय ।।

सब ही सेवा-वृत्ति को, हेय कहें गुणवान ।
रमा बसे व्यापार में, निश्चय 'चन्दन' जान ।।

बिना साख के नहि चले, कभी एक भी काम ।
जम जाने पर साख के, फिर तो बिकता नाम ।।

सच्चे ही व्यवहार से, 'चन्दन' जमती साख ।
उखड़े पर न फिर जमे, कीजे कोशिश लाख ।।

हेरा-फेरी, कुटिलता, दीजे तज तत्काल।
हेराफेरी से बनज, चौपट 'चन्दनलाल'॥

धन अन्यायोपार्जित, टिकता कुछ हो साल।
लेकरके फिर मूल भी, जाता 'चन्दनलाल'॥

डाकू, गठिया, रिश्वती, चोर लुटेरे लोग।
पाप-द्रव्य का क्या कभी, करते देखे भोग ?

जिसके पल्ले में नही, अय 'चन्दन' ईमान।
बनना उस नादान का, बहुत कठिन धनवान॥

जनता का अब साथ दे, गया पुराना वक्त।
बन कर अर्थ पिशाच नहि, चूसे उसका रक्त॥

कर्मचारियो से करे, जो नहि सद्व्यवहार।
उसका 'चन्दन' चमकना, मुश्किल कारोबार॥

ग़लत हिसाब-किताब से, कारोबार ख़राब।
दर्पण है व्यापार का, सही हिसाब-किताब॥

ऐसे ही व्यापार की, जान पत्र-व्यवहार।
जिसमें अक्षर बहुत कम, बहुत मगर हो सार॥

शिष्टाचार

जैसे सुमन सुगन्ध से, विधु से जैसे रात ।
हर नर शिष्टाचार के- ही है सजता साथ ।।

जो भी 'चन्दन' आपका, करे कभी उपकार ।
प्रगटाइये कृतज्ञता, है यह शिष्टाचार ।।

साथ बडों के आवश्यक, जैसे शिष्टाचार ।
छोटों के भी साथ है, 'चन्दन' उसी प्रकार ।।

वाणी के व्यवहार से, प्रगट न ऐसा होय ।
'चन्दन' नारद वशधर, जो समझे हर कोय ।।

मान-भंग हो अन्य का, हो अपना उपहास ।
'चन्दन' ऐसे काम के, कभी न फटके पास ।।

अपना गौरव हो प्रगट, जिससे 'चन्दनलाल' ।
हंसी-दिल्लगी-वेश वह, रहन-सहन हो चाल ।।

जिसे रतौन्धी हो-उसे– नक्षत्र न दीखे रात ।
उसी तरह से समझिये, अन्ध-त्रय की वात ॥

नेक बने बिन जो चहे, करे सभी सम्मान ।
उस-सा अय 'चन्दन' नही दुनिया में नादान ॥

उसको झुकते जगत-जन, जो भी हो गुणवान ।
बिना योग्यता, सबलता, नही मिले सम्मान ॥

'चन्दन' करते मूढ जन, जो मिथ्या अभिमान ।
उनके पल्ले में सदा, है पड़ता अपमान ॥

जिनमे शिष्टाचार नहिं, कैसे वे नर-नार ।
सज्जनता का सार है, 'चन्दन' शिष्टाचार ॥

रावण के औ राम के, महायुद्ध के वाद ।
आती इक घटना हमे, इस वारे ने याद ॥

रावण जब मरने लगा, लम्बे पाँव पसार ।
लछमन से रघुवीर जी, स-सस्नेह कहे पुकार ॥

'राजनीति का इक परम, पण्डित है लकेश ।
उससे लछमन! आखिरी, ले आओ उपदेश' ॥

सन्तति

भले-बुरे दो भान्ति के, दुनिया मे इनसान ।
उन में कैसा कौन है, कर लीजे पहचान ॥

'चन्दन' उत्तम वंश की, जो उत्तम औलाद ।
पालन करती वह सदा, उत्तम गृह - मर्याद ॥

मेरे द्वारा हो नहीं, नष्ट उन्हों का मान ।
पुरखाओं का वह सदा, रखता पूरा ध्यान ॥

जिसके घर की हो दशा, सुन्दर सभी प्रकार ।
वह सज्जन सम्भालता, घर - बाहर का भार ॥

'चन्दन' जहां अशान्ति अति, नित्य नाच दिखलाय ।
उस घर का हरएक ही, उच्छृंखल हो जाय ॥

जिस घर संकट आर्थिक, करे वही छल-कपट ।
अथवा करता चोरियाँ, जाती थाने रपट ॥

●

जिससे अघ 'चन्दन' मिटे,
पाप - ताप - सन्ताप ।
'एक बात' पाठक ! पढ़ें,
हर दोहे में आप ।।

●

वेश

'चन्दन' चाहे आपको, नहि पूरा हो ज्ञान ।
लेकिन लख कर वेश को; कर सकते अनुमान ॥

अस्त-व्यस्त चित,चपल या– सादा है इनसान ।
करवाता है वेश भी, मानव की पहचान ॥

मानव सरल स्वभाव का, सादा रहे हमेश ।
आडम्बर से युक्त हो, वने हुए का वेश ॥

'चन्दन' जिस भी पुरुष का, है प्रज्ञा व्यवसाय ।
ढीला-ढाला वेश वह, तन पै सदा सजाय ॥

हलका-फुलका - चटपटा, चंचल चित-चालाक ।
'चन्दन' महा महीन ही, पहनेगा पोशाक ॥

व्यक्ति बनावट से रहे, जो भी 'चन्दन' दूर ।
मोटा ही पट पहनना, उसका है दस्तूर ॥

दृष्टि

'चन्दन' कैसा कौन है, करने को पहचान।
नज़रों का करले अत., एक नज़र से ज्ञान ॥

अस्थिर उसकी नज़र हो, अस्थिर जिसका चित्त।
तरह-तरह के रग वह, रहे पलटता नित्त ॥

हक्का-बक्का-सा रहे, मानव जो भयभीत।
उसकी आंखे देखती, अय 'चन्दन' विपरीत ॥

जिसके मन में मान ने, आसन लिया जमाय।
सिर ही सबका देखता, नीचे नही लखाय ॥

सत्य-स्वभावी आदमी, या फिर जो हो वीर।
नज़र मिलाता नज़र से, 'चन्दन' जन गम्भीर ॥

सज्जन-सरल स्नेहिजन, जितने जग के मायं।
अय 'चन्दन' जब भी मिले, आनन अधिक लखायं ॥

वाह्याभ्यन्तर

●

वाह्य रूप ही देख कर, करना मत अनुमान ।
ठीक पुरुष पहचान हित, अन्तर भी लें जान ॥

कभी किसी से श्रवण कर, सतियों के आख्यान ।
'चन्दन' उसे महात्मा, सहसा ले मत मान ॥

उसके कमरे की ज़रा, देखें तो दीवार ।
गन्दे चित्रों की कहीं, है तो नहिं भरमार ?

टंगे हुए दीवार पर, कुलटाओं के चित्र ।
साफ़-साफ़ बतलांयगे, कितना पुरुष पवित्र ?

धर्म-ग्रन्थ लख मेज पर, सहसा नहि भरमांयं ।
अन्दर गन्दी पोथियां, सम्भव है मिल जाय ॥

रीझ न केवल रूप पर, चाल-चलन भी देख ।
काली लगी कलंक की, नही कहीं तो रेख ?

नीति-निचोड़

१

वैरी को तो युक्ति से, सरलपने से मीत।
स्वामी का हितकाम कर, धन से लोभी जीत॥

अति क्रोधी को विनय से, विद्या से विद्वान।
वन्दन से गुरुदेव को, जीते चतुर सुजान॥

मूर्ख कथा-कहानियां, स्व-जन सम व्यवहार।
जीता जाए शील से, 'चन्दन' सब संसार॥

एक मात्र संकल्प से, काम बने नहि कोय।
'चन्दन' किये प्रयास से, सदा सफलता होय॥

अहं प्रदर्शित जो करे, झूठा रोब जमाय।
रहे ताड़ता-तर्जता, मुखिया नहि यश पाय॥

बने जहां तक आप से, न देखें पर-खोट।
हंस-वृत्ति से मात्र गुण, करना 'चन्दन' नोट॥

जो चाहे व्यवसाय में, अय 'चन्दन' उत्कर्ष।
कभी किसी से भूल कर, करे नही सघर्ष ॥

आंख निकालेगे अगर, होकर पीले - लाल।
कटुता तब व्यवहार में, आयेगी तत्काल ॥

जिसके अन्दर क्रोध की, बहुत बड़ी हो खोट।
रिपुओं की 'चन्दन' भला, उसे कहो क्या टोट ॥

कहता 'चन्दन' सत्य यह, चाहे जब लें देख।
उत्तम जन का क्रोध हो, जैसे जल पर रेख ॥

शान्ति, सरलता, सौम्यता, सद्‌गुण जिसके पास।
अय 'चन्दन' संसार सब, समझो उसका दास ॥

महापुरुष को ढूंढिये, उसके तन में नाहि।
उसे उसी के ढूंढिये, वचन कर्म के मांहि ॥

महापुरुष का भले ही, हम - सा दिखे शरीर।
चरित्र विचित्र,अगाध मन, वाणी गहन-गम्भीर ॥

महापुरुष की अय सखे ! अद्‌भुत जीवन-रेख।
आकृति में नहि देख कर, कृति में ही बस देख ॥

जिसे सुखी सन्तान को, लखना हो दरकार ।
'चन्दन' उसका वह करे, सद्गुण से श्रृंगार ।।

रूप-रंग को गुण बिना, 'चन्दन' ऐसे जान ।
हो फीका पक्वान हर, ऊंची मगर दुकान ।।

'चन्दन' सुन्दरता नहीं, श्रेष्ठ सर्वदा होय ।
सुन्दर है बस श्रेष्ठता, फ़र्क़ न इसमें कोय ।।

पृथ्वी पर ही स्वर्ग का, बनना क्या दुश्वार ।
अगर आप सब सुर बनें, बने स्वर्ग संसार ।।

द्वेष त्याग हर जीव को, जानो स्वयं समान ।
'चन्दन बनना 'देव' यों, बिल्कुल है आसान ।।

जो भी देता द्वेष से, जग-जीवों को कष्ट ।
पा सकता सुख, स्वर्ग नहिं, 'चन्दन' कहे स्पष्ट ।।

जहां द्वेष दिल में बसे, नहीं दया का नाम ।
वहां प्रेम का धर्म का, अय 'चन्दन' क्या काम ।।

'चन्दन' जिसमें हित रहे, रहे अहित नहि कोय ।
स्वार्थ से जो हो परे, 'प्रेम' कहावे सोय ।।

घडी गई जो हाथ से, नहीं आयगी हाथ।
चलना 'चन्दन' चाहिये, सदा समय के साथ॥

कोई ही लेता जिसे, देते बहुत हमेश।
'चन्दन' उसका नाम है, 'शिक्षा' या 'उपदेश'॥

उसका ही उपदेश है, 'चन्दन' तारनहार।
जो कि उसी उपदेश को, खुद ले पहले धार॥

अपने ही उपदेश पर, चले न जो-जन आप।
'चन्दन' उसके पास भी, जाना जानो पाप॥

बचो बुरों के सग से, निश-दिन 'चन्दनलाल'।
आने दो मन में नही, खोटा कभी ख़याल॥

खोटी सगति-सा नही, खोटा कोई और।
इससे बचना चाहिये, अय 'चन्दन' हर ठौर॥

'चन्दन' कैसा कौन है, करने को यह ज्ञान।
संगति किस की वह करे, केवल लो यह जान।

'चन्दन' रवि से ही सदा, खिले कमल का बाग़।
खिले कमल नहि एक पर, धधके कितनी आग॥

क्रोध

●

अनुचित हठ से जन्म ले, आत्म-विनाशक क्रोध।
बचना 'चन्दन' चाहिये, बढ़े न वैर-विरोध॥

जिसका अपने क्रोध पर, हो 'चन्दन' कण्ट्रोल।
सारे ही सुख स्वर्ग के, ले सकता वह मोल॥

'चन्दन' बनता मूढ़ जो, विनय-विवेक बिसार।
भूत चढ़े जब क्रोध का, मुख उगले अंगार॥

क्रोध प्रगट हो जिस समय, हो जाएं गंभीर।
क्रोध-नाश की यह सबल, है 'चन्दन' तदबीर॥

कोमल मन हों नारियां, करें न उन पर क्रोध।
'चन्दन' घर वह नर्क है, जिसमें वैर-विरोध॥

नयन बन्द, मुखड़ा खुला, चिन्तन का अवरोध।
'चन्दन' अन्धा आदमी, जब आता है क्रोध॥

ज्ञानी करता क्रोध नहि, मूर्ख करता क्रोध।
दोनों का ही क्रोध से, हो जाता यों बोध॥

क्रोध जहां सुख-शान्ति का; वहां कहाँ खुर-खोज।
अय 'चन्दन' हैरानियां, परेशानियाँ रोज़॥

करता क़ाबू क्रोध को, अय 'चन्दन' बलवान।
निर्बल को क़ाबू मगर; करे क्रोध शैतान॥

मुखड़े पर मुस्कान नहिं, देह अरक्त - अशक्त।
'चन्दन' मोटा हो नहीं, कभी क्रोध का भक्त॥

सभी पुराने दूर हों, बनें नये नहिं मीत।
अय 'चन्दन' इस क्रोध की, कैसी खोटी रीत॥

है होता तत्पर तभी, लेने को प्रतिशोध।
हंसी-खुशी को नष्ट यह, क्षण में करता क्रोध॥

क्रोध-सुता है क्रूरता, निरी पाप की खान।
कलह, मारना, पीटना, उसकी फिर सन्तान॥

क्रोध क्षमा का काल है, क्षमा क्रोध का काल।
कैसी अद्भुत बात है, देखो 'चन्दनलाल'॥

ग्रहंकारी

●

नहि देखे छोटा-बड़ा, नहिं देखे दिन-रात।
सदा अहङ्कारी करे, ग्रहंकार की बात ॥

सम्मुख देखे कम मगर, इधर-उधर दिन-रैन।
चढ़े रहें 'चन्दन' सदा, मानी के द्वय नैन ॥

गर्दन उसकी नहि झुके, झुकें न उसके नैन।
रहें अकड़ता-ऐंठता, अय 'चन्दन' दिन-रैन ॥

तनी जरूरत से ग्रधिक, छाती रहे निशंक।
'चन्दन ग्रौर कमान-सी, दोनों भौहें बंक ॥

'चन्दन' बातें वह करे, पटक-पटक कर हाथ।
रेखांकित मस्तक रहे, गर्दन उचके साथ ॥

किसी सभ्य के पास वह, मिलने को जब जाय।
कुर्सी कोई खींच कर, बैठे झट-पट धाय ॥

महापाप कम तोलना, महा पाप कम माप ।
मगर मिलावट वन्धुओ ! सब पापों का बाप ।।

विना-विचारे दीजिये, वचन कभी नहिं भूल ।
अगर दिया तव तोड़ना, अच्छा नही असूल ।।

मोल वताना और ही, लेना लेकिन और ।
'चन्दन' अच्छे वनिक के, अच्छे नहिं ये तौर ।।

क्रोध, मोह, मद, मान से, अन्तर हुआ अशुद्ध ।
तन मांजे, मांजे न मन, वुद्धि हुई अवरुद्ध ?

वर्तन ऊपर से मले, अन्दर से नहिं धोय ।
उसमें डाले दूध को, पीता है क्या कोय ?

रह हंसता हर हाल मे, हंसता जैसे फूल ।
'चन्दन' जीवन अन्यथा, होगा तीखा शूल ।।

शान्ति-सुमन खिलते जहां, वृक्ष निराला 'मौन' ।
'चन्दन' कहो मुकावला, करे मौन का कौन ?

जीवन जल का वुलवुला, जो जाने यह मर्म ।
'चन्दन' तज दुष्कर्म वह, करे सर्वदा धर्म ।।

माया

अर्थ अनेकों जगत में, माया के मशहूर ।
यहां कपट के अर्थ में, लेकिन है मंजूर ।।

'चन्दन' तन-मन-वचन की, जहा कुटिलता होय ।
'माया' उसका नाम है, करो न शका कोय ।।

कहता तो कुछ और है, करता पर कुछ और ।
मायावी मानव वही, अय 'चन्दन' हर तौर ।।

मायावी का मन नही, पढ सकता इनसान ।
उसको तो पहचानते, है केवल भगवान ।।

सज्जन प्रगटाता वही, जो हो मन के बीच ।
'चन्दन' इससे उलट पर, जानो दुर्जन नीच ।।

निकट कपट नहिं कुटिलता, जिसके 'चन्दनलाल ।
सब को ही सबसे अधिक, प्रिय यो लगता वाल ।।

माया ! तेरे और क्या, काम गिनाऊं नीच।
मधु बिकता बाज़ार में, गुड़ का शर्बत बीच !!

सेव-मुरब्बा नाम से, नाशपातियां डाल।
बेचे माया मोहिनी, देखो 'चन्दनलाल' !!

चाहे 'चन्दन' ढूँढिये, सारा ही बाज़ार।
मिलना मुश्किल आपको, शर्बत असल अनार !!

असली कोई ही करे, अय 'चन्दन' तैयार।
एसेन्सों की समझिये, शर्बत में भरमार !!

माखन प्रथम निकाल या- पानी पय में डाल।
असली कहकर बेचना, माया 'चन्दनलाल' !!

लड़का-लड़की और ही, अय 'चन्दन' दिखलाय।
पाणिग्रहण पर और से, महा कपट कहलाय॥

जैसे जड़ हो बांस की, माया रग-रग बीच।
मानव जाता नर्क में, अय 'चन्दन' वह नीच॥

मेष-शृंग-सा जो करे, माया पाप - प्रपंच।
निश्चित अगले जन्म में, वह बनता तिर्यंच॥

लोभ

●

पाप अठारह 'वीर' ने, जो बतलाए साफ़ ।
अय 'चन्दन' यह 'लोभ' है, उनमें नौंवां पाप ॥

तथा पांचवां 'परिग्रह', पाप कहा जो और ।
वह भी इसके निकट है, अय 'चन्दन' हर तौर ॥

ऐसा है इस 'लोभ' का, जाल कमाल विशाल ।
बचता विरला वीर है, कोई 'चन्दनलाल' ॥

तृष्णा-लालच-लोभ के, वशीभूत इनसान ।
अय 'चन्दन' है तोलता, कूड़ - कपट - तूफ़ान ॥

ब्रह्मचर्य-सा तप नही, सब दुनिया दरम्यान ।
अवगुण नहिं है दूसरा, 'चन्दन' लोभ समान ॥

दौलत सब संसार की, लोभी को दे डाल ।
फिर भी समझेगा सदा, अपने को कंगाल ॥

डाके, चोरी ठग्गियां, रिश्वत, जुल्म, अन्याय।
झूठ, मिलावट पाप सब, 'चन्दन' लोभ कराय॥

महा लोभ से आदमी; कर्म कमाकर नीच।
हन्त ! अन्त में जा पड़े, घोर नर्क के बीच॥

धेला भी जब अन्त नहि, 'चलना 'चन्दन' साथ।
धनहित क्यों फिर नर भला, पाप करे दिन-रात॥

गेही को शृंगार धन, सन्तों को सहार।
'चन्दन' गेही पर तजे, धन-हित अत्याचार॥

जिस धन में अन्याय, अघ, और न अत्याचार।
खुले रहे 'चन्दन' सदा, सद्-गतियों के द्वार।

मोटे पापों से मिले, धन जो 'चन्दनलाल'।
कालकूट-सा समझ कर, दीजे तज तत्काल॥

सन्तोषी ही वैद्य का, चमके कारोबार।
जाता लोभी के निकट, कोई ही बीमार॥

वैद्य, वैश्य—सन्तोष का, चमत्कार ले देख।
दुनिया दौड़ी आयगी, इसमे मीन न मेख॥

'दौलत मेरी बहुत है, नहीं चाहिये और'।
अय 'चन्दन' ऐसा धनी, मिला किसी नहिं ठौर ॥

लोभी की नीयत नहीं, भरती है त्रैकाल।
कूप न भरता ओस से, जैसे 'चन्दनलाल' ॥

भला-बुरा कुछ भी कभी, लोभी लखता नांय।
वह तो चाहे जिस तरह, पैसे आते जांय !!

जाते थे जिसके सदा, मस्ती में दिन-रैन।
निर्धन पा निन्यानवे, खो बैठा सुख-चैन !!

सहस, लक्ष फिर कोटि फिर, चाहे अरब, असख।
अय 'चन्दन' मन लालची, उड़े लगा यों पंख ॥

धर्म-कर्म से बहुत ने, 'चन्दन' आंखें मीच।
जीवन की सब सफलता, समझी धन के बीच ॥

शुभ में धन को खर्चते, विरले ही धनवान।
दुर्व्यसनों में फूकते, बहुत मगर नादान ॥

कैसी डाली लोभ ने, नर के नाक नकेल !
मानवता तज रच रहा, गन्दे सिनमा-खेल ॥

सन्त, चिकित्सक, वैश्य, द्विज, शासक, न्यायाधीश।
छः निर्लोभी ही भले, कहते गुणी, मुनीश॥

है अनीति के लोभ पर, वही लगाता रोक।
'चन्दन' जिसको याद है, मृत्यु और परलोक॥

अरबों के धन पर रहा; 'चन्दन' जिनका हाथ।
एक सुई भी नहिं गई, आख़िर उनके साथ॥

पैसों के जो वास्ते, पाप करेंगे आप।
पैसे तो नहि जांयगे, जायेगे संग पाप॥

लोभ-लोभ नहि एक-से, लोभ-लोभ में फ़र्क।
स्वल्प लोभ से स्वर्ग तो- महालोभ से नर्क॥

जो मानव इस लोभ का, करे सर्वथा नाश।
अय 'चन्दन' वह मुक्ति में, करता अन्त निवास॥

'चन्दन' तृष्णा-लोभ को; जो जीते बलवान।
उसके चरणन का बने, सेवक सभी जहान॥

'नन्दीवर्द्धन' ने किया, ताज-तख्त जब पेश।
'वर्धमान' ने त्याग का, दिया स्पष्ट सन्देश॥

विनय

●

प्रथम परीक्षा कीजिये, जो हो मनुज महान ।
विनय नही कुछ भी नहीं; 'चन्दन' का ऐलान ।।

विनय धर्म का मूल है, विनय गुणों की खान ।
विनयी बन्दा चमकता, 'चन्दन' चांद समान ।।

गुरुजन के रहता निकट, जो हो आज्ञाकार ।
उसको ही विनयी कहे, अय 'चन्दन' ससार ।।

तत्व-ज्ञान से शून्य जो, सदा चले विपरीत ।
दूर रहे गुरुदेव से अय 'चन्दन' अविनीत ।।

कितना हो ज्ञानी-गुणी, कितना हो विद्वान ।
कही कभी भी नहि लहे, विनय-हीन सम्मान ।।

करना हो जो आपको, अपना परम विकास ।
अविनय औ अविचार के, कभी न फटके पास ।।

हम पूछें आप बताएं

रात रहे पर पहर भर, 'चन्दन' नीद बिसार।
आत्म-चिन्तन का किया, कहिये कभी विचार ?

'चन्दन' आशय आपका, बिन ही किये बयान।
लोग अन्य अनुमान से; लेते तो नहि जान ?

लगे बुरा जो आपको, 'चन्दन' सभी प्रकार।
करते ऐसा तो नहीं, औरो से व्यवहार ?

इक दिन जाना जगत से, रखते है क्या याद ?
'चन्दन' चखना पाप का, पड़ता क्या नहि स्वाद ?

मिले किसी को हर्ष क्यों ? मिले किसी को शोक ?
कहो मानते आप क्या, नर्क, स्वर्ग, परलोक ?

'चन्दन' लगते बोलने, जिस दम भी है आप।
उगलें सुन्दर शब्द या- करते व्यर्थ प्रलाप ?

आत्म-परिचय

शहर भटिण्डा के निकट, 'त्योना' नामक गाँव ।
'ओसवाल' कुल-बोथरा, 'रामामल जी' नाम ॥

दिल के सरल उदार थे, ऊचे स्वच्छ विचार ।
सब का वे, उनका सभी, करते थे सत्कार ॥

पुण्योदय से था लिया, जन्म वहाँ सुखकार ।
'लछमी' मां के हर्ष का, रहा न पारावार ॥

कभी-कभी उपवास पर, सामायिक हर प्रात ।
माता जी थी धर्म में, लछमी ही साक्षात ॥

उन्नीसौ इकहत्तरा, अट्ठाइस आसौज ।
कर्क लग्न लग्नेश युत, सब ने मानी मौज ॥

'शान्तिदेवी' बहन थी, और बड़े दो भ्रात ।
'मेहरचन्द जी' और थे- 'कृपाराम' विख्यात ॥

उपसंहार

मानव-मानव में जगे, मानवता का भाव ।
दोहे लिखने का अतः, उपजा मन में चाव ।।

मानव-जीवन-सा नही, जीवन कोई और ।
इसको सफल बनाइये, अय 'चन्दन' हर तौर ।।

मानव-जीवन का किया, जिसने नहिं सम्मान ।
दुनिया में नहिं दूसरा, उस-सा फिर नादान ।।

व्यवहारिक औ धार्मिक, दोनों विध का ज्ञान ।
देखें पाठक ! प्रेम से, पुस्तक के दरम्यान ।।

जन-गण-मन में जो जगा, मानवता का प्यार ।
समझूगा श्रम सार्थक, अपना सभी प्रकार ।।

कविता का कुछ बोध नहिं, नहिं पिंगल का ज्ञान ।
दोष देख उपहास नहिं, कभी करे विद्वान ।।

'चन्दन' सच्ची सभ्यता, करती है ऐलान ।
आगे वढ़कर कीजिये, पूज्य जनों का मान ।।

गलियो में वाजार में, चलते गाना गीत ।
अच्छे पुरुषों की नही, अय 'चन्दन' यह रीत ।।

जहां भक्त भगवान से, वैठे हों मन जोड़ ।
वहां न 'चन्दन' चाहिये, करना कुछ भी शोर ।।

कभी किसी के लीजिये, भूल न प्यारे प्राण ।
धर्म अहिंसा जगत मे, 'चन्दन' परम प्रधान ।।

गंध रहित खुश रंग भी, किंशुक है किस अर्थ ?
'चन्दन' धन भी धर्म विन, होता विल्कुल व्यर्थ ।।

तृष्णा देवी ! धन्य तू, धनिको की सिरमौर ।
अनुचित कामो मे लगा, भेजे दुर्गम ठौर ।।

सुत भाई भी अर्थ - हित, वनते काले नाग ।
अतः अर्थ को दूर से, दीजे 'चन्दन' त्याग ।।

सुधरे जिससे लोक नहिं, नहिं सुधरे परलोक ।
'चन्दन' ऐसे अर्थ का, अन्त नतीजा शोक ।।

जिसे देख दिल दंग हो, ज्ञान-गंग बह जाय ।
सन्त-संग के रंग से, अंग-अंग मुस्काय ॥

श्रेष्ठ कुलों के लोग भी, पीने लगे शराब !
'चन्दन' उनका आगया, समझो समय खराब ॥

पहले भी थे कुछ बुरे, मगर अधिक है आज ।
चला रसातल जा रहा, उनसे आज समाज ॥

'चन्दन' सर्व समाज में, इक भी बुरा खराब ।
गन्दी मछली एक भी, गन्दा करे तलाब ॥

कभी किसी को तारते, बुरे न 'चन्दन' भाव ।
वेईमानी को समझिए, ज्यो कागज की नाव ॥

रहता है परिवार में, जैसे हर इनसान ।
'चन्दन' चाहिये प्रेम से, रहना जग दरम्यान ॥

वने न वैरी अन्य का, वने न वैरी अन्य ।
वही एक सविवेक है, 'चन्दन' जीवन धन्य ॥

कभी न होना चाहिए, 'चन्दन' दिन वर्बाद ?'
कभी न होवे नर दुखी, जो यह करले याद ॥

लेने मे भी हर्ज है, देने में भी हर्ज ।
वचना 'चन्दन' चाहिये, कभी भला नहि 'कर्ज' ॥

दानव को मानव करे, मानव को भगवान ।
'धर्म' उसी को ही सदा, कहते है गुणवान ॥

जिससे अय 'चन्दन' मिले, दुःख, चिन्ता-सन्ताप ।
सन्त, गुणी, ज्ञानी मुनी, कहते उसको 'पाप' ॥

नही जहां से लौटना, नही कर्म का बन्ध ।
'मुक्ति' वही 'चन्दन' कहो, जहां नित्य आनन्द ॥

जिससे जगका सुख मिले, सदा नही, कुछ काल ।
नाम उसी का 'पुण्य' है, कहता 'चन्दन लाल' ॥

जो'चन्दन'चंचल चपल, मुश्किल काबू आय ।
टिके न टिकने दे कभी, नटखट 'मन' कहलाय ॥

'चन्दन' चढ छत पर कभी, रजनी मे लें देख ।
चित्रा, आर्द्रा, स्वाति का, तारा होगा एक ॥

भेद-भाव 'चन्दन' नही, त्याग, तपस्यावन्त ।
वर्षा, मारुत, धूप-सा, सबका साझा 'सन्त' ॥

आ सकते है थाह मे, नभ गिरि सिन्धु अनन्त ।
'चन्दन' शासक के मगर, मिले न मन का अन्त ॥

सदाचार से, सत्य से, जो भूषित भूपाल ।
जाता सीधा स्वर्ग को, आखिर 'चन्दनलाल ॥

दुराचार, छल. झूठ से, जो दूषित भूपाल ।
जाता सीधा नर्क को, आखिर 'चन्दनलाल' ॥

'मन्त्रीगण का मान्य हूं', जो समझे इनसान ।
सींग रहित वह बैल-सा, है 'चन्दन' नादान ॥

अन्न-दान, भू-दान हो, या 'चन्दन' गोदान ।
'अभयदान' ही एक है, सब मे परम प्रधान ॥

है 'चन्दन' संसार में, जो कोई कुलवान ।
भक्षण करे अभक्ष्य न, निकले चाहे प्रान ॥

बनता कारण कोप का, मूर्ख को व्याख्यान ।
विष-वर्द्धक 'चन्दन' कहा, पन्नग को पय-पान ॥

पूछे से 'चन्दन' कहो, जो हो श्रद्धावान ।
कहना श्रद्धाहीन को, है वन-रुदन समान ॥

मानव-तन पाकर किया, जिसने नहि उत्थान ।
अथ 'चन्दन' ससार मे, उस-सा नहिं नादान ।।

'चन्दन' पड़कर अज्ञ-कर, जो विष हरता प्राण ।
पड़ा प्राज्ञ के कर वही, देता जीवन - दान ।।

सत्य, सत्य है, सर्वदा, अन्तर 'चन्दन' नही ।
सत्य पुराना या नया, होता है क्या कही ?

नाच-गान से, तान से, रीझे नहि भगवान ।
'चन्दन' जीवन नेक पर, वह तो बस कुर्बान ।।

'चन्दन' बढ़ी जरूरते, देंगी दुःख जरूर ।
बढने दें न ज़रूरते, जो हो सुख मंजूर ।।

भजता जिन भगवान जो, तजता 'चन्दन' प्राण ।
पुण्यवान इनसान वह, पाता स्वर्ग विमान ।।

घर में घर 'चन्दन' अगर, झगड़े का नित डर ।
वनवासा बेहतर मगर, घर में घर मत कर ।।

आने - जाने के लिये, जहाँ एक ही द्वार ।
भवन सुरक्षित है वही, 'चन्दन' सभी प्रकार ।।

बुरे काम का अन्त मे, बहुत बुरा परिणाम ।
'चन्दन' भूल न कीजिये, बुरा कभी भी काम ।।

अय 'चन्दन' जब तक नही, तब मन बेईमान ।
तब तक नीयत साफ़ है, सबकी निश्चय जान ।।

कहते 'चन्दन' है घटा, मानव का अब मोल ।
समय सगाई के मगर, नयन देखिये खोल ।।

'चन्दन ! तू किस बात का, करता है अभिमान ?
रहे चढ़ी न नित्य ही, गुड्डी अय नादान !

संकट में इनसान का, सभी छोड़ते साथ ।
साहस 'चन्दन' मित्र जो, कभी न छोड़े हाथ ।।

अय 'चन्दन' लख लीजिये, अखिल विश्व दरम्यान ।
पराधीनता - सा नही, अन्य और अपमान ।।

धर्म-ध्यान से क्यों करे, रे नर ! टालमटाल ।
काल लखै त्रैकाल न, 'चन्दन' काल-अकाल ।।

रोके क्या आंधी उन्हें, रोके क्या तूफ़ान ।
जग-विजयी 'चन्दन' बने, दृढ़-प्रतिज्ञ इनसान ।।

अय 'चन्दन' मतिमान यह, साधक रक्खे याद ।
करे साधना में कभी, किंचित नही प्रमाद ।।

जगत-दुखों का ठीक जो, कर लेता है ज्ञान ।
पाप-कर्म करता न वह, 'चन्दन' प्रज्ञावान ।।

शान्ति, सरलता, सौम्यता, मुखड़े पर लहराय ।
'चन्दन' जन सन्तुष्ट का, अंग-अंग मुस्काय ।।

अय 'चन्दन' जो चाहता, अपना तू कल्याण ।
जैसी अपनी आत्मा, वैसी सब की जान ।।

जोर लगाकर देखले, चाहे कितना कोय ।
'चन्दन' चेतन जड़ न हो, जड़ नहि चेतन होय ।।

'चन्दन' को इस बात में, नही ज़रा भी फ़र्क ।
जन्म-मरण से छूटता, मानव सदा सतर्क ।।

कर्मों से ही जीव यह, गया मुक्ति को भूल ।
कर्मों का 'चन्दन' मगर, हिंसा ही है मूल ।।

'चन्दन' सच्ची बात यह, कहते 'वीर' जिनेश ।
अपना मन जो परखता, वह ही है परमेश ।।

वसन आदि का स्पर्श जो, अपने तन से होय।
राग-द्वेष उस पर कभी, करे न 'चन्दन' कोय॥

परम अहिंसा धर्म में, मन जो सदा रमाय।
उसके 'चन्दन' चरण में, सुर भी शीश झुकाय॥

कोटि कोटि जो जीव का, करता है संहार।
पर उससे भी है अधिक, मुनि-हत्या-अघ-भार॥

सब पर ही समभाव को, जो कोई बरताय।
'चन्दन' ऐसा साधु ही, 'श्रमण' सदा कहलाय॥

धन, बल, विद्या, रूप से, उच्च न हो इनसान।
पावन जिसका मन सदा, 'चन्दन' वही महान॥

नहीं अनादर कीजिये, कभी किसी का भूल।
'चन्दन' सदा बनाइये, अपना प्रेम असूल॥

मृषावाद को निन्दते, सभी जगत के लोग।
अतः किसी भी हाल में, झूठ न कहना योग॥

पाप-नींव पर जो खड़ा, किया गया हो राज।
'चन्दन' उसका शीघ्र ही, होय नष्ट सब साज॥

गुप्त किया विष-पान भी, देता जैसे मार।
गुप्त पाप भी मारता, 'चन्दन' उसी प्रकार ॥

धर्म-शास्त्र कितने पढ़े, सदाचार से हीन।
उसकी अय 'चन्दन' सभी, करनी तेरह-तीन ॥

ज्यों-ज्यों बढ़ते चित्त मे, 'चन्दन' चार कषाय।
त्यो-त्यो तारक धर्म भी, घटता-घटता जाय ॥

मुक्ति-मुक्ति सब ही कहे, नही मुक्ति का ज्ञान।
सदाचार 'चन्दन' प्रथम, मुक्तिपुरी - सोपान ॥

दुर्विनीत को व्यर्थ है, सदाचार की सीख।
कर्ण-कटे को क्या कहो, कुण्डल देना ठीक ?

कान खोलकर ध्यान से, सुने मनीषी लोग।
'चन्दन' है वह द्रव्य-श्रुत, नहि जिसमे उपयोग ॥

अपना ही जिसको नही, अय 'चन्दन' कुछ ज्ञान।
जानेगा वह और को, कहिये क्या नादान ?

मानव का कर्त्तव्य है, मानव बने महान।
वरना अय 'चन्दन' भला, उससे तो हैवान ॥

'चन्दन' मोह मिटते सभी, अन्य कर्म हों दूर।
सूखी जड़ न हो हरी, यत्न करो भरपूर॥

'चन्दन' पढ़ने से नही, पण्डित हो इनसान।
बचे पाप, पाखण्ड से, 'पण्डित' उसको जान॥

'चन्दन' यह ही कह गये, महावीर भगवान।
नष्ट पाप जो सब करे, वही 'तपस्या' जान॥

'चन्दन' चिन्तन जीव यह, जिससे करता नित्त।
उसको ही ज्ञानी, गुणी, कहते है सब 'चित्त'॥

मन-मतंग वश मे अगर, करने का अरमान।
'चन्दन' लीजे हाथ में, अद्‌भुत अंकुश ज्ञान॥

मन-नृप मरते मर गई, इन्द्रियगण की फ़ौज।
'चन्दन' चेतन तब करे, मुक्तिपुरी में मौज॥

मरते कायर, धीर भी, सदा न रहता कोय।
'चन्दन' मरिये इस तरह, फिर-फिर मरण न होय॥

झूठ बोलने में नही, जिसको कुछ भी शर्म।
उसको अय 'चन्दन' नही, कोई कर्म अकर्म॥

दुनिया से यदि चाहते, भले सभी व्यवहार।
भले स्वयं चन्दन बनो, करो सदा उपकार।।

कभी न करना भूल भी, कोई खोटा काम।
यह भी अच्छा काम है, 'चन्दन' सुनो तमाम।।

औरो के आराम का, जिसे न 'चन्दन' ध्यान।
कैसा यात्री वह अरे !, कैसा वह इनसान।।

गुणियों की गणना समय, गिना न जाए 'जौन'।
'चन्दन' जीवित आदमी, उसको कहता कौन ?

धर्म सिवा रक्षक नही, अखिल विश्व में और।
अतः धर्म अपनाइये, अय 'चन्दन' हर ठौर।।

'चन्दन' जिसको 'आत्मा', कहते है सब सन्त।
ज्ञान स्वरूप अरूप है, नित्य अनादि अनन्त।।

पर्वतराज सुमेरु युत, योजन लक्ष प्रमाण।
मध्य लोक के मध्य में, 'जम्बू-द्वीप' महान।।

रहे लड़ाई नित्य ही, जिस घर 'चन्दनलाल'।
जीना जो चाहो उसे, तज दीजे तत्काल।।

औरों को उपदेश दे, करे अमल नहि आप ।
'चन्दन' उसको जानिये, ठगों का भी बाप ।।

'चन्दन' कोई कुटिल को, कैसे मुह लगाय ।
खारे सागर निकट क्यों, प्यासी चिड़िया जाय ।।

जैसे सुमन सुगन्ध से, अद्भुत शोभा पाय ।
सभी गुणों को नम्रता, अय 'चन्दन' चमकाय ।।

कितनेही गुण क्यों न हो, संग अगर हो गर्व ।
विष-मिश्रित पक्वान्न ज्यों, 'चन्दन' निष्फल सर्व ।।

'चन्दन' जिसके कोष सब, थे कुबेर सम सर्व ।
कहिये उस लंकेश का, रहा कही क्या गर्व ?

कौरव सौ थे इसलिये, बल का था अभिमान ।
'चन्दन' मगर बताइये, उनका कहाँ निशान ?

भूल गया था मौत को, वह अभिमानी कंस ।
कहो कही 'चन्दन' रहा, उसका बाक़ी वंश ?

'चन्दन' इस संसार को, देखो नज़र पसार ।
मानी से नफ़रत करे, नम्र नरन से प्यार ।।

कुछ तो नर ! सत्कर्म कर, जीवन सफल बनाय ।
जिससे 'चन्दन' अन्त मे, तू न अरे ! पछताय ॥

रहो किनारे जगत से, समझ जगत की चाल ।
फसे न जैसे जाल मे, मारुत 'चन्दन लाल' ॥

आखे देखे बहुत कुछ, सुने बहुत कुछ कान ।
पर 'चन्दन' मतिमान वह, मौन रहे हर स्थान ॥

बहुत समय के साथ से, घट जाता है प्यार ।
अत: देर तक मत बनो, कभी किसी पर भार ॥

जिसके नीचे हो किया, अय 'चन्दन' विश्राम ।
उसी विटप को तोडना, महामूढ़ का काम ॥

कहते हैं, करते नही, जो 'चन्दन' नादान ।
दुनिया भर के निन्दते, उन्हें सभी विद्वान ॥

जो चाहो 'चन्दन' मिले, अच्छा ही परिणाम ।
तो जल्दी में कीजिए, कभी न कोई काम ॥

जिससे 'चन्दन' बहुत हो, पीछे पश्चाताप ।
कोई ऐसा काम तो, करें कभी नहिं आप ॥

दूर करे इनसान के, सारे जो दुख दोष ।
'चन्दन' उसका नाम शुभ, है 'मन का सन्तोष' ॥

धन को ही ईमान औ— समझे जो भगवान ।
अय 'चन्दन' नहि दूसरा, उस-सा है नादान ॥

थक करके ही वीच में, वैठ नही जो जाय ।
जो भी चाहे चीज़ वह, 'चन्दन' आखिर पाय ॥

रसना का ही जीतना, सव से कठिन कहाय ।
'चन्दन' इसकी जीत से, सव कुछ जीता जाय ॥

अमल विना भव फन्द से, 'चन्दन' मुक्ति न होय ।
विना किये जल-पान क्या ? प्यास वुझाता कोय ?

अद्भुत और महान जो, वस्तु जगत दरम्यान ।
'चन्दन' कहते है सभी, उसको ही 'इनसान' ।

'चन्दन' अच्छे काम को, करे शीघ्र ही आप ।
अवसर खोने पर पड़े, करना पश्चाताप ॥

जग-जीवो से वैर जो, रखता 'चन्दन लाल' ।
पा सकता नहि शान्ति-सुख, वह जन तीनों काल ॥

तीक्षणता तलवार-सी, तन-मन सब बेचैन ।
'क्रोध' उसे 'चन्दन' कहें, अरुण वर्ण द्वय नैन ॥

सिवा स्वयं के न दिखे, कोई भी गुणवन्त ।
'चन्दन' उसको 'मान' है, कहते सारे सन्त ॥

'चन्दन' कहना और कुछ, करना पर कुछ और ।
'माया' नामक पाप है, ठग विद्या-सिर मौर ॥

किञ्चित भी सन्तोष नहि, निन्दित कर्म कमाय ।
भव-भव मे भटकाय जो, 'चन्दन' 'लोभ' कहाय ॥

दोषी जन जिससे दिखे, अथ 'चन्दन' गुणधाम ।
असर सचाई का नही, 'राग' उसी का नाम ॥

गुण भी जिससे दोष ही, 'चन्दन' दिखे हमेश ।
जन्म-जन्म दे दर्द-दुख, पाप वही है 'द्वेष' ॥

नमक नीर मे जिस तरह, 'चन्दन' घुल-मिल जाय ।
वैसे सब सुख घोल दे, 'कलह' वही कहलाय ॥

जिन दोषो का है नही, कोई नाम-निशान ।
उसका ही आरोप है, 'चन्दन' 'अभ्याख्यान' ॥

जिस में हो हरएक ही, भूपों का भी भूप ।
जीवन का सबसे अधिक, पावन 'बचपन रूप' ।।

'चन्दन' फैशन क्यों करे, हो जिसका मन शुद्ध ।
फैशन सारे जानिये, मन की शुद्धि-विरुद्ध ।।

नहि नेता जी, नागरिक— सच्चे है दरकार ।
जिससे अय 'चन्दन' बने, स्वर्ग तुल्य ससार ।।

सच्चे सुखका चाहिये, जो 'चन्दन' भण्डार ।
बाल, वृद्ध पर कीजिये, करुणा की बौछार ।।

चाहे दुनियादार है, चाहे है वह सन्त ।
पाता पर-सद्गति सदा, 'चन्दन' करुणावन्त ।।

'चन्दन' जैसा काम हो, हो वैसा परिणाम ।
इमली से इमली मिले, मिले आम से आम ।।

पलटे से पलटे नहीं, अय 'चन्दन' तक़दीर ।
कर्म कमाए भोगते, राजा-रक - फकीर ।।

'चन्दन' चन्दा क्यों बने, जब धन्धा अन्याय ।
बन्दा अन्धा, स्वार्थमय, गन्दा पथ अपनाय ।।

कामी का सुमरन किये, उपजत मन में काम ।
पावनता का हो उदय, सुमरे पावन नाम ॥

नर-नारी हर एक पर, चढ़ता वैसा रंग ।
जैसा भी उसको मिले, 'चन्दन' सग कु-संग ॥

तजा न 'चन्दन' लोभ-छल, तजे न विषय विकार ।
पढ़-पढ प्यारे ! पोथियां, कौन निकाला सार ?

'चन्दन' देखो श्वान को, कैसा है नादान ।
अपना भाई देख कर, लेना चाहे प्राण ॥

'चन्दन' चाहे काग मे, रूप, रंग नहि बोल ।
जाति-प्रेम पर देखिये, कैसा है अनमोल ॥

निश-दिन सिनमा रेडियो, फैंक रहे जो लहर ।
'चन्दन' कहता है उसे, मारक मीठा जहर ॥

बाना, खाना देश का, गया भाड़ में शुद्ध ।
फैशन, मदिरा-मास ने, भ्रष्ट बनाई बुद्ध ॥

अमल बिना सब व्यर्थ हैं, पढे, पढ़ाए ग्रन्थ ।
पहुचे 'चन्दन' किस तरह, चले न जब तक पन्थ ?

सुख का नहि अनुभव करे, जो थोडा धन पाय।
'चन्दन' ज्यादा धन उसे, कैसे सुखी बनाय?

कार्याकार्य, भय, अभय, वा, बन्ध, मोक्ष का ज्ञान।
जिससे हो 'चन्दन' सही, 'सात्विक' प्रज्ञा जान ॥

माने धर्म-अधर्म को, और धर्म को पाप।
उसको 'चन्दन' 'तामसी', प्रज्ञा समझे आप ॥

प्राय: पढ़ना तो यहाँ, जाने है हर कोय।
पर पढना क्या चाहिये? पता किसी को होय ॥

छोटा हो चाहे बड़ा, करो सभी से प्रेम।
अय 'चन्दन' बिन प्रम के, कही कुशल नहि क्षेम ॥

अय 'चन्दन' यह सत्य ही, सब कहते विद्वान।
'जितना छोटा आदमी, उतना मोटा मान' ॥

अन्तर 'चन्दन' है नही, मनुज-मनुज के बीच।
'उत्तम' उत्तम कर्म से, नीच कर्म से 'नीच' ॥

इच्छाए जो जीतता, वही जीतता 'चित्त'।
इच्छाओ का जीतना, बडा कठिन है मित्त !

बाहर के कुछ और तो, भीतर के कुछ और ।
दुर्जन के 'चन्दन' लखो, बगुले जैसे तौर ॥

नही काम की अधिकता, बनती सिर का भार ।
अनियमितता ही काम की, 'चन्दन' डाले मार ॥

'चन्दन' मन ही वस्त्र है, रग पुण्य औ' पाप ।
सोच-समझ कर रंग ले, हो नहि पश्चाताप ॥

करने मे दौलत जमा, खो मत उम्र सुजान !
'चन्दन' धन है ठीकरी, जीवन रतन समान ॥

दया-भावना से करे, शासन जो भूपाल ।
रहे हमेशा फूलता, फलता 'चन्दन लाल' ॥

लोग लिफ़ाफा बन चले, अन्दर पोलमपोल ।
इसीलिए 'चन्दन' बजे, दुराचार के ढ़ोल ॥

दुरुपयोग जिसका करे, 'चन्दन' जन नादान ।
कहते सब ज्ञानी-गुणी, धन वह जहर समान ॥

'लाओ पैसा बाप से, वरना जाओ भाग ।
पत्नी को दुख दे रहे, यह कह काले नाग ॥

अभो बना फिर नहिं बने, अय 'चन्दन' तक़दीर ।
आग लगे खोदे कुआं, कैसे निकले नीर ?

'चन्दन' अरे मलाह! क्यों, नयनन भरा खुमार ।
अभी नाव मंझधार है, संभल पकड़ पतवार ॥

पाता है जन जागता, सोता सब कुछ खोय ।
'चन्दन' मंज़िल दूर है, राही ! क्यों तू सोय ॥

तुझको राही ! राह में, बहुत मिलेंगे फूल ।
बचना उनसे इस तरह, जैसे तीखे शूल ॥

छल-छन्दों से जोड़ता, जिसको 'चन्दन लाल' ।
मुंदते ही बस नयन द्वय, सभी पराया माल ॥

धर्म-कर्म कर लीजिये, जब तक देह समर्थ ।
पीछे अय 'चन्दन' मगर, है पछताना व्यर्थ ॥

'चन्दन' सुख दो और को, जो हो सुख मंजूर ।
मिलते हैं अंगूर ही, बीज बेल अंगूर ॥

सिर पर धर अमृत घड़ा, अमर हुआ नहिं कोय ।
शास्त्र-श्रवण त्यों अमल बिन, 'चन्दन' निष्फल होय ॥

जो करना कर लीजिये, पहले ही कल्याण ।
'चन्दन' होगा कुछ नही, अन्त चले जब प्राण ॥

बुद्धिहीन को व्यर्थ है, शास्त्र-ज्ञान - भण्डार ।
अन्धे को 'चन्दन' यथा, दर्पण है बेकार ॥

कर सकते वे गुण नही, पैदा अपने बीच ।
औरों का यश देख यों, 'चन्दन' जलते नीच ॥

काटा चन्दन भी नही, बने गन्ध से हीन ।
निर्धनता में भी तजे, सज्जनता न कुलीन ॥

दुखिया-दीन-अनाथ पर, होकर करुणावान ।
सकट हरने का सदा, रखना 'चन्दन' ध्यान ॥

चचलता 'चन्दन' सदा, हलकापन प्रगटाय ।
धन्य पुरुप गम्भीरता, जिसमें पाई जाय ॥

सेवा से मेवा मिले, अगर करे मन लाय ।
'चन्दन' सेवा वृद्ध की, कभी न निष्फल जाय ॥

जो पाना ससार से, प्यार और सत्कार ।
लोक-सुधारक बाद बन, आपा प्रथम सुधार ॥

जहाँ लाभ हो वह कहे, 'चन्दन' देख प्रसंग ।
श्वेत वस्त्र पर ही चढे, जैसे पक्का रंग ।।

द्वेषी से तो दूर है, पर प्रेमी के पास ।
अय 'चन्दन' भगवान की, घट में करो तलाश ।।

गुण ग्राहक माना गया, मानव गुणी महान ।
'चन्दन' सबसे सर्वदा, पाता वह सम्मान ।।

अक़लमन्द है बोलता, हो जब मतलब ख़ास ।
व्यर्थ बोलने को सभी, हैं कहते बकवास ।।

मन के लड्डू फोड़ कर, काम बनें नहिं कोय ।
'चन्दन' सतत प्रयास से, सदा सफलता होय ।।

'चन्दन' नित्य प्रसन्न जो, रहते हैं नर-नार ।
उनके सदा दिमाग़ मे, आते नये विचार ।।

'चन्दन' सुख लख और का, जलते जडमति लोग ।
जिसका कही इलाज नहिं, बुरा-डाह का रोग ।।

खुश रखने का सभी को, यत्न करे जो कोय ।
खुश उससे 'चन्दन' कभी, कोई भी नहिं होय ।।

जीवन में नहिं कठिन कुछ, सब कुछ है आसान ।
एक वात 'चन्दन' कठिन, आत्म-तत्त्व का ज्ञान ।।

हो सकते है दूर सब, दुनिया भर के पाप ।
सच्चे दिल से जो करे, 'चन्दन' पश्चाताप ।।

कांटों की वाड़ी जगत, संभल-संभल रख पैर ।
वरना विष वन जायगी, पगले ! तेरी सैर ।।

जिसे 'शान्त जीवन' कहें, अक़लमन्द इनसान ।
उससे अच्छी चीज नहि, और जगत दरम्यान ।।

तृष्णा का है जीतना, अय 'चन्दन' दुश्वार ।
तृष्णा जिसने जीत ली, जीत लिया ससार ।।

'चन्दन' चाहे आंख का, है मिलना आसान ।
मिलना सम्यग्दृष्टि का, मुश्किल मगर महान ।।

लो, वतलाऊं आपको, सुने ध्यान से आप ।
मन में जो खटके वही, अय 'चन्दन' है 'पाप' ।।

टूटे छप्पर मे घुसे, ज्यो 'चन्दन' वरसात ।
गाफ़िल मन मे पाप त्यो, है घुसते दिन-रात ।।

पृथ्वी पर आया नही, इसको रहना रास।
'चन्दन' चाहे आदमी, चन्द्रलोक में वास॥

लगी चोट तो पकड़ पग, करें रोष-अफसोस।
चले न आखें खोलकर, किसका 'चन्दन' दोष ?

खर्च न शिष्टाचार पर, पैसा इक भी आय।
मगर खरीदा बहुत कुछ, इससे 'चन्दन' जाय॥

जिसने अपने आप को, ठीक लिया पहचान।
सचमुच 'चन्दन' हो गया, उसको ईश्वर-ज्ञान॥

पी करके भी आम-रस, करे न कोकिल मान।
टर्राते मेंढक फिरे, कर कर्दम-जल पान॥

'चन्दन' मन से दो घड़ी, भक्ति करे जो कोय।
बिन मन शत भी वर्ष की, उसके तुल्य न होय॥

दीनो के दुख-दर्द मे, अगर न तड़पे प्राण।
बन करके भू-भार ही, आया तू इनसान।

महावीर का नाम लो, अय 'चन्दन' हर वक्त।
ऊंचे उठते ही गए, महावीर के भक्त॥

॥ ३६६ दोहे पूर्ण ॥

यह इनसानी ज़िदगी,
जिनसे हो ख़ुशहाल ।
हर दोहे में बात 'दो',
पढ़िये 'चन्दन लाल' ॥

एक करे उपकार जो, जो माने उपकार ।
दो दुर्लभ संसार मे, अय 'चन्दन' नर-नार ।।

धर्महीन शासक जहा, दुखी वहाँ सब लोग ।
धर्म-निरत शासक जहा, तह 'चन्दन' नहि शोक ।।

दोप अन्य के देखना, है 'चन्दन' आसान ।
दोप स्वय के देखना, लेकिन कठिन महान ।।

पता पठित का, मूढ का, लगने दे नहि मौन ।
वातचीत से जानिये, 'चन्दन' है क्या कौन ।।

करे कलकित प्रथम तो, पीछे पश्चाताप ।
नीच नरन के सग मे, दो 'चन्दन' सन्ताप ।।

'चन्दन' वेड़ा वाधते, रहे अज्ञ नर-नार ।
सन्त, गुणी, ज्ञानी मगर, पहुच गए भव-पार ।।

कोई भी कुछ भी कहे, करो नही परवाह ।
कहने से कोई वने, चोर न 'चन्दन' शाह ।।

पामर जन को पाप है, करने ज्यो आसान ।
धर्मी को 'चन्दन' वही, मुश्किल मगर महान ।।

दान दिया या खा लिया, धन है अपना वही ।
वाकी पर का है सभी, कहता 'चन्दन' सही ।।

'दौलत-स्वामी' एक है, दूजा 'दौलत-दास' ।
दोनो मे अन्तर यथा, अवनि और आकाश ।।

लिखे पुस्तके श्रेष्ठ या, कर्म करे यश-योग ।
मृत्यु वाद भी आपको, तव नहि भूले लोग ।।

राग-द्वेष मन मे नही, रखता जो इनसान ।
वही वनेगा एक दिन, अय 'चन्दन' भगवान ।।

वैरी जन अपकार औ', करे मीत उपकार ।
अन्तर वैरी, मीत का, 'चन्दन' यही विचार ।।

अधिक दूध से उज्ज्वला, कीर्ति कही निश्शक ।
काले काजल से अधिक, 'चन्दन' मगर कलक ।।

अधिक तरणि से तेज जो, करो आख का वोध ।
दाहक पावक से अधिक, अय 'चन्दन' है क्रोध ।।

'कठिनवचन' अतिकठिन है,कठिन जिसतरह लोह ।
मादक मदिरा से अधिक, अय 'चन्दन' है मोह ।।

जो चाहो 'चन्दन' रहे, दूर दुरित - सन्ताप ।
कहना मुख से धर्म ही, कभी न कहना पाप ॥

'चन्दन' आलस है भला, अगर पाप में होय ।
धर्म-कर्म में भूल भी; करे न आलस कोय ॥

'चन्दन' चाहो खोलना, जो स्वर्गों का द्वार ।
दूर दुखी का दुख करो, करो सदा उपकार ॥

बने प्रेम से स्वर्ग जग, बने द्वेष से नर्क ।
'चन्दन' की इस बात में, नही जरा भी फ़र्क ॥

जितने जग के जीव हैं, हंसे कभी नहि कोय ।
नर, सुर, ही 'चन्दन' सदा, केवल हंसते दोय ॥

जिसमें 'चन्दन' बन पड़े, अच्छी कोई बात ।
'वही सुहाना दिवस है, वही सुहानी रात ॥

'सुन्दर भी मदहोश हो', 'दर्शक भी मद होश' ।
'चन्दन' तन-सौन्दर्य मे, बहुत बड़े दो दोष ॥

खाना कुछ नहिं चाहिये, चलते-फिरते वक्त ।
'चन्दन' पढ़ना लेट कर, निषिध समझिये सख्त ॥

'उत्सर्पिणी' 'अवसर्पिणी, दो विध का यो काल।
'कालचक्र' के नाम से, चलता 'चन्दन लाल' ॥

एक नियम 'उत्सर्ग' है, एक नियम अपवाद।
दोनो को ही चाहिये, 'चन्दन' रखना याद ॥

'उपादान' 'निमित्त' ये, 'कारण' दो बतलाय।
'चन्दन' दोनो बिन मिले, कुछ भी नहिं हो पाय ॥

'चन्दन' 'साता' एक है, एक 'असाता' जान।
'वेदनीय' के भेद दो, गए भाख भगवान ॥

'चन्दन' एक 'अभव्य' तो, 'भव्य' दूसरा जान।
किसी किस्म का अन्य नहि, जीव जगत दरम्यान ॥

'श्रुत', 'चरित्र' भेद से, चन्दन दो विध-धर्म।
दो विध के यो धर्म का, सदा समझिये मर्म ॥

'चन्दन' चन्दा-सा अगर, यह वन्दा वन जाय।
'करे उजेला जगत मे', 'शीतलता छिटकाय' ॥

अपयश का सौ साल भी, जीना विल्कुल व्यर्थ।
पल जीना यश-युक्त भी, रखता 'चन्दन' अर्थ ॥

हो नहिं दुर्जन, सर्प के, आशय के अनुसार।
टिका हुआ है इसी से, अय 'चन्दन' संसार॥

अय 'चन्दन' जिनके नहीं, कुल, धन सम ये दोय।
प्राणिग्रहण औ मित्रता, सफल वहां नहि होय॥

थोड़े से ऊपर उठें, थोड़े से झुक जायं।
तुला, दुष्ट को एक-सा, 'चन्दन' विज्ञ वतायं॥

अच्छी आदत डालना, ज्यों 'चन्दन' दुश्वार।
वुरी आदतें छोड़ना, तैसे कठिन अपार॥

'पाप रहित है' 'शान्त है', 'चन्दन' जिसका चित्त।
पाता परमानन्द है, ऐसा योगी नित्त॥

मन वश करने के कहे, साधन दो ही खास।
'चन्दन' इक 'वैराग्य' है, दूजा है 'अभ्यास'॥

जैसे जीवन मे भरे, भले-वुरे आचार।
आते आखिर वक्त मे, 'चन्दन' वही विचार॥

दीन-दुखी इम्दाद जो, चाहें 'चन्दन लाल'।
'कभी न अपमानित करे, 'दें नहि झूठा आल'॥

जिनका अय 'चन्दन' रहे, अटल दीन - ईमान ।
नर-नारी-सा दूसरा, कौन जगत दरम्यान ।।

पल-पल बीते जा रहे, जीवन, यौवन दोय ।
सुरदुर्लभ नर-जन्म को, क्यों 'चन्दन' फिर खोय ?

देह-भेद नर-नार में, भेद अन्य नहिं जान ।
'चन्दन' वन्धन काट कर, हों दोनों भगवान ।।

जो चाहें 'चन्दन' चुभें, कभी न पग में शूल ।
'करे पाप नहिं आप ही', 'न करवाएं भूल' ।।

जगत जिन्होने है किया, 'चन्दन' सदा गुलाम ।
नाम एक का 'काम' है, और दूसरा 'दाम' ।।

'चन्दन' चाहे जिस तरफ, देखे नयन पसार ।
सुखी भक्त भगवान के, दुखी सभी संसार ।।

'जीवन की आशा नही', 'नही मृत्यु की भीति ।
सच्चे साधक की यही, सरल परीक्षा-रीति ।।

सद्धर्मी इनसान का, शुभ होना वलवान ।
पापी तो निर्वल भला, है कहते भगवान ।।

लघुशंका का रोकना, आँखें करता नष्ट ।
'चन्दन' मल का रोकना, अनगिनती दे कष्ट ॥

'चन्दन' केवल ग्रन्थ के, पण्डित फिरे अनेक ।
सच्चा पण्डित पर वही, जिसमें 'विनय' 'विवेक' ॥

ज्ञान विना नहि आत्मा, आत्म विना नहि ज्ञान ।
'चन्दन' चन्दा-चान्दनी, जैसे दोनों जान ॥

करे अव्रती भाव की, हिंसा निशदिन नव्य ।
करे भूल से संयमी, 'चन्दन' हिंसा द्रव्य ॥

'चन्दन' 'सद्गुण हों प्रगट;' 'उन्नत हो आचार' ।
एक इसी उद्देश्य से, चाहिए धर्म-प्रचार ॥

बुद्धिमान की आँख में, करती शर्म निवास ।
'चन्दन' मूर्ख के मगर, कभी न फटके पास ॥

'चन्दन' देखो देश के, बूढ़े, बाल, जवान ।
'अबला' अंखियन में बसे, बसता 'तबला' कान ! !

रोटी हो जो पास तो, निर्धन देगा बांट ।
एक मुलक के बाद पर, चाहे और सम्राट ॥

अमृत भी नहिं पीजिये, जो अज्ञानी देय।
ज्ञानी विष भी दे अगर, चन्दन वह भी लेय ।।

दुनिया भर के कह गये, सन्त, गुणी, विद्वान।
अय 'चन्दन' 'ब्रह्मचर्य' 'तप', बिन ही सलिल स्नान ।।

रक्षक रक्षक को मिले, भक्षक भक्षक पाय।
कुदरत का 'चन्दन' लखो, अहो ! अनोखा न्याय !

विद्या, सद् आचार से, जो जन है सम्पन्न।
नरो, सुरों में, सर्व में, अय 'चन्दन' वे धन्य !

वैरी से बढ वैर तो, माता से बढ़ प्यार।
करने वाला जगत में, है चन्दन दुश्वार ।।

तन, मन के सौन्दर्य में, कैसी 'चन्दन' होड़।
पहला है जो लाख तो, दूजा कहो करोड़ ।।

आदमियत 'चन्दन' सदा, देती दो पैगाम।
बनो आदमी, कर चलो– नेकी के कुछ काम ।।

'चन्दन' शुभ स्वाधीनता, भले नरक की होय।
पराधीनता स्वर्ग की– भी नहिं चाहे कोय ।।

जो कुछ करना कीजिये, सोच-समझ मन माहिं ।
'चन्दन' 'सरिता' औ समय, करें प्रतीक्षा नाहि ॥

वे-मौके जो बोलता, उसे मूढ पहचान ।
वे-मौके नहि बोलता, 'चन्दन' चतुर-सुजान ॥

आए जग मे रिक्त थे, कुछ भी नहिं था साथ ।
'चन्दन' चलते वक्त भी, खाली होगे हाथ ॥

चाहे दुनियादार हो, चाहे 'चन्दन' सन्त ।
जीव रुले 'मिथ्यात्त्वी', तरता 'समकितवन्त' ॥

वारातो के झगड़े, औ साझे का काम ।
'चन्दन' अच्छे आदि में, अन्त अशुभ परिणाम ॥

एक किया था कस ने, एक 'दशार्ण' भूप ।
'चन्दन' देखो दर्प के, भिन्न-भिन्न दो रूप ॥

'चन्दन' 'मम्मी' अव कहो, मां कहने में पाप !
खवरदार ! जो वाप को, कहा किसी ने वाप !!

पति-पत्नी में है जहां, 'चन्दन' नहीं कलेश ।
घर है वह वैकुण्ठ-सा, लक्ष्मी वसे हमेश ॥

है त्रिशूल या वज्र का, स्पष्ट चिन्ह जिस भाल।
सुखदायक, नायक, गुणी, जन वह 'चन्दनलाल' ॥

सदाचार से, ज्ञान से, जो हीना इनसान।
'चन्दन' अधे महिष-सा. नर वह जग दरम्यान ॥

जन्म-मरण के बीज बस, राग-द्वेष दो जान।
'चन्दन' मेटे जो इन्हे, विश्व-वन्द्य भगवान ॥

सोने से भी युद्ध में, है लोहा अनमोल।
अय 'चन्दन' पर बुद्धि का, कोई मोल न तोल ॥

कठिन वहुत वनना भला, बुरा बहुत आसान।
मुश्किल मदिरा छोड़ना, मुश्किल क्या मधुपान ॥

माया, ममता के यहाँ, वहुत विछे है जाल।
संभल-संभल हर क़दम, चलना 'चन्दनलाल' ॥

सहज सरलता, सादगी, नजर कही ही आय।
जीवन आज वनावटी, 'चन्दन' बनता जाय !!

कौन वड़ाई मधुर जल, खारा अगर वनायं।
करे कटुक को जो मधुर, 'चन्दन' कला कहाय ॥

जीवन तो 'चन्दन' सदा, 'सुख-दु:ख करे प्रदान ।
दोनों का ही मृत्यु पर, मेटे नाम-निशान ॥

हर्ष हमेशा ही रहे, नेक पुरुष के पास ।
नीच नरन का मन मगर, 'चन्दन' नित्य निराश ॥

अय 'चन्दन' धर्मी, गुणी, जीवित दो इनसान ।
धर्महीन-गुण रहित का, जीवन मृतक समान ॥

'चन्दन' घुसना सरल है, दुनिया के दरम्यान ।
इस फन्दे से निकलना, मुश्किल मगर महान ॥

सड़े पान के संग से, सड़ जाता है पान ।
'चन्दन' चन्दन-विटप से, महके वन - उद्यान ॥

'चन्दन' दिखे बुराइयाँ, जितनी जग दरम्यान ।
मात 'कु-सगति' सबन की; और पिता 'अज्ञान' ॥

मर्यादा - पालन करे, हर हालत में नेक ।
पर, मर्यादा तोड़ते, 'चन्दन' दुर्जन देख ॥

सोच अधिक पढ़ अल्प पर, ज्यादा सुन कम बोल ।
बोल-बोल-पर व्यर्थ नहिं, जन्म रोल अनमोल ॥

'मान सुशीला का नही, नहि सु-पात्र को दान ।
उस घर को 'चन्दन' गुणी, है कहते शमशान ॥

अन्धा-वहरा है नही, जिसको कहते प्यार ।
अन्धी-वहरी वासना, 'चन्दन' करो विचार ॥

'चन्दन' लोभी, स्वार्थी, दिखें अधिक अब लोग ।
मानव मुश्किल से मिले, मानव कहने योग ॥

मुक्त हुए विन शान्ति-सुख, हो नहिं 'चन्दन' प्राप्त ।
मुक्ति जिसे भी चाहिये, करदे कर्म समाप्त ॥

देना नही अपात्र को, कभी शास्त्र का ज्ञान ।
वञ्चित रहे सुपात्र नहि, इसका रक्खो ध्यान ॥

अय 'चन्दन' हैं कह गए, महावीर भगवन्त ।
सन्त सदा है जागते, सोए सदा असन्त ॥

चलना प्रभु-उपदेश पर, जपना प्रभु का नाम ।
'चन्दन' तरने के लिये, दो ही काफ़ी काम ॥

॥ १८६ दोहे पूर्ण ॥

जिन से विकसित सुख-सुमन,
हो फिर यश कल्याण ।
तीन बात' 'चन्दन' पढ़ें,
हर दोहे दरम्यान ॥

अय 'चन्दन' इनसानियत, अगर आप में रच।
इधर-उधर नहिं फेंकिये, कंकर, कांटे, कच॥

अत्याचारी पुरुष को, या तो धर्म सुनाय।
'चन्दन' रखिए मौन या, चला वहां से जाय॥

'चन्दन' तृष्णा रोग है, भूख, बुढापा रोग।
देह-रोग को ही अहो! रोग कहें सब लोग॥

संचय कीजे पुण्य का, करे न संचय पाप।
रखना 'चन्दन' शुद्ध मन, जो चाहे सुख आप॥

सदाचार से सम्पदा, सदाचार से यश।
सदाचार से स्वर्ग भी, 'चन्दन' मिले अवश्य॥

क्रोध न 'चन्दन' जो करे, बोले मधुर जबान।
याचक को दिल खोल दे, जन वह देव-समान॥

सेवे नहिं मां-बाप को, ऋण ले जो नट जाय।
लाछित गुणियो को करे, नर चण्डाल कहाय॥

हित-मित-मीठा बोलना, भूलो का स्वीकार।
सेवा दुखिया-दीन की, अय 'चन्दन' दुश्वार॥

शारीरिक औ मानसिक, वाचिक तीजा जान।
दुराचार ये तीन ही, 'चन्दन' दुख की खान॥

शारीरिक औ मानसिक, वाचिक तीजा जान।
सदाचार ये तीन ही, 'चन्दन' सुख की खान॥

शारीरिक औ मानसिक, वाचिक तीजी जान।
पवित्रताएं तीन ये, 'चन्दन' सुख की खान॥

धर्म, देव, गुरुदेव है, कहे तीन ये तत्त्व।
'चन्दन' भटके नहि कभी, समझे अगर महत्व॥

'चन्दन' गर्भ, सम्मूर्छिम, और कहा उपपात।
तीन तरह का जन्म यो, दुनिया मे विख्यात॥

ऊंचा, नीचा, तीसरा— तिरछा 'चन्दन' लोक।
तीनो में ही जीव-जड़, घूम रहे बे-रोक॥

असि, मसि, कृषि है तीन ये, कर्म जगत दरम्यान।
तीनो से आजीविका, करता सकल जहान॥

सम्यग्, मिथ्या, मिश्र यो, 'दर्शन' के त्रय भेद।
'चन्दन' इन मे प्रथम ही, है हरता दुख - खेद॥

आलस औ उद्दण्डता, तीजे अपने पाप ।
दया करे नहिं भूल कर, इन पर 'चन्दन' आप ॥

कटुक कहे नहिं दुखित को, दुख से नहिं घबराय ।
याचक को मत 'ना' कहे, 'मानव' वह कहलाय ॥

दीन-दुखी के निकट, औ– सन्तो के दरबार ।
'चन्दन' जाना दौड़ कर, सुनें जहा बीमार ॥

मालिक और महन्त ना, नेता बनना भूल ।
'चन्दन' चिन्ता खायगी, वरना जान फ़ज़ूल ॥

आर्त रुग्ण अन्त्यज सभी, हैं आखिर इनसान ।
'चन्दन' नफरत मत करो, गए भाख भगवान ॥

विना वुलाये जिस तरह, अय 'चन्दन' दुख आय ।
आय त्यो-धन, शान्ति, सुख, दृढ़ धर्मी वन जाय ॥

पर-निन्दा, पर-भामिनी, और पराया माल ।
चाहे जो सुख-स्वर्ग ये, तजदे 'चन्दनलाल' ॥

'चन्दन' दूंगा दान कव, और वनूंगा सन्त ।
श्रावक भावे भावना, कव हो अनशन अन्त ॥

पाकर 'चन्दन' सम्पदा, पाकर आदर-मान।
पाकर पर के दोष नहिं, फूलो फलो समान।।

पर-धन पर नहिं ईर्ष्या, निज-धन पर नहिं मान।
धन मिटने पर शोक नहिं, 'चन्दन' वही महान।।

अवगुण न कह—गुण कहे, सब से मीठे बोल।
बने सहायक विनय से, 'चन्दन' जन अनमोल।।

लाभ-हानि जो परखते, निर्धन जन से प्यार।
करे बुराई पर भला, वे बिरले संसार।।

पहली 'ज्ञानाराधना', 'दर्शन' और 'चरित्र'।
तीनो ही 'आराधना', 'चन्दन' परम पवित्र।।

पहली 'ज्ञान-विराधना', 'दर्शन' और 'चरित्र'।
तीनों कही 'विराधना', अय 'चन्दन' अपवित्र।।

'मनोयोग' 'चन्दन' प्रथम, 'वचनयोग' फिर जान।
'काय-योग' है तीसरा, 'तीनयोग' पहचान।।

करते है जो जीव को, धर्म-कर्म से हीन।
'रस' 'माता' औ 'ऋद्धि' ये, 'चन्दन' 'गारव' तीन।।

'चन्दन' दकना, विकलता, गिरना हो वेहोश ।
तीनो मदिरा में लखें, सन्निपात-से दोष ॥

मानव पेट-प्रपञ्च से, भटके देश-विदेश ।
सेवे सतत असेव्य को, वोले झूठ विशेष ॥

जिसके कुल का, शीलका, आश्रय का नहि ज्ञान ।
'चन्दन' संगति भूल भी, करे न प्रज्ञावान ॥

वनिता जहां अशिक्षिता, जहा अशिक्षित वाल ।
दुर्जन हो जिस गेह मे, नासे 'चन्दन लाल' ॥

आप्त—वैर से मरण हो, शत्रु-वैर धन-ह्रास ।
पर, मुनियो के वैर से, कुल का 'चन्दन' नाश ॥

मद्य, मांस का, द्यूत का, भूल न लीजे नाम ।
अन्त वुरे का है वुरा, अय 'चन्दन' परिणाम ॥

मारा था, है मारता, मारेगा यह आज ।
करे जीव हिंसा सभी, इतने के ही काज ॥

वहुत गए, कुछ जा रहे, खडे वहुत तैयार ।
चला-चली का खेल है, अय 'चन्दन' संसार ॥

जो चाहो 'चन्दन' मिले, विजय और यश-मान ।
मात, पिता, गुरुदेव का, करो सदा सन्मान ॥

अय 'चन्दन' त्यागे बिना, द्वेष, दम्भ, अभिमान ।
हो सकता उन्नत कभी, कोई नहिं इन्सान ॥

काम, क्रोध को वैर को, दिल से जो बिसराय ।
वही तपस्या-लीन मुनि, अय 'चन्दन' कहलाय ॥

जो 'चन्दन' तृष्णा कटी, बन्धन कटे तमाम ।
जन्म, जरा का, मरण का, कहिये क्या फिर काम ॥

तजिये भूत भविष्य की, 'चन्दन' चिन्ता व्यर्थ ।
वर्तमान की कीजिये, जिसका है कुछ अर्थ ॥

'चन्दन' देखे नहिं बुरा, बुरा न करता और ।
बुरा कभी भी नहिं सुने, वही नेक सब ठौर ॥

'चन्दन' यौवन मे 'जरा', और स्वास्थ्य मे रोग ।
मृत्यु छुपी है जन्म मे, अहो! लखे नहिं लोग ॥

स्नेह, सरलता, सौम्यता, तीन जिन्हों में पायं ।
'चन्दन' सज्जन वे भला, क्यों न देव कहलायं ?

'चन्दन' की इस वात मे, नहीं जरा भी फर्क ।
दाव-पेच, छल, कलह से, गृह बनेगा नर्क ।।

क्या रहस्य किसके छुपा, 'चन्दन' मन दरम्यान ।
वाणी से, मुख-वर्ण से, नजरों से पहचान ।।

असभ्यता, उद्दण्डता, दुर्विनीतता तीन ।
दुर्गुण रखता है सदा, 'चन्दन' जन अकुलीन ।।

'चन्दन' चंचल, चपल है, चपला-चमक समान ।
तन, धन, यौवन का अरे! क्या करता अभिमान ?

'चन्दन' जिन विन व्यर्थ सव, किया-कराया धर्म ।
जगती मे सब से वड़े, शान्ति, शील औ शर्म ।।

उत्तम जन 'चन्दन' करे, सन्त जनो का सग ।
धर्म, शर्म, शुभ कर्म का, चढे करारा रंग ।।

शील-सुधा सेवे सदा, माता सम परनार ।
'चन्दन' सच्चे भक्त को, विष-से विषय विकार ।।

तन से, मन से, वचन से, जीव कमा कर पाप ।
'चन्दन' तीनों लोक मे, फिरे भटकता आप ।।

दभ, झूठ, स्वार्थ न दे, जब तक 'चन्दन' छोड ।
सच्ची मिले न मित्रता, कोशिश करो करोड़ ॥

'चन्दन' दिखने मे दिखे, चाहे बात विचित्र ।
शोक, क्रोध के, दम्भ के, आसू हों अपवित्र ॥

सदाचार का, सत्य का, दया धर्म का और ।
कीजे सदा सदाग्रह, अय 'चन्दन' हर ठौर ॥

'करे अन्य अपकार जो,' 'करे आप उपकार' ।
'है वन मे सत्कार जो,' 'चन्दन' तीन विसार ॥

करे कु-सगति नहि कभी, करे सभी से प्यार ।
करे कमाई न्याय से, 'चन्दन' बेड़ा पार ॥

गुण मत निन्दो अन्य के, अपने मत गुण गांय ।
करे रज नही दान दे; तीन प्रतिष्ठा पाय ॥

'आत्म सयम' साथ मे, 'चन्दन' 'आत्मज्ञान' ।
हो 'आत्म विश्वास' फिर, निश्चय तव कल्याण ॥

मद्य, मास, अण्डे अहो ! राक्षस का आहार ।
समझदार इनसान यह, क्यों न करे विचार ॥

'रहन-सहन मे सादगी,' 'सदा दुरित से दूर' ।
'चन्दन' 'मितव्ययी पुरुष औ, तीन सुखी भरपूर ॥

झूठ तजे, हिंसा तजें, करे सुपात्र को दान ।
उम्र वटी हैं बान्धते, वे 'चन्दन' गुणवान ॥

झूठ कहे, हिंसा करे, खोटा दे फिर दान ।
अल्प उम्र है बान्धते, 'चन्दन' वे नादान ॥

सूक्ष्म परम–'प्रदेश' औ– 'समय' 'परमाणु' और ।
तीनों के ही खण्ड हो, नही किसी भी तौर ॥

नही भूलना भूल भी; 'चन्दन' रखना याद ।
लोभ, झूठ, निन्दा करे, जीवन को बर्बाद ॥

मुनियों को जो निन्दते, देश-द्रोह मे चूर ।
धर्म-कर्म से हीन से, रहना 'चन्दन' दूर ॥

दुखदायी है मूढता, 'युवा अवस्था खास ।
इससे भी है कष्टतर, 'चन्दन' पर-घर-वास ॥

अगर-मगर से कुटिल जन, दुर्जन दबी ज़बान ।
मुक्तकण्ठ सज्जन करे, गुणियो का गुण-गान ॥

[illegible]' जो दे अशुभगति, क्रन्दन-कष्ट-क्लेश।
तीन नाम है 'वैर' के, वैर, विरोध, विद्वेष ॥

अय 'चन्दन' उपकार है, जिनका विश्व विख्यात।
नाम पिता के तीन है, जनक, पिता औ तात ॥

पहले जन्म, विवाह फिर, मौत तीसरी जान।
मानव-जीवन की कही, घटना तीन प्रधान ॥

शान्त प्रकृति, शुद्ध फिर— हो आहार, विचार।
'चन्दन' नर सुर-तुल्य वह, भूतल का श्रृंगार ॥

भित्ति-चित्र है जिस तरह, अय 'चन्दन' निष्प्राण।
दया, सत्य से, शील से— हीन आदमी जान ॥

किया कौन-सा काम शुभ, कौन किया या पाप।
किया कौन नहिं काम शुभ, प्रतिदिन सोचे आप ॥

सदाचार नहिं, सत्य नहिं, दया न दिल दरम्यान।
कहिये कैसे फिर मिले, अय 'चन्दन' भगवान ॥

सहनशीलता, नम्रता, प्रेम-पूर्ण व्यवहार।
तीनों से वश कीजिये, अय 'चन्दन' संसार ॥

जिसके जीवन पर सभी, नारी-नर बलिहार।
स्नेह, सादगी, सरलता, सज्जन के शृंगार॥

क्रोध, कपट से, काम से, जिसका नहि सम्बन्ध।
लोक तथा परलोक में, पावे परमानन्द॥

शान्ति, शील औ शम नही, जिनके जीवन माहिं।
उभयलोक मे वे कभी, पाते हैं सुख नाहिं॥

जीवन में समता नही, सत्य नहीं सन्तोष।
मूढ फिरे सुख ढूंढते, अय 'चन्दन' अफ़सोस॥

धर्म, शर्म, शुभ कर्म का, जिसके मन मे वास।
अय 'चन्दन परमात्मा, समझो उसके पास॥

कोई कितना भी खपे, चाहे 'चन्दनलाल'।
दया, सत्य और शील विन, मुक्ति नही त्रैकाल॥

त्याग, त्रपा, तप-तीन ये, 'चन्दन' जिसके पास।
नर हो चाहे नार हो, करें अटल विश्वास॥

ज्ञानी, ध्यानी और फिर, दानी मिलें अनेक।
मनो विजेता जगत मे, विरला 'चन्दन' देख॥

वहुत-वहुत हो आपका,
जिनसे सद्व्यवहार ।
हर दोहे के वीच में,
वातें पढिये चार ॥

क्रोध, लोभ, भय, हास्य से, कहे झूठ इनसान ।
'चन्दन' चारों से बचे, जो चाहे कल्याण ॥

सदाचार युत सुत-सुता, सरल-सुशीला नार ।
निर्मल यश, वा स्वस्थता, सुखकर 'चन्दन' चार ॥

पण्डितजन का संग कर, पूज्य जनों को पूज ।
बच 'चन्दन' जन मूढ से, मर्म धर्म का बूझ ॥

पण्डित से अनपढ़ जले, धनियों से धनहीन ।
सन्त, सती से दुष्ट जन, अच्छों से अकुलीन ॥

विनय, मधुरता, सरलता, सदाचार से प्यार ।
'चन्दन' तन-सौन्दर्य में, चान्द लगाते चार ॥

अहंकार, शृंगार, मद, दुराचार से प्यार ।
'चन्दन' तन-सौन्दर्य मे, महा दोष ये चार ॥

अथ 'चन्दन' प्रभु-भक्त औ— कथनी-करनी एक ।
वक्ता दुर्लभ बहुत हैं, निर अभिमानी, नेक ॥

नृप-माता, मन्त्री तथा औ— रानी राजकुमार ।
'चन्दन' राजा-सम करें, इन से हर व्यवहार ॥

काम, क्रोध व लोभ है, चौथा है अज्ञान।
हिंसा के कारण कहे, 'चन्दन' चार प्रधान ॥

चाहें 'चन्दन' लोग जो, सच्ची जीवन-जीत।
मौत, बुढ़ापा, रोग, भय– से मत हो भयभीत ॥

स्वजन, पापी, मीत, रिपु– में जो भाव समान।
रखता है 'चन्दन' सदा, निश्चय ही कल्याण ॥

तन का, मन का, वचन का, और उपधि का ज्ञान।
सयम चार प्रकार यो, कहे 'वीर भगवान' ॥

निरभिमानी आदमी, सब को भारी भाय।
'यश', सम्पदा, ज्ञान, धन, 'चन्दन' चारों पाय ॥

'चन्दन' चुगली, कटुवचन, झूठ और बकवास।
चारों ही को झूठ की, किस्म जानिये ख़ास ॥

चेतन नाविक, नाव तन, है सागर ससार।
'चन्दन' चप्पू त्याग, ले, पहुंचो परले पार ॥

'धर्म' विश्व का सार है, धर्म-सार है—'ज्ञान'।
ज्ञान-सार 'संयम' सुखद, सयम का 'निर्वाण' ॥

क्रुद्ध मनुज राक्षस सदृश, महा भयंकर होय ।
सत्य, स्नेह, लज्जा दया, 'चन्दन' चारों खोय ।।

किया हुआ हो आपने, यदि 'चन्दन' उपवास ।
क्रोध, काम, निन्दा, अहं, के नहिं जाना पास ।।

सजे अकामी नहि कभी, निस्पृह ले नहिं धन ।
स्फुट वक्ता वंचक नही, मधुर मूढ़ नहिं जन ।।

सत्य, असत्य मिश्र फिर, चौथी है व्यवहार ।
'पन्नवणा' बतला रहा, 'भाषा' 'चन्दन' चार ।।

मैत्री' और प्रमोद औ- 'करुणा' औ मध्यस्थ ।
'चन्दन' चारो भावना, देती सौख्य समस्त ।।

'कन्दर्पी' 'अभियौगिकी', 'किल्विषिकी' 'आसुरी' ।
'चन्दन' चारों भावना, समझो बहुत बुरी ।।

त्याग, क्षमा, तप, सत्य से, भूषित जो गुणवान ।
'चन्दन ' है वह देवता, कहने को इनसान ।।

पुण्य, पाप, परलोक औ, जो माने भगवान ।
है वह सच्चा 'आस्तिक', कहते सब गुणवान ।।

शैल-शैल माणक नही, गज-गज मोती नाहिं ।
वन-वन मे चन्दन नही, साधू त्यो जग माहिं ॥

निर्धनता हो, कर्ज हो, अपनो से अपमान ।
विषम सभा 'चन्दन' कहे, चारों आग - समान ॥

पर घर प्रमदा, पतित नर, मन्त्री विन भूपाल ।
नदी-तीर-तरु नष्ट हो, जल्दी 'चन्दन लाल' ॥

भाषण कहता देश को, कहे वश आचार ।
'चन्दन' तन भोजन कहे, कहे प्रेम व्यवहार ॥

हरे उद्योग दरिद्रता, जप हरता है पाप ।
'चन्दन' मौन कलह हरे, जाग्रत भय-सन्ताप ॥

मूढ पुत्र, विधवा सुता, वर कलिहारी नार ।
बुरे गाव का वास—ये, दहे विना अंगार ॥

तप, ताडन, छेदन, घिसन— से ज्यो कॉचन जान ।
त्याग, शील, गुण, कर्म से, 'चन्दन' नर-पहचान ॥

'नयनन-सी नहिं रोशनी,' 'वादल-सा नहिं नीर' ।
'प्रिय नहिं 'चन्दन' अन्न-सा', 'आत्म-जयी-सा वीर' ॥

लखे-दोष नहि स्वार्थी, कामी जात-कु-जात।
अह-अन्ध नहि अन्य को, जन्म-अन्ध दिन-रात॥

'करे कर्म भी आप ही', 'पाता फल भी आप'।
'चन्दन' भ्रमता आप ही', 'बने आप निष्पाप'॥

धन से भाई—'बन्धु' है, 'चन्दन' धन से 'मित्र'।
पुरुष 'पुरुष' है 'विज्ञ' है, दुनिया अहो! विचित्र॥

पति, पत्नी, बेटा, पिता, जो भी करता पाप।
नही दूसरा भोगता, भोगे 'चन्दन' आप॥

'पति-पत्नी', 'दो सन्त' औ—'स्वामी-सेवक माहिं।
'हल-बैलो' के बीच से, 'चन्दन' जाना नाहिं॥

सत्य, दया का, प्रेम का, समता का व्याख्यान—
जहां नही, उसको नही, कहना 'धर्म-स्थान'॥

सत्य, दया का, प्रेम का, समता का व्याख्यान—
होते हो 'चन्दन' जहा, वे ही—'धर्म-स्थान'॥

ज्ञान, ध्यान, तप, त्याग का, करने को अभ्यास।
'चन्दन' सतिया, सन्त सब, करते 'वर्षावास'॥

द्वेषी, कामी, लालची, कडवी ज़हर ज़बान।
ऐसे वक्ता के निकट- जाना पाप महान॥

शान्ति-शील-सन्तोष-युत, वाणी सुधा समान।
सद्वक्ता 'चन्दन' सदा, करे जगत-कल्याण॥

काम, क्रोध को, शोक को, और मोह को नष्ट-
करने को उद्यत रहो, 'चन्दन' कहता स्पष्ट॥

'सन्त-संग', 'स्वाध्याय' हो, 'विनय', 'विचार-विवेक'।
'चन्दन' होगा विरल ही, उस-सा गेही नेक॥

स-हृदयता, प्रसन्नता, अभिवादन, सत्कार।
'चन्दन' शिष्टाचार के, अंग कहे ये चार॥

दृढ आसन से कीजिये, जप, तप, पढना ध्यान।
'चन्दन' चार प्रकार से, वश हो मन शैतान॥

मुख मुद्रा, अंग - चेष्टा, वाणी औ व्यवहार।
व्यक्तित्व-अभिव्यक्ति के, कारण 'चन्दन' चार॥

बहुत बोलता जो रहे, अय 'चन्दन' हर वक्त।
अकर्मण्य जानो तथा- अस्थिर, भीरु, अशक्त॥

तेरस-सी तो तिथि नही, प्रिय नहि माँ-सी जान ।
मन्त्र नही नवकार-सा, नही दया-सा दान ॥

दुष्ट-साथ 'चन्दन' तजे, भजे सु-सज्जन साथ ।
सोचे जगत अनित्यता, धर्म करे दिन रात ॥

अति भोजन, आसन विषम, रात जागरण जान ।
वेगों का अवरोध फिर, 'चन्दन' रोग-निधान ॥

मक्खी चाहे घाव को, धन चाहे भूपाल ।
नीच कलह, शम सन्तजन- चाहे 'चन्दनलाल' ॥

भू-भूषण है सन्त जन, नारी का भर्तार ।
तारा भूषण चन्द्र है, विद्या सर्व शृंगार ॥

सज्जनता, शालीनता, मिलनसार स्वभाव ।
'चन्दन' और उदारता, विरले ही मे पाव ॥

वृश्चिक-पुच्छ, सिर मक्षिका, दन्त व्याल विकराल ।
दुर्जन के सर्वांग मे, हो विष 'चन्दनलाल' ॥

स्व-अवलम्बन, योग्यता, तन्मयता, विश्वास ।
'चन्दन' चारों मे रहे, सदा सफलता पास ॥

अय 'चन्दन' हो जिस तरह, चपला का चमकार।
तन, धन, यौवन, आयु ये, कहे क्षणिक है चार॥

हो शिक्षक माँ-बाप जो, 'चन्दन' शील-निधान।
प्रेम, सत्यता, धीरता, गुण-युत हो सन्तान॥

मेघ नम्र नव नीर पा, सन्त नम्र पा ज्ञान।
पादप पा फल नम्र हो, नम्र सदा कुलवान॥

'चन्दन मर्घट, रोग, दुख, और धर्म के स्थान।
जगे भाव जो स्थिर रहे, हो निश्चय कल्याण॥

मनस्ताप, अपमान औ— गेह-दोष, धन-नाश।
समझदार 'चन्दन' नही, करते कभी प्रकाश॥

सुनो अधिक, बोलो स्वल्प, रहो शान्त, गम्भीर।
'चन्दन' चन्दा-सी सदा, चमकेगी तकदीर॥

नम्र पथ जो 'चन्दन' चले, सबको भारी भाय।
छिमा, ठोकर मे बचे, गिरा माल मिल जाय॥

आशा, साहस, धैर्य फिर, अय 'चन्दन' उत्साह।
हैं मानव-उत्कर्ष की, चारों सीधी राह॥

'चन्दन' जिसकी यश-कथा, कहता जगत तमाम ।
सत्य, तथ्य, सम्यक्, ऋत, चार 'सत्य' के नाम ।।

अय 'चन्दन' मोती सदृश, मुख का जो शृंगार ।
दन्त, दशन, रद, रदन ये, नाम 'दन्त' के चार ।।

जिस-सा 'चन्दन' और नहि, बल-विक्रम का धाम ।
दुग्ध, अमृत, पय, क्षीर है, मुख्य 'दूध' के नाम ।।

दानशूर तपशूर फिर, क्षमा, युद्ध के शूर ।
अय 'चन्दन' है इस तरह, चार 'शूर' मशहूर ।।

धर्म, मोक्ष 'चन्दन' तथा, अर्थ, काम भी जान ।
पुरुषार्थ[1] ये चार जो, हर चाहे इनसान ।।

धर्म मोक्ष सुखकार है, अर्थ, काम दुखकार ।
पुरुषार्थ ये समझिये, अय 'चन्दन' यो चार ।।

गेय, गद्य औ पद्य औ, चौथा है फिर कथ्य ।
काव्य-भेद है चार ये, कहता 'चन्दन' सत्य ।।

---

[1] पुरुष का प्रयोजन ही पुरुषार्थ है। चारों पुरुषार्थों में मोक्ष ही परम पुरुषार्थ माना गया है। इसी के आराधक पुरुष ही 'उत्तम पुरुष' माने जाते हैं।

दर्शन, वीर्य, ज्ञान, सुख, 'भाव प्राण' यो चार ।
पन्नवना पद एक मे, है 'चन्दन' विस्तार ॥

सज्जनता की, सत्य की, शील, दया की खान ।
लाखो मे ही एक वा, मिलते दो इन्सान ॥

झूठा, चोर, जुआरिया, चुगलखोर जन और ।
चारो का विश्वास मत, करो किसी भी ठौर ॥

कैसा भोजन भूख विन, कैसा स्वर विन गीत ?
कैसा मानव धर्म विन, कैसी मन विन प्रीत ?

हसना सीखो सुमन से, भंवरो से मधु गीत ।
जल से 'चन्दन' स्वच्छता, नीर-क्षीर से प्रीत ॥

सद्-सेवा, सम-मित्रता, वनिता घर दरम्यान ।
वनियाई व्यवहार मे, 'चन्दन' सजे महान ॥

कोकिल का स्वर रूप है, पतिव्रत रमनी-रूप ।
विद्या रूप कुरूप का, क्षमा तपस्वी-रूप ॥

मौन मूर्ख का वल सदा, निर्वल-वल भूपाल ।
चोरो का वल छल सदा, रोना है वल वाल ॥

ठाणाग ठाणा चार मे, किया 'वीर' विस्तार ।
सुनिये 'चन्दन' ध्यानसे, पुरुष कहे यों चार ॥

रूप नहीं है–शील है, शील नही है रूप ।
रूप शील दोनो नही, दोनों कही अनूप ॥

ठाणाग ठाणा चार मे, किया 'वीर' विस्तार ।
सुनना 'चन्दन' ध्यान से, कहे 'पुष्प' यो चार ॥

'सुन्दर नहीं–सुगन्ध है', 'सुन्दर, नही सुगन्ध' ।
सुन्दर और सुगन्ध है', इक दोनों से मन्द ॥

ठाणाग ठाणा चार में, किया 'वीर' विस्तार ।
सुनना 'चन्दन' ध्यान से, 'मेघ' कहे यो चार ॥

गर्जे इक–बरसे नही, बरसे इक, नहि गाज ।
गर्जे—बरसे, एक से— वर्षा, नहि आवाज़ ॥

ऐसे ही भगवान ने, पुरुष कहे है चार ।
ठाणाग ठाणा चार मे, है 'चन्दन' विस्तार ॥

'मानी इक, दानी नही', 'दानी इक, नहि मान' ।
दानी-मानी एक है, इक है सिफर समान ॥

डाह रहित हो, सरल हो, करुणाशील, विनीत।
मानवगति में गमन को, है यह 'चन्दन' रीत॥

श्रावक, सन्त सराग जो, औ निर्जरा अकाम।
बाल तपस्या से मिले, अय 'चन्दन' सुर-धाम॥

भय, मैथुन औ परिग्रह, चौथी है आहार।
केवल ज्ञानी ने कही, 'संज्ञा'[1] 'चन्दन' चार॥

निर्बलता से, कर्म से, श्रावण-स्मरण भय-बात।
'भय-संज्ञा' के चार हैं, कारण जग विख्यात॥

मोह उदय, वपु-पुष्टता, काम-कथा, स्मर-स्मरण।
'मैथुन-संज्ञा' के कहे, कारण चार कथन॥

दौलत-दर्शन, स्मरण या— लोभ-वृत्ति या कर्म।
'परिग्रह-संज्ञा' के कहे, कारण चारों परम॥

भोजन, दर्शन, स्मरण या— होते खाली पेट।
क्षुधावेदनीय कर्म से, 'भोजन-संज्ञा' सेठ!

---

[1] मोहनीय के उदय से होनेवाली अभिलाषा—इच्छा।

'अनाभोग[१] निर्वतित' इक, 'अनुपशान्त'[२], 'उपशान्त'[३]।
'आभोगनिर्वतित'[४] है तथा, 'क्रोध' चार यो भान्त ॥

राज, भात, वनिता तथा- देशकथा फिर और।
विकथाए[५] 'चन्दन' कही, दुख-दाता हर ठौर ॥

आक्षेपणी[६], विक्षेपणी[७], सवेगनी[८], निर्वेद[९]।
'धर्म-कथा'[१०] चारो हरे, अय 'चन्दन' दुख-खेद ॥

वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श ये, शुभ हों जिस में चार ।
'चन्दन' ऐसे सुर सभी, है करते आहार ।।

अम्बर पर घनवात है, घनोदधि फिर जान ।
और घनोदधि पर धरा, उस पर सकल जहान ।।

भजे निकट न दूर ये– गुरु, नृप, नार, अनल ।
अधिक निकट से नाश हो, अधिक दूर न फल ।।

शृंगी, नखी, शस्त्री तथा, पत्नी पर की जान ।
चारों का विश्वास नहिं, कीजे चतुर-सुजान !

स्वर्ण सुगन्ध न ईख फल, चन्दन मे नहिं फूल ।
सिन्धु सलिल मीठा नही, किसकी कहिये भूल ?

अतिक्रम, व्यतिक्रम और फिर, तीजा है अतिचार ।
अणाचार, यो दोष है, 'चन्दन' चार प्रकार ।।

गुप्त अंग, ग्रीवा तथा, जांघ, पीठ ये चार ।
'चन्दन' जिसके ह्रस्व हों, विलसे द्रव्य अपार ।।

विस्मय, उद्भुत, आश्चर्य, चित्रम् चौथा जान ।
जानें 'अद्भुत' नाम ये, 'चन्दन' चतुर-सुजान ।।

। २०९ दोहे सम्पूर्ण ।

◆

जो देंगे सव जगत को,
नव जीवन—सन्देश ।
पांच वात के दोहरे,
'चन्दन' करता पेश ॥

◆

सेवा, पर उपकार, तप, त्याग और वैराग।
'चन्दन' जिसमे पांच ये, उस-सा नहि वड़ भाग॥

अय 'चन्दन' किस वात का, करे मान नादान !
तन, धन, वल, विद्या, हुसन, चपला-चमक-समान॥

अशुभ, अनल, आपत, तपन, और वस्तु वारीक।
अधिक पाच ये देखना अय 'चन्दन' नहि ठीक॥

पाना चाहे शान्ति, सुख, जो 'चन्दन' इनसान।
तजे स्पृहा वा कामना, माया, ममता, मान॥

ब्रह्मचर्य, सयम, तथा, सत्य तपस्या त्याग।
पांचो से 'चन्दन' करे, अधिक-अधिक अनुराग॥

गर्भ, जन्म, दीक्षा तथा— केवल औ निर्वाण।
अय 'चन्दन' 'अरिहन्त' के, ये 'कल्याणक' जान॥

शम, सम्वेग, निर्वेद औ, अनुकम्पा आस्तिक्य।
समकित-लक्षण पांच ये, ज्यो 'चन्दन' माणिक्य॥

हिंसा, मिथ्या, स्तेय औ— मैथुन, परिग्रह जान।
आंशिक उनका त्याग हो, 'चन्दन' 'अणुव्रत'[1] मान॥

---

[1] [illegible] [illegible] व्रत अर्थात् एक देश त्याग का नियम।

'चन्दन' मति[1], श्रुति[2], अवधि[3] औ-मनः[4] पर्यव ज्ञान।
केवलज्ञान[5] महान यों- कहे पाच हैं 'ज्ञान' ॥

नरक तथा तिर्यञ्चगति, नर, सुर औ निर्वाण ।
'चन्दन' गतिया पाँच ये, कही 'वीर' भगवान ॥

कृष्ण, नील औ पीत औ- 'चन्दन' लाल सफेद ।
पाच कहे भगवान ने, वर्णो के ये भेद ॥

खट्टा, मीठा, तिक्त औ- 'चन्दन' कटुक, कषाय।
'रस' के रसना के लिये, पांच भेद वतलाय ॥

---

[1] इन्द्रिय और मन की सहायता से योग्य देश मे रही हुई वस्तु को जाननेवाला ज्ञान ।

[2] मति ज्ञान के अनन्तर होनेवाला, और शब्द तथा अर्थ की पर्यालोचना जिस मे हो ऐसा ज्ञान ।

[3] इन्द्रिय तथा मन की सहायता बिना, मर्यादा को लिये हुए रूपी द्रव्य का ज्ञान करना ।

[4] इन्द्रिय और मन की सहायता के बिना मर्यादा को लिए हुए संज्ञी जीवों के मनोगत भावों को जानना 'मन-पर्यव-ज्ञान' है ।

[5] मति आदि ज्ञान की अपेक्षा बिना, त्रिकाल एव त्रिलोकवर्ती समस्त पदार्थों का एक साथ एक ही समय मे प्रत्यक्षवत् जानना 'केवल-ज्ञान' है ।

नासापुट, लोचन, भुजा, 'चन्दन' वक्षस्थल ।
पेट, पाच ही ये भले, 'दीर्घ' और 'सरल' ॥

कुन्तल, अगुल्यग्र, रद, औ 'चन्दन' नख, चर्म ।
अग देह के पॉच ये, 'सूक्ष्म' उत्तम परम ॥

धर्म, पुण्य, श्रेयस्, सुकृत, पंचम है वृष और ।
नाम 'सुकृत' के सुखद ये, 'चन्दन' कीजे गौर ॥

लोक, जगत, जगती, भुवन, विष्टप पंचम जान ।
'भूतल' के ये नाम है, 'चन्दन' पांच प्रधान ॥

'चन्दन' वासर, दिन, दिवस, घस्र, अह् फिर जान ।
जिसको दुनिया 'दिन' कहे, पाचो नाम प्रधान ॥

शाखामृग, कपि, कीश औ- मर्कट, वानर पाच ।
मुख्य 'कीश' के नाम ये, कहता 'चन्दन' साँच ॥

घोणा, नासा, नासिका, गन्धवहा औ घ्राण ।
मुख्य 'नासिका'-नाम ये, अमर कोष दरम्यान ॥

दो घुटने, दो हाथ औ- 'चन्दन' शिर सुखदाय ।
गुरु को वन्दन कीजिये, पाचो अग झुकाय ॥

। १४० दोहे सम्पूर्ण ।

वनें विश्व में आप जो,
सव के ही सिरमौर।
दोहे अव 'छः वात' के,
पढ़िये पाठक ! और ॥

व्यभिचारी औ चोर औ- मद्यप, जूएबाज़।
वचे नास्तिक, नीच से, 'चन्दन' दे आवाज़॥

निन्दा, लालच, ईर्ष्या, मोह, द्रोह, विद्वेष।
लेता 'चन्दन' जीत जो; रहता सुखी हमेश॥

मूर्ख, मछली, केकड़ा, मद्यप, नील, कु-नार।
'चन्दन' छः की पकड़ से, है वचना दुश्वार॥

पत्नी, वच्चे, स्वाश्रित, दीन, पुरुष; मां-वाप।
करें स्नेह वर्ताव ही, छः से 'चन्दन' आप॥

साधू, श्रावक, सत्पुरुष, रक, वृद्ध, विद्वान।
'चन्दन' छः का भूल भी; मत करना अपमान॥

जैन, वौद्ध, फिर न्याय है, सांख्य, वैशेषिक जान।
'चन्दन' मीमांसा तथा, 'षट्दर्शन' पहचान॥

पृथ्वी, अप, तेजस्, पवन, वनस्पती, त्रसकाय।
'काय' कही छः 'वीर' ने, अय 'चन्दन' समझाय॥

कृष्ण, नील, कापोत औ- तेजो, पद्म प्रधान।
छठी शुक्ललेश्या समझ, कर लीजे कल्याण॥

नाट्य, नटन, नर्तन, नृत्य, लास्य व ताण्डव और ।
मुख्य 'नृत्य' के नाम छः, रसिकराज-सिरमौर ॥

उद्भव, उत्पत्ति, जनम, जनु, और जनन, जनि जान ।
मुख्य नाम छ. 'जनम' के, अमरकोष–दरम्यान ॥

गन्धसार औ भद्रश्री, मलयज चन्दन जान ।
गोशीर्ष, हरिचन्दनम्, 'चन्दन'–नाम बखान ॥

चिलम, चुरट, चण्डू, चरस, सुलफा औ सिगरेट ।
'चन्दन' चातुर बन बचे, छ की बुरी लपेट ॥

सेवा, समता, सरलता, स्नेह, सादगी, सत्य ।
सुख चाहो 'चन्दन' करो, छ ही पर अधिपत्य ॥

रुग्ण, तपस्वी, मूर्छित, साधू, बाला, बाल ।
माने गए 'अवध्य' ये, छ ही 'चन्दन लाल' ॥

पाप, पुण्य, परलोक औ- शर्म, धर्म, भगवान ।
'चन्दन' छः को भूलना, जाता अब इनसान ॥

कान, नयन, मुख, नासिका, त्वचा तथा मन और ।
'चन्दन' चाहे स्वर्ग जो, छ जीते हर तौर ॥

॥ ३० दोहे सम्पूर्ण ॥

'चन्दन' जिनसे आपका,
स्वर्ग बने संसार।
'सात बात' के देखिये,
दोहे अब रसदार॥

समय, ग्रवलिका, श्वास ग्रौ- प्राण, स्तोक व लव।
तथा महूर्त 'काल' के, भेद सात यों सब॥

काश्यप, गौतम, वत्स ग्रौ, कुत्सा, कौशिक जान।
मंडव, वाशिष्ठ गोत्र' ये, 'चन्दन' सात प्रधान॥

वीणा, वाणी, शास्त्र ग्रौ, शस्त्र, ग्रश्व, नर, नार,।
बनते योग्य-ग्रयोग्य ये, पा विशेष-ग्राधार॥

घम्मा, वसा ग्रौर फिर, सीला, अंजन जान।
रिट्ठा, मघा, माघवई, नरक-नाम पहचान॥

मेहनत, सुख, यश, धर्म, धन, बुद्धि और विश्वास।
'चन्द' 'मद्यप' सात खो, करता, नर्क निवास॥

मद्य, मांस, ग्राखेट, औ- द्यूत, स्तेय, परनार।
वेश्या, 'सातकुव्यसन' ये, दिखलाते यम-द्वार॥

षड्ज, ऋषभ, गान्धार फिर, मध्यम ग्रौर निषाद।
धैवत पंचम, 'सात स्वर', 'चन्दन' रखिये याद॥

मोर, कुक्कुट, अज, हंस, औ, हाथी, सारस ग्रौर।
कोयल, क्रमश. सात स्वर, बोले कीजे गौर॥

कमला, लछमी, लक्ष्मी, पद्मा, इन्दिरा जान।
और—श्री, पद्मालया, 'लछमी'—नाम बखान॥

कल्य, उषः औ अहर्मुख, प्रातःकाल, प्रभात।
प्रत्यूष, प्रत्युष 'प्रभात' के, मुख्य नाम विख्यात॥

अनुकम्पा, करुणा, कृपा, दया 'घृणा, आक्रोश।
और-कारुण्य—नाम ये, 'करुणा' के निर्दोष॥

निर्धन हो, धनवान हो, वैरी अथवा मीत।
'चन्दन' छोटा, सम, बडा, सातों से कर प्रीत॥

शान्ति, शील, शम, शुद्धि औ– दया, सत्य, सन्तोष।
आदि 'अकार लगाइये', सातों ही गुण दोष॥

करतल, पदतल, तालु नख, जिह्वा, लोचन, अधर।
अंग सात शुभ लाल ये, कहते पण्डित प्रवर॥

सद्गुण, संयम, सुकृत, सच, समय, सन्त, सत्कार।
सज्जन क्षण भूले नहि, 'चन्दन' सात 'सकार'॥

दुराचार, दुर्भावना, द्रोह, मोह, छल, घात।
'चन्दन' और—असत्य ये, वैरी समझो सात॥
॥ ३० दोहे सम्पूर्ण॥

पढ़ने को 'चन्दन' मधुर,
मानवता का पाठ।
दोहे पढ़िये आप अब,
जिनमें बातें आठ॥

वालक, भिक्षुक, नृप, अनल, दुर्जन, वेश्या, यम ।
'चन्दन' तस्कर जानते, औरों का दुख कम ॥

अतिसेवा, सोना अधिक, क्रोध, लोभ, व्यभिचार ।
आठ तजे विद्यार्थी; खेल, स्वाद, शृंगार ॥

सौजन्य, सच्चरित्रता, सत्य, अहिंसा, न्याय ।
शील, विनय, विश्वास ही, 'मानवधर्म' कहाय ॥

कुल, वल, श्रुत औ रूप, तप, जाति; लाभ फिर जान ।
ऐश्वर्य 'चन्दन' तथा, आठ वुरे ये 'मान' ॥

अहंकार 'चन्दन' तथा, क्रोध, लोभ, मोह, काम ।
राग, द्वेष, छल—आठ ये, रोकें अमृत—धाम ॥

शल्य, शस्त्र, शर, शूल, शठ, शाखी; शृंगी श्वान ।
'चन्दन' आठ 'शकार' से, दूर रहे मतिमान ॥

मुक्ति, मोक्ष कैवल्य औ— निःश्रेयस्, निर्वाण ।
अमृत, श्रेय, अपवर्ग—ये, 'मुक्ति'—नाम पहचान ॥

मगण, नगण, 'चन्दन' भगण, जगण, सगण फिर जान ।
यगण, रगण, औ तगण यों— आठों 'गण' पहचान ॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥

जीवन जिनसे यह बने,
निर्मल औ निष्पाप ।
करामात 'नव वात' की,
ज़रा देखिये आप ॥

मुक्ता, मरकत, माणिक्य, पद्मराग, गोमेद ।
वैडूर्य, हीरा, स्फटिक वा, लाल, 'रत्न'–नव भेद ॥

त्रिविष्टप, त्रिदशालय, त्रिदिव, दिवौ, द्यौ जान ।
नाक, स्वर्ग, सुरलोक, स्वः, 'स्वर्ग'–नाम पहचान ॥

रजनी, निशा, निशीथिनी, तमित, तमस्विनी, रात ।
क्षपा, शर्वरी, यामिनी, 'रात'–नाम विख्यात ॥

अग्र:, अग्रिय, अग्रीय, उत्तम, प्रमुख, प्रधान ।
मुख्य, वर्य, वरेण्य नव, नाम 'प्रधान'– बखान ॥

कदाग्रही, कपटी, कुटिल, क्रोधी, कामी, क्रूर ।
कायर, कृपण, कठोर से, रहना 'चन्दन' दूर ॥

मोह, मान, माया, मृत्यु, मुख, मश, मद, मन, मार ।
अय चन्दन' कल्याण हित, नव ये जीत 'मकार' ॥

रवि, शशि, मगल, सौम्य, गुरु, शुक्र, शनैश्चर जान ।
राहु, केतु ये नव ग्रह, 'चन्दन' करे बयान ॥

सतत, सतत, अश्रान्त, नित्य अनारत, अविरत और ।
अजस्र, अनिश, अनवरत यो, 'नित्य'–नामकर गौर ॥

॥ १३ दोहे सम्पूर्ण ॥

जिनसे जीवन का खिले,
मधुर सु-रम्य प्रभात।
दोहे देखे आप अब,
हर इक में 'दश बात' ॥

पण्डित, कोविद, सन्, सुधी, प्रज्ञा, धीर, धीमान।
'चन्दन' कवि, मनीषी, ज्ञः, 'पण्डित'—नाम बखान॥

दक्ष, चतुर, पेशल, कुशल, विज्ञ निपुण निष्णात।
पटु, प्रवीण, अभिज्ञ दश, 'चतुर—नाम विख्यात॥

मजुल, मंजु, मनोज्ञ, कल, शोभन, रुचिर, ललाम।
चारु, मनोरम, सुषम-दश, 'सुन्दरता' के नाम॥

गृह, गेह, मन्दिर, सदन, सद्म, भवन, आगार।
निलय, निकेतन, आलय, 'गेह'—नाम उर धार॥

अमृत, जीवन, सलिल औ- उदक; आप, पय, क्षीर।
ये 'चन्दन' 'जल'—नाम कुछ, पुष्कर, पानी, नीर॥

वानर, वाघ्र, वराह, वर, वेश्या, वंचक, व्याल।
वक्र, व्याघ्र, वाचाल से, वचना 'चन्दन लाल'॥

विक्रम, विद्या, वुद्धि, व्रत, विनय, विवेक, विचार।
वित्त, विजय, विज्ञान न, पाए सव नर-नार॥

विग्रह, वैर, विरोध, वध, विपदा, व्याधि, विनाश।
'चन्दन' विषय, विषाक्त विष- के नहिं फटको पास॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण॥

जीवन जिनसे यह बने,
सफल आपका सब ।
दोहे विविध प्रकार के,
देखें पाठक ! अब ॥

जिनके तप पर,त्याग पर, 'चन्दन' जग कुर्बान।
पण्डित-पूजित 'पद्मप्रभ', महके पद्म समान ॥

वाणी के पैंतीस गुण, चौंतीस अतिशय साथ।
विश्व-वन्द्य 'चन्दन' हुए, 'पार्श्वनाथ' जगनाथ ॥

'चन्दन' चमके चन्द्र-से, चन्द्रपुरी दरम्यान।
जय-जय-जय जिन 'चन्द्रप्रभ,' सर्व ज्ञान-गुण-खान ॥

अद्भुत 'काकन्दी' नगर, थे 'सुग्रीव' भूपाल।
'रामा' मा के 'पुष्पदन्त', जन्मे 'चन्दन लाल' ॥

शीतलता जिनसे मिले, अय 'चन्दन' दिन-रात।
मन मे मेरे वे वसे, जिनवर'शीतलनाथ' ॥

नष्ट अष्ट कर कर्म जो, पहुचे भवजल पार।
अब'चन्दन' 'श्रेयांस' जिन, वन्दौ वारम्वार ॥

'वासुपूज्य' भगवान का, जो जन धरता ध्यान।
पाप-ताप-सन्ताप से, सहज छुटे गुणवान ॥

विमलनाथ भगवान का, 'चन्दन' जप शुभ नाम।
कहो कौनसा भक्त नहि, पहुंचा अविचल धाम ॥

तोड़ा बन्धन ब्याह का, सुन पशुअन की टेर।
'नेमिनाथ' की दया पर, वारी कोटि सुमेर॥

पीड़ा प्रेत-पिशाच की, कभी न फटके पास।
'चन्दन' जिनके घट रहे, 'पार्श्वनाथ' का वास॥

जिन से यज्ञो मे रुका, जीवो का बलिदान।
'महावीर' भगवान पर, 'चन्दन' जग कुर्बान॥

पूज्य तीर्थंकर हुए, ये 'चन्दन' चौबीस।
चरणकमल का ध्यान धर, सदा झुकाये शीश॥

क्रोध, काम का था नहीं, जिन मे नाम-निशान।
राग-द्वेष से रहित वे, 'वीतराग' भगवान॥

पुण्य-प्रकृति 'चन्दन' बढ़े, घटे पाप की रेख।
दिन दुगुनी धन-सम्पदा, जपकर 'जिनवर' देख॥

बिना जपे नहिं कीजिये, कोई भी शुभ काम।
ऋद्धि-वृद्धि होती चले, जपने से शुभ नाम॥

साय सोने से प्रथम, जग कर प्रातःकाल।
'चौबीसी' के नाम से, मंगल 'चन्दन लाल'॥

चेतन, तन है भिन्न या; दोनों हैं फिर एक ।
'वायुभूति' दीक्षित हुए, इसका समझ विवेक ॥

अय 'चन्दन' जव हो गया, जड़ से सशय नाश ।
श्रमण 'व्यक्तस्वामी' वने, महावीर के पास ॥

मानव मर मानव वने, या 'चन्दन' कुछ और ।
श्रमण 'सुधर्मा जी' वने, इसे समझ हर तौर ॥

वन्ध, मोक्ष है या नही, इस पर करके वाद ।
'मण्डित स्वामी जी' वने, वीर-शिष्य साल्हाद ॥

देवो के अस्तित्व के, सशय का कर अन्त ।
'मौर्यस्वामी जी' वने, महावीर के सन्त ॥

नरक नही या है कही, उत्तर इसका पाय ।
श्रमण 'अकम्पित जी' वने, मद-ममता छिटकाय ॥

पाप-पुण्य है या नही, गुत्थी यह सुलझाय ।
शिष्य 'अचलभ्राता' वने, महावीर पै आय ॥

संशय जव परलोक का, मिटा मूल से सव ।
'मेतार्यस्वामी' वने, शिष्य 'वीर' के तव ॥

नैतिकता औ न्याय थे, 'चन्दन' जिनकी देन।
मुक्त सिधाए ताज तज, चक्रवर्ति 'हरिषेन'॥

राज-ताज तज कर किया, जिनने बेड़ा पार।
चक्रवर्ति 'जयसेन' को, वन्दन बारम्बार॥

महावीर भगवान का, सुन सच्चा उपदेश।
बन कर त्यागी तर गया, 'चन्दन' 'अलख' नरेश॥

जिनके 'चन्दन' चरण मे, पडा इन्द्र भी आन।
भूप 'दशार्णभद्र'–सा, कौन करेगा मान!!

'चन्दन' 'संजय' भूप जब, खेलन गए शिकार।
दर्शन पा ऋषिराज का, लिए महाव्रत धार॥

संयम ले जिस दम डिगा, अब 'चन्दन' 'कुण्डरीक'।
धार महाव्रत तर गया, धराधीश 'पुण्डरीक'॥

शोर न चूड़ी एक से, करती शोर अनेक।
'नमीराज' ऋषि बन गए, पाकर बोध-विवेक॥

देख बुढ़ापा बैल का, जगा हृदय वैराग।
अब 'चन्दन' 'करकण्डु' नृप, अपनाया तप, त्याग॥

महावीर-वाणी सुनी; जगा हृदय वैराग।
'शालिभद्र' 'धन्ना' दिया, अरबो ही धन त्याग!!

ज्ञान जिन्हो से पा बना, श्रेणिक समकितवन्त।
आज 'अनाथो'-सा कही, मिलना मुश्किल सन्त॥

जिसके चिन्तन-मनन से, बढता प्रेम-प्रताप।
'गौतम' 'केशीश्रमण' का, धन्य! सुवार्तालाप॥

न्याय को ही धर्म-पथ, महावीर बतलाय।
सु-श्रावक आनन्द से, 'गौतम' स्वय खिमाँय॥

धन्य! धन्य मुनिराज है, 'जयघोष'-'विजयघोष'।
यज्ञ जिन्होने जगत को, बतलाया निर्दोष॥

'अर्जुनमाली' ने किया, कितना नर-सहार।
महाव्रत ले 'वीर' से, 'चन्दन' पहुचा पार॥

सन्त गुणी 'हरकेशवल', जन्मजात चाण्डाल।
तप-बल से सुर-नर झुके, चरणन 'चन्दनलाल'॥

क्षमावीर गम्भीर था, जैसा 'गजसुकुमाल'।
ऐसा कोई एक भी, सुना न 'चन्दन लाल'॥

'चन्दन' सच्चा जब जगा, महावीर से प्रेम ।
संयम लेकर तर गया, गाथापति वह 'क्षेम' ॥

महावीर के चरण में, बनकर सच्चा सन्त ।
मुक्ति सिधाया अन्त मे, 'धृतिधर' धीरज वन्त ॥

पच महाव्रत ले किया, जिसने मुक्ति निवास ।
धन्य ! धन्य ! साकेत के, गाथापति 'कैलाश' ॥

जिन-सा त्यागी आज कल, मिलना मुश्किल अन्य ।
गाथापति साकेत के, 'हरिचन्दन जी' धन्य ! !

सरल 'महाबल कुँवर जी', निर्मल सयम पाल ।
गए पाचवे स्वर्ग मे, प्यारे 'चन्दनलाल' ॥

महावीर भगवान के, पकड प्रेम से पाव ।
तरे 'सुदर्शन सेठ' जी, जिनका वाणिया गाव ॥

राजगृही का मान्य था, गाथापति जो 'मेघ' ।
कर्म खपाए आठ ही, कर मे ले तप-तेग ॥

जिनके भावों का बड़ा, अद्भुत है अधिकार ।
अब 'चन्दन' के वन्द्य थे, 'गगिया जी' अणगार ॥

‘चन्दन’ ‘अभयकुमार जी, विनय - बुद्धि-भण्डार ।
पहुंचे विजय विमान में, पंच महाव्रत धार ।।

‘राजगृही’ शुभ नगर मे, भद्रा करे निवास ।
गया अनुत्तर स्वर्ग में, उसका सुत ‘ऋषिदास’ ।।

पाया आ ‘श्वेताम्बिका’, भद्रा मां का प्यार ।
गए स्वर्ग छब्बीसवे, ‘चन्दन’ ‘चन्द्र कुमार’ ।।

श्रेणिक पितु मां चेलना, ‘लष्ठदन्त’ शुभ नाम ।
सयम लेकर ‘वीर’ से, गया अनुत्तर धाम ।।

‘दीर्घसेन कुमार’ के, हुआ हृदय वैराग ।
गया अनुत्तर स्वर्ग मे, अय ‘चन्दन’ जग त्याग ।।

‘महासेन’ ‘गुढदन्त जी’, ‘द्रुम’,‘द्रुमसेन कुमार’।
गए अनुत्तर स्वर्ग मे, पच महाव्रत धार ।।

काकन्दी जिसका नगर, भद्रा जिसकी मात ।
गया अनुत्तर स्वर्ग मे, ‘सुनक्षत्र’ विख्यात ।।

‘पुण्यसेन ‘सिहसेन’ औ- ‘चन्दन’ ‘सिहकुमार’ ।
गए अनुत्तर स्वर्ग मे, तज दुनिया दुखकार ।।

स्थूलिभद्र जिनके हुए, शिष्य महा गुणवान।
आचार्य 'सम्भूतिविजय', जैन-धर्म की शान ॥

'भद्रबाहु' श्रुतकेवली, आगम — टीकाकार।
'भद्रबाहु-संहिता' लिखी, ज्योतिष का भण्डार ॥

जिस गणिका के घर किया, बारह वर्ष निवास।
'स्थूलिभद्र' ने श्रमण बन, बोध दिया जा खास ॥

हुए 'महागिरी जी' बड़े, महाचार्य गुणवान।
किया पुन जिनकल्प का, श्रय 'चन्दन' उत्थान ॥

आचार्य 'सुहस्ति' हुए, बहुत बड़े विद्वान।
'सम्प्रति' नृप आ कर झुका, चरण कमल दरम्यान ॥

आचार्य 'गुणसुन्दर' गुणी, ज्ञानी हुए महान।
तप कर भुवनेश्वर निकट, पाया स्वर्ग-विमान ॥

आचार्य 'सिंहगिरी' जिन्हें, जाति स्मरण था ज्ञान।
कहना 'चन्दन' चाहिये, जैनधर्म की शान ॥

दीक्षा से पहले जिन्हें, जाति-स्मरण था ज्ञान।
फिर 'वज्रस्वामी' हुए, आचार्य गुणखान ॥

सुरकृत सब सकट सहे, रहा दृढी हर तौर ।
'कामदेव-सा' कठिन है, श्रावक मिलना और ।।

चढा धर्म का रग शुभ, जिस पर जी ! भरपूर ।
अथ 'चन्दन' 'चुलनीपिता', श्रावक था मशहूर ।।

जिनका वर्णन खुद किया, महावीर भगवन्त ।
'सुरादेव' श्रावक हुए, अथ 'चन्दन' गुणवन्त ।।

'चुल्ल शतक' श्रावक गुणी, फसा देव के जाल ।
आखिर पहुचा स्वर्ग मे, समकित व्रत सभाल ।।

हुआ 'कुण्डकोलिक' वडा, श्रावक भी गुणवान ।
किया निरुत्तर देवता, पाया स्वर्ग विमान ।।

गोशाला के जाल मे, फंसा न चन्दन लाल ।
महावीर भगवान का, दृढ़ श्रावक 'शकडाल' ।।

सूत्र 'उपासकदशा' मे, जिसका विशद बयान ।
'महाशतक' श्रावक हुआ, 'राजगृही' दरम्यान ।।

जिस-सा मिलना है कठिन समकित-व्रत अनुरक्त ।
थे 'नन्दिनीपिता' बड़े, महावीर के भक्त ।।

धर्म-कर्म हित बोलना, अधिक पाप मे मौन ।
श्रावक 'श्री सालिहिपिया', जैसा 'चन्दन' कौन ।।

जन्म-मरण का नष्ट हो, जिससे 'चन्दन' बीज।
वर्षीतप[1]-आरम्भ हित, उत्तम अक्षय तीज॥

कृष्णा जेठ त्रयोदशी, मगलमयी कहाय।
'शान्ति[2] जयन्ती' जगत जब, 'चन्दन' मुदित मनाय॥

दान-शील-तप-भाव का, करवाता अभ्यास।
शान्ति साथ ले आ गया, 'चन्दन' चातुर्मास॥

सावन शुक्ला पचमी, विश्व बीच विख्यात।
जन्मे जब बावीसवे, जिनवर 'नेमीनाथ'॥

१–वर्षीतप का प्रारम्भ वैशाख सुदी तीज से करे। साठ उपवास करने के बाद यानी अन्तिम उपवास भी वैसाख सुदी ३ को करे। उपवास के दिन "श्री ऋषभदेव तीर्थंकराय नम" मन्त्र की २० माला फेरे। जिस दिन उपवास हो उस दिन प्रतिक्रमण, स्वाध्याय दान अवश्य करे।

—'मगलवाणी'

२–ये सोलहवें तीर्थंकर थे। इनके पिता हस्तिनापुर के महाराजा विश्वसेन और माता श्री अचिरादेवी जी थी। इनका जन्म और निर्वाण ज्येष्ठ कृष्णा १३ को हुआ था। ये भरत क्षेत्र के चक्रवर्ती भी रहे हैं। इनके जन्म से पहले समस्त देश में महामारी, मृगी की बीमारी फैली हुई थी। इनके गर्भ में आते ही समस्त देश में शान्ति छा गई। इसी कारण इन का नाम 'शान्तिनाथ' रखा गया था।

—हमारा इतिहास

कार्तिक शुक्ला पंचमी, 'ज्ञान-पचमी' जान ।
'चन्दन' कर आराधना, जो तू चाहे ज्ञान ॥

जैन-सघ मे जिन्होने, नया भरा उत्साह ।
कार्तिक पूनम जानिये, जन्मे 'लौकाशाह' ॥

कातिक पूनम को उठा, 'चन्दन' चातुर्मास ।
नही भूलना भाइयो ! जप-तप-व्रत-उपवास ॥

'चन्दन' मगसिर मास की, 'मौन-इग्यारस' जान ।
जन्मे जग मंगल करन, 'मल्लिनाथ' भगवान ॥

पार्श्व-जन्म की साथ ले, मधुर याद हर साल ।
आती दशवी पौष वदि, सुखकर 'चन्दनलाल' ॥

'चन्दन' 'तेरस माघ वदि', अमर जगत दरम्यान ।
ऋषभदेव भगवान जी, पाया पद निर्वाण ॥

माघ शुक्ल की पंचमी, शुरु शीत का अन्त ।
ठण्ड गुलाबी रह गई, 'चन्दन' कहे 'वसन्त' ॥

फागुन-पूनम आ गया, 'होली चातुर्मास' ।
करे आत्मा का सभी, 'चन्दन' सतत विकास ॥

॥ २५ दोहे सम्पूर्ण ॥

मानव भव अनमोल है, मिले न वारम्वार।
जीत यहां की है वड़ी, वड़ी यहा की हार ॥

जीते सुख हैं स्वर्ग के, जीते पद निर्वाण।
हारे से लेकिन रुले, चौरासी दरम्यान।

प्रेम, अहिंसा, त्याग, तप, सयम जो अपनाय।
महापर्व 'चन्दन' सही, सचमुच वही मनाय ॥

प्रतिक्रमण, आलोयणा, सव से खिमतखिमाव।
तप-जप 'चन्दन' कीजिए, भर भारी मन चाव ॥

पक्षपात के साथ पर, नही वनेगी वात।
चाहे 'चन्दन' रगड़िये, कितना क्यों नहिं माथ ॥

औरो के तो देखते, खुद में क्या नहिं दोष?
'चन्दन' खोटी अकल पर, लाख-लाख अफसोस ॥

गुणी वनोगे गुण लखे, अवगुण लख गुणहीन।
'चन्दन' हठी-दुराग्रही, जीवन तेरह-तीन ॥

महापर्व वतला रहा, तजो द्वेप विकराल।
क्षमावीर 'चन्दन वनो, जैसा गजसुकुमाल ॥

सुना सूत्र है आपने, 'श्री अन्तकृतंदशा ?
नव्वे मुक्त सिधाए जो, मन में कौन बसा ?

नगर द्वारका के अहो, 'गौतम' राजकुमार।
सयम लेकर कर गए, 'चन्दन' बेड़ा पार ॥

'नेमनाथ' से प्रेम से, संयम का पढ़ पाठ।
गए मुक्ति मे वहुत से, कर्म खपाकर आठ ॥

नन्दलाल की राणिया, 'पद्मा' आदिक जान।
साध्वियां वन कर गईं, जय 'चन्दन' कल्याण ॥

श्रेणिक नृप की राणियां, नन्दा आदिक और।
'चन्दन' पहुची मुक्ति में, सव सतियां सिरमौर ॥

जीवन के उद्धार हित, वनो उन्ही के भक्त।
आयेगा नहिं अन्यथा; हाथ कभी यह वक्त ॥

द्रव्य मनाए आपने, पर्व अनेको वार।
भाव पर्व विन आज तक, पहुंचे क्या भव पार ?

द्रव्य पर्व के साथ में, भाव मनाइये पर्व।
'चन्दन' विगडे आपके, काम वनेंगे सर्व ॥

॥ २५ दोहे सम्पूर्ण ॥

स्वस्थ, सुशीला, सुन्दरी— से ही सफल विवाह।
कुटिला, कुलटा से सदा, 'चन्दन' कष्ट अथाह॥

एक दूसरे से दगा, नही करेंगे भूल।
मंगलमय सु-विवाह का, पहला यही उसूल॥

'चन्दन' चिट्टी चमड़ियां, लख कर करें विवाह।
बिन गुण देखे यों हुए, जीवन बहुत तबाह॥

कन्या के गुण-दोष पर, करता कौन निगाह।
पैसे से ही हो रहे, अब तो बहुत विवाह॥

अब तो अहो! विवाह पर, बनने बहुत कंगाल।
सब से पहले पूछते, क्या कुछ दोगे माल?

[illegible] कैसे हो सकता है? श्रावक को स्वस्त्री पर भी अत्यासक्ति नही होनी चाहिये, क्योंकि जानबूझ कर रोग को पैदा किया नही जाता। यदि कभी काम-रोग पैदा हो जाय और उसे अन्य किसी प्रकार से शान्त न कर सके तो उसका इलाज वही है—जिसके लिये विवाह हुआ है। इस प्रकार की प्रक्रिया को भी सदाचार ही कहते है।

पुरुष के लिये स्वस्त्री के अतिरिक्त, शेष सभी स्त्रिया परस्त्री हैं और स्त्री के लिये स्वपति के अतिरिक्त सभी पुरुष पर-पुरुष है।

योगनिष्ठ प० मुनि श्री फूलचन्द्र जी 'श्रमण'
लिखित——'गृहस्थ-धर्म' से

'मध्यम' मानव मांगते, मुख से सदा दहेज़ ।
'चन्दन' उन्हे दहेज़ बिन, शादी से परहेज़ ॥

'चन्दन' जन जो तीसरे, निपट निकम्मे नीच ।
कमती देख दहेज़ कुछ, शादी छोड़े बीच ॥

जो नहि लोभी-लालची, असल वही इनसान ।
दुनिया मे तो वाहवा ! आगे स्वर्ग-विमान ॥

जोश छोड़ कर होश से, अय युवको ! लो काम ।
रख कर नाम विवाह का, खडे करो नहि दाम ॥

कहता 'चन्दन' साफ़ है, अगर विकेगे आप ।
पछतायेगे आप भी, वन वेटी के वाप ॥

गया प्रदर्शन का समय, तजे प्रदर्शन आप ।
वने प्रदर्शन नहि कही, अय 'चन्दन' अभिशाप ॥

जितनी भी शुभ सादगी, जिस विवाह मे होय ।
अय 'चन्दन' वस वाहवा ! है करता हर कोय ॥

'चन्दन' जैसे देवियां, चढ़ती अव वारात ।
कहिये क्या इतिहास में, है देखी यह वात ?

'चन्दन' की सुनते नहीं, अब जो नेक सलाह ।
इक दिन वे पछतायेंगे, हो करके गुमराह ॥

पहुंचें चल कर शाम को, वापिस चलें प्रभात ।
'चन्दन' इतने के लिये, क्यों इतने उत्पात ?

आतिशबाजी देख कर, मूढ़ बजावें काख ।
'चन्दन' चुटकी मे बने, नोट हजारों राख ॥

मरे कबूतर बहुत से, है यह कोरा गन्द ।
आतिशबाजी ब्याह मे, कीजे भाइयो ! बन्द ॥

कई जगह पर जल गए, कई एक इनसान ।
आतिशबाजी के कभी, भूलो नहिं नुक़सान ॥

अगर आप के पास है, दौलत बहुत बड़ी ।
काम करो कुछ नेक तब, मत फूंको फुलझड़ी ॥

कपड़े, पुस्तक बांटिये, जो हैं दीन-अनाथ ।
मधुर असीसें पायेंगे, यो उन से दिन-रात ॥

शुभ कामो मे कीजिये, धन का सद् उपयोग ।
करें देर तक वाहवा ! दुनिया के जो लोग ॥

अच्छी पत्नी का पुरुष, जो करता अपमान ।
घर, जीवन उसका वने, 'चन्दन' नरक समान ।।

जहां भूप पति देव है, मन्त्री महिला होय ।
उस घर की ससार मे, समता करे न कोय ।।

कदर गुणों की कीजिये, रूप-रंग की नाहिं ।।
विन गुण 'चन्दन' कुछ नही, रूप-रंग के माहिं ।।

काली कोयल कोयला, मिश्री मगर जवान ।
गुण पै ही गुणवान सव, ग्रय 'चन्दन' कुर्बान ।।

सवा रुपये में पुत्र का, है न विवाह कमाल ?
गाँधी कायम कर गए, 'चन्दन' मगर मिसाल ।।

वढता है 'चन्दन' सदा, रग-रग में उत्साह ।
व्रह्मचर्य जिससे पले, वह क्यो करे विवाह ।।

।। ५२ दोहे सम्पूर्ण ।।

वचन सुधा-से सरस जो, सुनना चाहे आप ।
वचन कठोर उचारना, समझे 'चन्दन' पाप ॥

शान्ति मिटे जड़-मूल से, ऐसी सख्त ज़बान ।
'चन्दन' कहता है सदा, जड़- मूर्ख - नादान ॥

अनुभव की ही हीनता, झगडे को प्रगटाय ।
समझदार 'चन्दन' सदा, व्यर्थ विवाद हटाय ॥

हरगिज हानि नही करे, कालकूट विष-पान ।
जितना खोटे वचन से, हो 'चन्दन' नुकसान ॥

वचन-वचन नहिं एक-से, वचन-वचन मे फर्क ।
एक वचन सुख-स्वर्ग दे, एक वचन दे नर्क ॥

श्रावक को उक्त भाषा सयम का विवेक रखना ही चाहिये । मोटे तौर से श्रावक भाषा-विवेक की आठ बाते कही गई हैं—१-श्रावक थोडा वोलता है । २—कार्यवश वोलता है । ३—मधुर वोलता है । ४—चतुराई से (अवसर देख कर) वोलता हैं । ५—मर्मकारी भाषा नहीं वोलता है । ६—नम्रता पूर्वक वोलता है । ७—सिद्धान्तपूर्वक वोलता है और ८—प्राणीमात्र के लिये हित, मित एव प्रिय वोलता है ।

पं० मुनि सुमनकुमार जी लिखित
'श्रावक-कर्त्तव्य से'

पहेली नही बुझाइये, कहिये सभी स्पष्ट ।
'चन्दन' होगा अन्यथा, किया कराया नष्ट ।।

तीव्र, मन्द, गम्भीर या, चौथी फिर सुकुमार ।
वाणी तथा बनाइये, 'चन्दन' यथा-विचार ।।

नहि कर्कश नहि कटुक हो, हो वाणी गम्भीर ।
गला फाड जो बोलते, वे नहिं 'चन्दन' वीर ।।

चिल्लाना असमर्थता- का करवाता बोध ।
चिल्लाता 'चन्दन' वही, मन में जिसके क्रोध ।।

नहिं 'चन्दन' चिल्लाइये, सपने मे भी भूल ।
वचन बोलिये जिस तरह- मुख से झडते फूल ।।

इतनी भी 'चन्दन' नही, वाणी गिरने पाय ।
आधी मुख में ही रहे, समझ सभी नहिं आय ।।

सम्भव बाते कीजिये, धर धरती पर पैर ।
कही बोलते - बोलते, करे न नभ की सैर ।।

विज्ञ जनों का जगत में, हो स्वर पर अधिकार ।
सरस वचन 'चन्दन' कहा, सज्जन का श्रृंगार ।।

विनय-वचन जो बोल कर, दिया गया हो दान।
तीन लोक की सम्पदा, उसके नही समान ॥

निन्दा तथा सराहना, करे न अपनी भूल।
सब समझेंगे आपकी, वरना बात फिज़ूल ॥

समझेंगे सब स्वयं ही, जब यो बनता नीच।
पता न अवगुण और भी, होंगे कितने बीच ॥

स्वय स्वय की जो करे, सराहना नादान।
करता है विश्वास नहि, कोई भी मतिमान ॥

'चन्दन' निन्दा-स्तुति वही, करे अन्य जो लोग।
निज 'कर' सिर जूता सुमन, नहीं चढ़ाना योग ॥

आक्षेपक वाणी कही, यथा विषैला बान।
नही कभी भी बोलते, 'चन्दन' चतुर सुजान ॥

जूबे आप उतारते, जैसे जप के बीच।
बाते करते अन्य से, भाव तजे त्यो नीच ॥

सत्य स्थिर 'चन्दन' रहे, बढ़े परस्पर प्रीत।
गुणियो की यो गुण भरी, बात-चीत की रीत ॥

किसी घमण्डी से कभी, पाला जो पड़ जाय ।
देगा भारी काम बस, उत्तम यही उपाय ।।

बातो की महिमा बडी, दुनिया के दरम्यान ।
बात-चीत की रीत पर, अत: सदा दे ध्यान ।।

देश-काल को भूल कर, जो देगा व्याख्यान ।
तीन काल मे भी लहे, नहिं 'चन्दन' सम्मान ।।

अय 'चन्दन' धारा प्रवाह, बोलें चाहे आप ।
मगर विषय औ व्याकरण, हो नहिं जाएं साफ ।।

नीरस और अनावश्यक, चर्चा नही चलायं ।
यथासाध्य 'चन्दन' सदा, रोचक विषय बनायं ।।

सज्जन के सम्मान के, जो भी हो प्रतिकूल ।
मन-गढ़न्त कहिये नही, बाते ऊल-जलूल ।।

सहज सरस हो, सरल हो, हो नहिं किन्तु क्लिष्ट ।
वचन सुधा-से मिष्ट हों, और साथ हों शिष्ट ।।

जिससे आए और के, बिल्कुल नहिं कुछ हाथ ।
नही सयाने बोलते, शीघ्रता के साथ ।।

'चन्दन' इक ही बात को, पुनः-पुनः जो कहे।
ऐसे वक्ता से सभी, दूर सर्वदा रहे।।

नपी-तुली वाणी बहुत, रहती 'चन्दन' याद।
ज्यादा बोले वचन हों, ज्यादातर बर्बाद।।

समझें चाहे लोग कम, कहें सार ही सार।
अय 'चन्दन' उस सार पर, होंगे सब बलिहार।।

सार रूप संक्षिप्त ही, मीठी लगती बात।
ज्यों गन्ने का रस बिके, 'चन्दन' हाथों हाथ।।

कम-से-कम ही बोलिये, जितना 'चन्दन' होय।
काम एक से जो चले, शब्द कहो नहि दोय।।

कर्ण-प्रियता, स्पष्टता, वाणी के गुण खास।
इन बिन हर वक्ता लहै, अय 'चन्दन' उपहास।।

अधिक बोलने से कही, सुनना अधिक भला।
'चन्दन' अच्छा पुरुष नहि, फाड़े व्यर्थ गला।।

'चन्दन' की यह बात भी, रखिये याद विचित्र।
भावुकता से हास्य-से, भाषा बने सचित्र।।

रंग-राग तज जगत के, लिया त्याग अपनाय।
गुण-गाथा गुरुदेव की, कही न मुख से जाय॥

गुरु ही माता, गुरु पिता, गुरु ही देव-न देव।
निर्मल मन से कीजिये, 'चन्दन' गुरु की सेव॥

सारे ही संसार में, देखे नज़र पसार।
गुरु बिन कोई भी नहीं, अय 'चन्दन' हितकार॥

सुन्दर पत्नी पतिव्रता, रूप, राज, धन-माल।
सहज मिलें, मुश्किल मिलें- सद्गुरु 'चन्दनलाल'॥

गुरु की तारे जाति नहिं, गुरु का तारे त्याग।
गुरु के तप से, त्याग से, करें अतः अनुराग॥

गुरु के तप पर, त्याग पर, जिसे अटल विश्वास।
फटके उसके पास क्यों, कभी नर्क का त्रास॥

गुरु की महिमा का नही, कोई पारावार ।
नमस्कार गुरुदेव के, चरणन वारम्वार ।।

गुरु की सेवा स्वर्ग दे, गुरु की सेवा मुक्त ।
पाता 'चन्दन' सर्व सुख, गुरु - सेवा - संयुक्त ।।

गुरु-चरणन पर जो हुआ, अय 'चन्दन' कुर्बान ।
उस-सा जग दरम्यान नहिं, पुण्यवान गुणवान ।।

सच्चे गुरुवर विन मिले, कभी न सम्यग्ज्ञान ।
विना ज्ञान इनसान का, हो कैसे कल्याण ।।

अय 'चन्दन' संसार से, तरना जो स्वीकार ।
अपने तथा वनाइये, गुरु के यथा विचार ।।

विना परीक्षा गुरु किया, जिसने अंगीकार ।
तीन काल में भी कभी, पहुंचेगा नहिं पार ।।

शांति, शील, शम, सरलता, सत्य, दया की खान ।
मोह, मान, मद, रहित हो, गुरु करता कल्याण ।।

।। २१ दोहे सम्पूर्ण ।।

नही निमन्त्रण मानते; खुद भी नही पकायं ।
घर-घर से कर गोचरी, थोड़ा - थोड़ा लायं ।।

करते धर्म प्रचार हित, जगह-जगह की सैर ।
जूते नहिं पर पहनते, नित्य नगन ही पैर ।।

सिरके-दाढ़ी-मूंछ के, जितने भी है बाल ।
हाथो से ही नोच कर, करते सन्त कमाल ।।

वीड़ी या सिगरेट या— सुलफ़ा-गांजा-चरस ।
'चन्दन' हुक्का चिलम का, करे न सन्त स्पर्श ।।

जितनी रिश्तेदारिया, देते सव ही त्याग ।
वीतराग भगवान के, गाते निश-दिन राग ।।

मौज-मज़े की ज़िन्दगी— का नहिं किंचित ध्येय ।
जीवन में रख सादगी, सदा साधते श्रेय ।।

नही किसी से राग है, नही किसी से द्वेष ।
सवके सांझे सन्तजन, सांझा दें उपदेश ।।

'चन्दन' जिसकी आठ तह, बीच पड़ी हो डोर ।
साधू मुख पर बांधते, मुखपत्ती चौकोर ।।

।। १४ दोहे सम्पूर्ण ।।

माया-ममता की नहीं, 'चन्दन' दिल में गन्ध।
बैठ शान्त एकान्त में, भजता परमानन्द ॥

माया ममता-मोह जो, मानव मार मुकाय।
तजे क्रोध को, काम को, सोई सन्त कहाय ॥

सिरफ़ सन्त जो वेश का, त्याग न तप का काम।
पल्ले तो पाई नही, पर है लक्खी नाम ॥

जिसको प्यारा त्याग-तप, ज्ञान-ध्यान भगवन्त।
रजिस्ट्री खेत-मकान की, क्यो करवाए सन्त ॥

अपने ही जब तज दिये, आलीशान मकान।
कहो कराए किस लिये, डेरे का निर्माण ॥

मान और अपमान में, सुख-दुख में सम भाव।
'चन्दन' ऐसे सन्त की, तरी समझिये नाव ॥

सन्त सुपात्र बिना पते, जो दे दर्शन आन।
त्याग मान, सम्मान से, 'चन्दन' दीजे दान ॥

दर्शन सच्चे सन्त का, तृष्णा-तप्त बुझाय।
मिलता मन को शान्ति-सुख; कही न माहिमा जाय ॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥

जीवन सादा, सरल मन, बोले भी कम बोल।
अय 'चन्दन' उपकार-रत, मानव है अनमोल ॥

बिना विचारे एक भी, करे कभी नहि काम।
अय 'चन्दन' 'मानव' मधुर, मननशील का नाम ॥

इज्जत अपनी आप जो, है करता इनसान।
पाता है 'चन्दन' वही, औरों से भी मान ॥

मिलना मानव है कठिन, खोट न जिसमें पायं।
सही वही पर पुरुष जो, खोट मिटाता जायं ॥

भले सताएं दुष्ट जन, मन में भर दुर्भाव।
नहीं भूलता शिष्टता, सज्जन यही स्वभाव ॥

निन्द्य कर्म करते नहीं, तजें भले ही प्राण।
विपदा मे भी सत्पुरुष, 'चन्दन' रहे महान ॥

मिट जाती है दुश्मनी, दुश्मन जब मिट जाय।
'चन्दन' सज्जन पुरुष पर, जीवित उसे मिटाय ॥

बाहर मानव रूप, पर- भीतर दानव रूप।
'चन्दन' पापी पुरुष ज्यों, अन्धकारमय कूप ॥

तज इज्जत-इनसानियत, जो बनता हैवान।
अय 'चन्दन' इनसान का, वह वैरी इनसान॥

निश-दिन फ़ैशन का फिरे, जो भी बना गुलाम।
'चन्दन' रोशन वह कभी, कर सकता नहिं नाम॥

कामुक, क्रूर, कुमार्गी, झूठा बेईमान।
मानव के है रूप में, मानव वह 'शैतान'॥

भले-बुरे की है नहीं, जिसे ज़रा पहचान।
मानव के ही रूप में, मानव वह 'हैवान'॥

नीतिमान, निर्मलमना, न्यायी करुणावान।
असल रूप में है वही, अय 'चन्दन' 'इनसान'॥

क्रोधी,कामी,कुटिल नहिं, शम, दम, दया निधान।
मानव के है रूप में, मानव वह 'भगवान'॥

कौन तुझे पहुंचायगा, पगले! परले पार।
'चन्दन' अपनी नाव का, खुद तू खेवन हार॥

कल के वदले आज ही, चलें भले ही प्राण।
रहें धर्म मे दृढ़ त्यों, ज्यों 'चन्दन' चट्टान॥

॥ ३० दोहे सम्पूर्ण ॥

चतुर निपुण हो, पतिव्रता, विनयी आज्ञाकार ।
'चन्दन' ऐसी भामिनी, जानो कुल शृंगार ॥

दूर कलह से जो रहे, सुख-दुख में मुस्कांय ।
'चन्दन' ऐसी देवियां, घर को स्वर्ग वनांय ॥

पत्नी में, पतिदेव मे, छिड़ी जहां भी जंग ।
'चन्दन' सुख का काफिया, हुआ वही वस तंग ॥

पत्नी मे, पतिदेव में, निश्छल हो जो नेह ।
'चन्दन' पल में ही वने, स्वर्गपुरी वह गेह ॥

नारी-शोभा लाज औ- 'चन्दन' शुद्धाचार ।
वाहर के आभरण सब, दोनों विन वेकार ॥

जव तक नारी जाति का, होगा नही सुधार ।
तीन काल मे भी नही, सुधरेगा संसार ॥

करे वासना से घृणा, नारी से नहिं भूल ।
अरे अनाडी ! नारिया, जगत-जन्म का मूल ॥

सौ शिक्षक इक ओर हो, हो माता इक ओर ।
'चन्दन' माँ की सीख में, सव से ज्यादा ज़ोर ॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥

'चन्दन' देखा जगत सब, मिली न ऐसी अन्य ।
शील शिरोमणि 'अंजना', धन्य! धन्य!! फिर धन्य!!

निर्मल-मति 'सुलसा' सती- सी नहिं होगी और ।
देव-परीक्षा मे रही, 'चन्दन' दृढ़ हर तौर ।।

किया क्षमा भू-देव का, जिसने सब अपराध ।
'शिवा' सती को जगत यह, 'चन्दन' करता याद ।।

पैदा पाण्डव-से किये, जिसने पुत्र महान ।
मिलनी महिला सरल नहि, कुन्ती सती समान ।।

सहे अनेको कष्ट थे, शील-धर्म के काज ।
सती 'द्रौपदी' हो गई, सतियो की सिरताज ।।

कष्ट सहे पर शील मे, रही अडिग हर तौर ।
'चन्दन' 'दमयन्ती' सती, सतवन्ती - सिरमौर ।।

सती 'मदनरेखा' अहो ! निर्मल शील-निधान ।
युगवाहु को ठीक कर, किया स्वयं कल्याण ।।

उदयन प्रतिबोधित किया, देवलोक से आय ।
'प्रभावती' ने वचन यों, 'चन्दन' दिया निभाय ।।

राणी 'सुषुमा' 'रुकमणी', 'लक्ष्मणा' फिर जान ।
दुनिया तज-प्रभु-भज किया, तीनों ने कल्याण ॥

प्यारी श्रेणिक भूप की, 'काली' राणी जान ।
'चन्दन' संयम धार कर, पाया पद निर्वाण ॥

सुन करके भगवान की, वाणी मंगलकार ।
सती 'सुकाली' ने किया, भव से बेड़ा पार ॥

राणी श्रेणिक भूप की, 'नन्दा जी' शुभ नाम ।
पंच महाव्रत धार कर, काटे कर्म तमाम ॥

'नन्दवती' फिर दूसरी, श्रेणिक नृप की नार ।
जीवन सफल बना गई, पंच महाव्रत धार ॥

अय 'चन्दन' 'नन्दुत्तरा', आदिक और अनेक ।
श्रेणिक नृप की राणियां, तरी जगत से देख ॥

धन्य! सती 'सुरसुन्दरी', कष्ट अनेक सहार ।
'चन्दन' शील-प्रभाव से, भेटें अमरकुमार ॥

मुक्त किया था कुष्ठ से, जिसने नृप श्रीपाल ।
शील शिरोमणि धन्य वह, 'मैना' 'चन्दनलाल' ॥

॥ ३० दोहे सम्पूर्ण ॥

हर क्षण ही 'चन्दन' करे, कुछ न कुछ शुभ काम ।
पता नही क्षण कौनसा, अमर वनादे नाम ॥

इक क्षण भी मतिमान का, जीवन कहा अमूल्य ।
जन्म मूढ़ का पर सभी, समझो तृणके तुल्य ॥

करने योग्य तुरन्त जो, काम करें तत्काल ।
अच्छी अच्छे काम में, टाल न 'चन्दनलाल' ॥

जगत कही का भी कही, जाता पल दरम्यान ।
अतः उपेक्षा नहि करें, क्षण की भी गुणवान ॥

भविष्य भरोसे वैठना, भारी है अपराध ।
वर्तमान 'चन्दन' अतः, रहे हमेशा याद ॥

धर्म, कर्म, व्यवहार जो, करे समय अनुसार ।
पाता वह जन सफलता, 'चन्दन' सभी प्रकार ॥

जिस भी प्रज्ञावान ने, सफल वनाया 'आज' ।
उसका 'कल' भी आयेगा, सिर पर पहने ताज ॥

जिसका निर्वल 'आज' है, 'कल' भी निर्वल जान ।
'चन्दन' ऐसे जीव का, जीवन है वीरान ॥

जाता है जब हाथ से, निकल समय अनमोल।
होता है मालूम तब, 'चन्दन' उसका मोल ॥

'चन्दन' करते शोक सब, खोने के पश्चात्।
मोल मिले हर चीज़ पर, मिले नही दिन-रात ॥

घडी लगा 'कर' पर करें, काम समय अनुसार।
ठीक उन्हीं की है घड़ी, बाकी की बेकार ॥

गई घडी जो हाथ से, आएगी नहिं हाथ।
चलिये 'चन्दन' सर्वदा, अतः समय के साथ ॥

समय-नदी की बाढ में, बहे बहुत नर-नार।
कुछ ही नर पर कर गए, निर्मल यश विस्तार ॥

भला समय का मागना, भला समय का दान।
भला समय का बोलना, कथा - कीर्तन - गान ॥

बिना समय इक बात भी, सजे न उसी प्रकार।
बुढिया के 'चन्दन' यथा, सोलह ही शृंगार ॥

गया समय जो हाथ से, आएगा नहिं हाथ।
'चन्दन' अच्छे काम में, लगे रहो दिन-रात ॥

॥ ३० दोहे सम्पूर्ण ॥

‘मुश्किल मन है रोकना’, कहते सारे लोग ।
मुश्किल मन क्या रोकना, ‘चन्दन’ साधे योग ।।

जब तक मन में नहिं जगे, गहरा ज्ञान-विवेक ।
भटकेगा – भटकायगा, इसमें मीन न मेख ।।

वश मे ‘चन्दन’ देह हो, नयन, नाक, मुख, कान ।
मनो विजेता की यही, है पक्की पहचान ।।

‘चन्दन’ मन से हो गये, हो जो नाहक पाप ।
दूर उन्हे कर लीजिये, करके पश्चाताप ।।

‘रावण’ मरता मुफ्त क्यों, जो लेता मन मार ।
‘चन्दन’ जीवन-राज-सुख, गया सभी कुछ हार ।।

‘सीता’ ने मन जीत को, क़ायम एक मिसाल ।
विश्व-वन्द्य माता बनी, देखो ‘चन्दनलाल’ ।।

‘सेठ सुदर्शन’ ने किया, मन को जीत कमाल ।
सिंहासन शूली बनी, ‘चन्दन’ चकित नृपाल ।।

चमत्कार-सा हो गया, शीश-महल दरम्यान ।
मन की दुनिया बदलते, बने ‘भरत’ भगवान ।।

शुद्धि करे सब देह की, करे न मन की कोय ।
निर्मल मन को जो करे, जन्म-मरण क्यों होय ॥

देही दुनिया देखती, दिल को पर भगवान ।
जो देखे भगवान को, झट 'चन्दन' कल्याण ॥

कभी चले अनुकूल तो, कभी चले विपरीत ।
'चन्दन' मन-सा और नहिं, कोई वैरी - मीत ॥

हानि विचारे और की, ले ठगने की राह ।
मांगे माया जगत की, यह मन बे-पर्वाह ॥

'चन्दन' 'सुनवाए' बुरा, 'करवाए' दुष्कर्म ।
'दिखलाए' नीचा सदा, चंचल मन बेशर्म ॥

अय 'चन्दन' चल चित्त हो, जो कोई नर-नार ।
न ही वह इस पार है, न ही है उस पार ॥

तन-मन-वाणी पर सदा, है जिसका अधिकार ।
उसे योगियों का कहे, अय 'चन्दन' सरदार ॥

ज्ञान,ध्यान,जप,तप तथा, स्वाध्याय, सत्संग ।
मन वश करने के सरल, अय 'चन्दन' छः ढंग ॥

॥ ३० दोहे सम्पूर्ण ॥

वही कहाये कर[1] कमल, जो कर करता दान ।
दान-हीन कर जानिये, 'चन्दन' चाम समान ॥

मेघ[2] सदा ऊचा रहे, जो है जल-दातार ।
संग्रह करता सिन्धु ले, नीचे मगर निहार ॥

चित्त, वित्त और पात्र[3] ये, जितने शुद्ध महान् ।
अल्प,अधिक फल आपको, 'चन्दन' देगा दान ॥

रत्न - जटित अंगूठिया, कंगन है सब भार ।
अय 'चन्दन' है दान ही, हाथों का शृंगार[4] ॥

अजा-गले के जिस तरह, दोनों थन बेकार ।
विना दान इनसान भी, है 'चन्दन' भू-भार ॥

अय 'चन्दन' सद्-दान है, धर्म-भवन का द्वार ।
जो भी चाहे पहुचना, करले अंगीकार ॥

---

१ *दानामृत यस्य करारविन्दे ।*

२ *गौरव प्राप्यते दानान्न तु वित्तस्य सचयात्*
स्थितिरुच्चै पयोदाना पयोधीनामध स्थिति —नीतिशतक

३ *दव्व सुद्धेण, दायग सुद्धेण, पडिग्गह सुद्धेण*
तिविह तिकरण सुद्धेण, दाणेण । —भगवती श० १५

४ *दानेन पाणिर्नतु कंकणेन ।*

धन की गतियां तीन[1] है, दान, भोग औ नाश।
जो नहि देता, भोगता, रहे न पाई पास॥

मधु-मक्खी[2] को देखिये, रखती जो मधु-जोड।
दान, भोग से रहित को, लेते लोग निचोड॥

दान, शील, तप, भावना, चार धर्म - आधार[3]।
प्रथम सभी मे दान है, 'चन्दन' करे विचार॥

दानवीर नहि समझिये, अधिक करे जो दान।
ठीक समय पर दे वही, दानवीर इनसान॥

वोकर वीज किसान ज्यो, ढक देता तत्काल।
त्यो दे दान छुपाय जन, चगा 'चन्दनलाल'॥

---

[1] दान भोगो नाशस्तिस्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य।
यो न ददाति न भु क्ते, तस्य तृतीया गतिर्भवति॥

—नीतिशतक

[2] देय भोज! धन धन सुकृतिभिर्नो सचित सर्वदा।
श्री कर्णस्य वलेश्च विक्रमपतेरद्यापि कीर्ति. स्थिता॥
आश्चर्यं मधुदानभोगरहित नष्ट चिरात् सचितम्।
निर्वेदादिति पाणिपाद-युगल घर्षन्त्यहो मक्षिका॥

[3]. दुर्गतिप्रपतज्जन्तु-धारणाद् धर्म उच्यते।
दान-शील-तपो भाव-भेदात् स तु चतुर्विध॥

—त्रिषष्टिशलाका पुरुष-चरित्र

'चन्दन' इस ससार मे, है जितने अणगार ।
उनको कहना चाहिये, ज्ञान - दान - दातार ॥

करुणा, संग्रह, भय तथा, लज्जा, गौरव, धर्म ।
कृत, कारुण्य, करिष्यति, दसवा दान अधर्म ॥

रोगी, दीन, अनाथ पर, होकर करुणावान ।
'चन्दन' देते लोग जो, है 'अनुकम्पा' दान ॥

दुख में फंसा सहायता–पाने को इनसान ।
देता है जो कुछ कहे, उसको 'सग्रह' दान ॥

राजपुरुष को, भूप को, जो जन या बलवान ।
'चन्दन' भय से जो दिया, कहे उसे 'भय' दान ॥

मन मे तो 'चन्दन' नही, देने का अरमान ।
लज्जा से पर जो दिया, है वह 'लज्जा' दान ॥

जिसने जो कुछ भी दिया, पाने को सम्मान ।
उसका ही तो नाम है, 'चन्दन' 'गौरव' दान ॥

महाव्रती को भक्ति से, दिया गया जो दान ।
'धर्म-दान' 'चन्दन' उसे, कहे सभी गुणवान ॥

‘महावीर’ के जीव ने, वन करके ‘नयसार’।
दान दिया तो पालिया, समकित का उपहार ॥

रोग-मुक्त जिससे हुए, महावीर भगवान।
गाथा-पत्नी ‘रेवती’, दिया प्रशसित दान ॥

जब भी कोई सामने, आता था धनवान।
गौतम प्रभु से पूछते, क्या कर आया दान ?

जैन-धर्म का जिस समय, जाना सत्य स्वरूप।
तभी दानशाला शुरु, करी ‘प्रदेशी’ भूप ॥

शालिभद्र को जो मिला, वैभव, मान महान।
कारण उसका भी यही, अय ‘चन्दन’ था दान ॥

श्रावक ‘तुंगिया नगर’ के, दिल उदार - दातार।
दिन को रखते थे खुले, ‘चन्दन’ घर के द्वार ॥

धन सब वारा देश पर, विना किये परवाह।
ओसवाल-कुल-तिलक था, ‘चन्दन’ ‘भामाशाह’ ॥

सुनकर जिनका नाम शुभ, है कहते सब वाह !
दानी वीर गुजरात के, ‘खेमा’ ‘जगडूशाह ! !

॥ ५५ दोहे सम्पूर्ण ॥

शान्त चित्त हो, चतुर हो, तीजे सद्गुणवान ।
'चन्दन' साधे सतत ही, जनता का कल्याण ॥

कभी किसी का भी करे, हरगिज़ नहीं अनिष्ठ ।
अय 'चन्दन' शासक रहे, सभ्य, शिष्ट औ मिष्ठ ॥

सुन्दर जीवन, साथ में, सुन्दर हो स्वभाव ।
ऐसे शासक पुरुष की, तरी समझिए नाव ॥

प्रेम, दया, करुणा, क्षमा, शील, सत्य, सन्तोष ।
सप्त गुणो से युक्त जो, शासक गुण का कोष ॥

जुआ, चोरी, ब्लैक का, है जैसे प्रतिषेध ।
शासक शासन में करे, तैसे मद्य निषेध ॥

गुण्डा-गर्दी, ठगियां, हत्या, अत्याचार ।
शासन में से दूर कर, शासक करे सुधार ॥

जिसके शासन काल में, स्वर्ग बने संसार ।
'चन्दन' उसको देवता, कहते सब नर-नार ॥

जनता बेटी - बेटियां, शासक माई - बाप ।
घी-खिजड़ी जो परस्पर, वहां कहां सन्ताप ॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥

सेठ सुदर्शन, शिवा जी, पूरनभक्त, प्रताप ।
जैसे उच्च चरित्र थे, बनना बच्चो ! आप ॥

जो कि काले नाग-सा, करे रंग मे भंग ।
करे कभी नहिं भूल भी, दुष्ट जनों का संग ॥

नकल मार कर छात्र जो, हो जाते है पास ।
उन के जीवन का कभी, होता नही विकास ॥

जिनसे लेते आप है, सद् विद्या का दान ।
मात-पिता सम कीजिए, उन सब का सम्मान ॥

पुत्र-पुत्रियों-सा स्नेह, जिनसे पाते आप ।
शिक्षक के अपमान से, मिलता दुख-सन्ताप ॥

विद्या-गुरु तुम को कभी, डाले भी फटकार ।
महा मधुर ही मानना, मिकचर के अनुसार ॥

अन्दर हित का हाथ पर, ऊपर मारे चोट ।
शिक्षक सदा निकालता, कुम्भकार सम खोट ॥

जिसने शिक्षण ले लिया, खूब लगा कर ध्यान ।
चन्दा-सा वह चमकता, दुनिया के दरम्यान ॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥

अपने भाषा, वेश से, जिसको भी हो द्वेष ।
'चन्दन' गौरव एक दिन, खो बैठे वह देश ।।

इगलिश है हर काम मे, हिन्दी से परहेज ।
'चन्दन' हिन्दी बन चले, एक तरह अंग्रेज ।।

'चन्दन' भाई-भगिनियां, भारत-भाषा भूल ।
मिस-मिस्टर है बन रहे, अग्रेज़ी मे फूल ।।

लिखे 'वैलकम' द्वार पर, हिन्दी द्रोही लोग ।
सभी फिरंगी-दास वे, है निन्दा के योग ।।

हिन्दी तज हिन्दी करे, जो इंगलिश से प्यार ।
अब 'चन्दन' वे क्यो नही, हिन्दी के गद्दार ?

पत्रो पै इगलिश पते, तन पर इगलिश वेश ।
बोर्ड इगलिश के यहा, यह है भारत देश !!

नज़र मार 'चन्दन' जरा, देखो तो बाज़ार ।
इंगलिश बोर्ड हैं सैकड़ों, हिन्दी के दो-चार !!

उन में भी हिन्दी तले, ऊपर इंगलिश-मेम ।
'चन्दन' हिन्दुस्तान का; यह है हिन्दी-प्रेम !!

'चन्दन' तन स्वाधीन है, है मन मगर गुलाम ।
अपने भाषा, वेश से, क्या हिन्दी को काम ?

गला सजाने के लिए, 'चन्दन' 'टाई' व्यर्थ ।
गला सजाने को सिरफ़, वाणी मधुर समर्थ ॥

निन्दा, चुगली गालियाँ, वाणी जिसकी सख्त ।
ख़ाक सजाएगा गला, 'चन्दन' टाई-भक्त ॥

साधु, सती को देख जो, 'चन्दन' झुके तुरन्त ।
बिन टाई के ही सजे, गर्दन वह अत्यन्त ॥

'चन्दन' जब अंग्रेज़ वह, चला हिन्द को लूट ।
दिये तीन तोहफे हमे, इंगलिश, फैशन, फूट ॥

'चन्दन' 'मम्मी' अब कहो, 'माँ' कहने में पाप ।
ख़बरदार! जो बाप को, कहा किसी ने बाप ।!

'चन्दन' इंगलिश क्या पढे, बने लोग अंग्रेज़ ।
शीश 'हैट', 'टाई' गले, इंगलिश बोले तेज़ ।

इंगलिश पढ़ने के नहीं, 'चन्दन' कभी विरुद्ध ।
बनिये पर अंग्रेज़ मत, रखिये निर्मल बुद्ध ॥

॥ ३० दोहे सम्पूर्ण ॥

पुण्य-पाप का आपको, कुछ हो अगर विचार।
सिरका जिस में हो पड़ा, मत खाना आचार ॥

लोक और परलोक में, जो है दुख की खान ।
भोजन कभी अभक्ष्य का, करे नहीं मतिमान ॥

मच्छर-कीट-पतंग-से, पड़ते जीव अपार ॥
'चन्दन' भोजन रात का, दीजे विज्ञ ! विसार ॥

'चन्दन' अपनी भूख से; जो जन ज्यादा खाय ।
रोग अनेकों मोल ले, मूर्ख मुफ़त कहाय ॥

विना भूख भोजन करे, अय 'चन्दन' बीमार ।
गरल अधिक आहार है, अमृत अल्प आहार ॥

चाहे कोई भी कभी, अय 'चन्दन' ले देख ।
हित-मित-अल्पाहार से, मिटते रोग अनेक ॥

चप-चप की ध्वनि नहिं करे, करे न हाथ खराव ।
खाएगा मुख वन्द कर, मानव 'स्थिर स्वभाव' ॥

सड़प-सड़प मुख खोलकर, करता वसन खराव ।
जल्द-जल्द है निगलता, जन 'चंचल स्वभाव' ॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥

खुल जाता है दैत्य-सा, जिसमें सभी गला।
'चन्दन' कभी असभ्य का, हसना नहीं भला॥

चाहे 'चन्दन' है हंसी, एक सुगन्धित फूल।
लख लोगो के दोष पर, हसना भारी भूल॥

हसी-हंसी मे भी कभी, कहे न ऐसी बात।
जिससे जलता मन रहे, अय 'चन्दन' दिन-रात॥

रोग-मूल खासी अगर, हंसी कलह का मूल।
हसी-दिल्लगी नहि करे, 'चन्दन' कभी फिज़ूल॥

खुल करके हसते सदा, 'चन्दन' जो भी लोग।
रोग उन्हे कम व्यापते, रहते अधिक निरोग॥

अगर गिरे बाज़ार मे, बाईसिकल - सवार।
मददगार कोई बने, हसते मगर अपार॥

अन्धा, काना, निर्धनी, बेढगा — बेडौल।
दीन-दुखी-दुर्बल लखा, करता मूढ मखौल॥

बात हंसी की देख-सुन, हैं हंसते अल्पज्ञ।
छुपा जिन्होसे कुछ नही, नही हंसे सर्वज्ञ॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥

नीर दूध मे, स्वर्ण मे, जो भी खोट मिलाय ।
होने पर भी चोर न, 'चन्दन' चोर कहाय ।।

करना राज्य विरुद्ध औ, देना नही जगात ।
चोरी के ही भेद हैं, ये भी दो विख्यात ।।

कविता लेकर अन्य की, भर देना निज नाम ।
यह भी एक प्रकार से, चोरी का है काम ।।

प्रायः थोड़े दाम में, मिले चुराया माल ।
कभी भूल कर भी नहीं, लेना 'चन्दनलाल' ।।

जूते धर्म-स्थान से, जो भी दुष्ट चुरायं ।
जन्मान्तर मे शीष पर, वही तड़ातड़ खायँ ।।

आदमियत है आपको, 'चन्दन' अगर क़बूल ।
बिन आज्ञा नहिं लीजिये, चीज़ किसी की भूल ।।

हीरे-सा अनमोल जो, मिले न बारम्बार ।
सुरदुर्लभ मानव जनम, जाते तस्कर हार ।।

यहां अयश औ जेल-दुख, आगे नर्कावास ।
समझदार जन जायं क्यों, फिर चोरी के पास ।।

।। १४ दोहे सम्पूर्ण ।।

जाते छेड़े सर्प को, लाठी-छड़ी लगाय।
करे सगती नीच की, मूढ़न - भूप कहाय॥

शौच समय जो बोलता, पड़ा रहे बेकार।
करे व्यर्थ ही पाप जो, मूढ़न का सरदार॥

यान चलाये दृष्टि बिन, बुद्धि बिना व्यापार।
बिना प्रयोजन डोलता, मूढ़न का सरदार॥

जो जन करे अनेक से, एकाकी तकरार।
उसको भी 'चन्दन' कहा, मूढन का सरदार॥

रोके जो दातार को, नहिं माने उपकार।
गुणियो की निन्दा करे, मूढ़न का सरदार॥

चलते - उठते, बैठते, करे बड़ों को पीठ।
'चन्दन' उसको जानिये, महामूढ जन ढीठ॥

बात-बात में गालियां, कवि से करे विरोध।
नमता से जो नहिं नमे, मूर्ख महा अबोध॥

केवल रीझे रूप पर, न देखे गुण - दोष।
अय 'चन्दन' उस मूढ़पर, पुनः-पुनः अफ़सोस॥

करे वड़ों का सामना, करे काम में देर ।
मूढ़-शिरोमणी जानिये, जो वातों का शेर ।।

अय 'चन्दन' जो जन करे, हरइक का विश्वास ।
उसको भी वस जानिये, मूर्ख-दल का दास ।।

'चन्दन' जिस वे-अक़ल का, नहीं अक़ल में दखल ।
वन सकता न वह वड़ा, औरों की कर नक़ल ।।

वन करके अति आलसी, रखना घर में दास ।
चन्दन यह भी जानिये, मूर्खता के पास ।।

धर्म-पुण्य - भगवान के, कहकर छल से वाक ।
मूर्ख जन को लूटते–रहते हैं चालाक ।।

पाने को सम्मान या– पाने को सन्तान ।
मूर्ख वनते वहुत से, वनने को धनवान ।।

करे वुद्धि-विपरीत जो, अय 'चन्दन' हर काम ।
उसको तो संसार में, 'मूर्ख' कहते आम ।।

वालिश, मूर्ख, मूढ औ– यथाजात, वैधेय ।
अज्ञ, 'मूढ' के नाम छः, अय 'चन्दन' हैं ज्ञेय ।।

।। ३० दोहे सम्पूर्ण ।।

उसे सिखाने में सदा, मन में उपजे कोप।
उसकी भी औ स्वयं की, हो प्रज्ञा का लोप ॥

सबसे अच्छी अकल की, बात यही कहलाय।
मूर्ख को 'चन्दन' कभी, कही न छेड़ा जाय ॥

मूर्ख रीझे सहज ही, बहुत सहज विद्वान।
अर्द्ध-पठित का रीझना, 'चन्दन' कठिन महान ॥

फिरे महाज्ञानी बना, अल्प ज्ञान जो पाय।
उसको तो सर्वज्ञ भी, नहिं सक्ता समझाय ॥

बचें अगाडी सांड की, बचें पिछाड़ी घोड़।
बचे सदा 'चन्दन' मगर, मूर्ख से चहुं ओर ॥

कथा-कहानी सरस सुन, या फिर कुछ भी खाय।
'चन्दन' मूर्ख आदमी, वशीभूत हो जाय ॥

कुछ भी कर दे आप या- उसके मन अनुकूल।
वशीभूत हो जायगा, खुशियों में वह फूल ॥

झूठा, निन्दक, नीच, खल, चोर, चुग़ल, शठ, मूढ।
परिचय 'चन्दन' आठ से, करें कभी नहिं गूढ़ ॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥

क्रोध, कपट से, काम से, वचता रहे विशेष ।
वुद्धिमान जन जानिये, करे न ईर्ष्या, द्वेष ॥

रहे सदा ही सोचती, जो कि धर्म-विरुद्ध ।
अय 'चन्दन' पण्डित सभी, कहते उसे 'कु-वुद्ध ॥'

भ्रमणशील चित-वृत्तियां, जो हैं करती तंग ।
रोका जाता है उन्हें, 'चन्दन' प्रज्ञा-संग ॥

जिससे अय 'चन्दन' मिटे, जन्म-मरण का रोग ।
मनो-वृत्ति का रोकना, ही कहलाता 'योग' ॥

रहे न कोई काम का, वुद्धि विगड़ जो जाय ।
अय 'चन्दन' संसार में, 'पागल' वह कहलाय ॥

करता ही यों तो रहे, उन्मादी उत्पात ।
अधिक उछलता-कूदता, मगर चान्दनी रात ॥

मानस-उन्मादी लखो, पर पूनम की रात ।
अगर हुआ उन्माद तो, करे अधिक उत्पात ॥

जमुहाना, अंगडाइयां— लेना वारम्बार ।
पागलपन का चिन्ह है, 'चन्दन' सभी प्रकार ॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥

धन देना तो मित्रता– का है 'चन्दन' काम ।
पीछे वैर-विरोध जो, वापिस मागे दाम ॥

'चन्दन' सच्चे मित्र की, विपद कराए परख ।
रहे विपद में दूर जो, दूर उसी से सरक ॥

अंतरंग-सच्चा सखा, हरइक को ही मान ।
मित्रोचित व्यवहार से, होता है नुक़सान ॥

साथी स्वार्थ समय के, जो होते इनसान ।
'चन्दन' उनसे दूर ही, रहने में कल्याण ॥

श्रेष्ठ मित्र की है यही, अय 'चन्दन' पहचान ।
सुख-दुख मे व्यवहार है, करता एक समान ॥

रोके 'चन्दन' पाप से, अच्छे राह चलाय ।
अवगुण लोपे, गुण कहे, सच्चा मीत कहाय ॥

करता अनुचित लाभ का, जो भी पुरुष प्रयास ।
'चन्दन' उसकी मित्रता, हुई समझिये नाश ॥

लेन-देन का कीजिये, नहिं 'चन्दन' व्यवहार ।
वना-वनाया अन्यथा, विगड़ जायगा प्यार ॥

'चन्दन' की इस बात पर, खूब दीजिये ध्यान।
पर-बल से कोई कभी, बनता नहि बलवान ॥

मैत्री के - व्यवहार में, रहिये सदा सतर्क।
तिल-से संशय से कहीं, पड़े न गिरि-सा फ़र्क़ ॥

मिलते रहने से भले, चलें प्रेम - व्यवहार।
मिलना 'चन्दन' चाहिये, पर नहिं बारम्बार ॥

सखा स्वार्थी की कथा, कहता यों संसार।
'चन्दन' खिसके दम लगा, गांजू किसके यार ॥

कभी कहावत भूलिये, 'चन्दन' यह भी मत।
किसके मीत पहाडिये, खिसके खाकर भत्त !!

होता स्वागत था कभी, दूध पिला भर पेट।
'चन्दन' पर अब मीत मिल, पेश करें सिगरेट !!

मित्रता का रेत से, आज निकलता तेल।
मिला मित्र तो ले चले, गन्दे सिनमा खेल ॥

आज बिगाड़ें यार ही, यारो का परलोक।
'चन्दन' सिनमा-शौक पर, शोक! शोक! शत शोक!!

फ़िल्म, सुरा, सिगरेट के, मिलते मित्र अनेक।
दोस्त दुर्लभ एक भी, जिस में विनय-विवेक ॥

करे प्रशंसा सामने, निन्दा पर पश्चात।
'चन्दन' ऐसे मीत से, करें कभी नहिं बात ॥

'चन्दन' दाख सुपारियां, और वेर, बादाम।
चार तरह के मीत के, साफ़ समझिये नाम ॥

प्रीत रीत की है अहो ! कैसी यह विपरीत।
सुख में न, दु.ख में सदा, परखा जाए मीत ॥

पीछे करे सराहना, मिलने पर सम्मान।
दु:ख मे करे सहायता, रीत प्रीत की जान ॥

मित्रता का बहुत है, करना तो आसान।
उसे निभाना है मगर, 'चन्दन' कठिन महान ॥

जिससे जाए न कही, कोई कभी छला।
सदा सखा संदिग्ध से, वैरी प्रगट भला ॥

कही बुराई आपका, ले नहिं गला दबोच।
'चन्दन' अत: बनाइये, सखा सदा ही सोच ॥

॥ ४६ दोहे सम्पूर्ण ॥

आज करेंगे आप जो, औरो से व्यवहार ।
वही करेगा आप से, क्या न कभी संसार ?

बहुत बड़ी बारात का, गया जमाना लद् ।
बहुत बड़ी बारात को, करदो फ़ौरन रद् ॥

पांच-सात से अधिक न, बिल्कुल भी हों साथ ।
सब से अच्छी अब वही, कहलाती बारात ॥

वाद्य, बीज, मिष्टान्न पर, खर्च ज़रा नहिं होय ।
छोटी सी बारात की, करे न समता कोय ॥

पैसा खर्च विवाह पर, होता है जो व्यर्थ ।
सोच-समझ कर देखिये, क्या है उसका अर्थ ?

बेटी को पैसा वही, नकद दिया जो जाय ।
आगे उसके सैकड़ो, बिगड़े काम बनाय ॥

शेर बबर हो किस लिये, बैठे हिम्मत छोड़ ?
बन्धन बुरे विवाह के, 'चन्दन' फैंको तोड़ ॥

सभी भविष्य सुधार लो, अभी समय है हाथ ।
कभी बनेगी फिर नही, हरगिज़ बिगडी बात ॥

जो है शिवा - प्रताप-सा, उच्च चरित्र जवान ।
देश, क़ौम की, वंश की, सच्ची उससे शान ।।

दुराचार औ द्यूत ओ– मदिरा, मास, कु-संग ।
पांचों प्रायः छोड़ते, मानव को कर नंग ।।

खाना - पीना - पहनना, चौथी मौज बहार ।
इनको ही मत समझना, नर जीवन का सार ।।

विनय, वीरता, धीरता, न्याय, नीति, उपकार ।
दया, दान नर जन्म के, आठ कहे शृंगार ।।

उभय लोक में सुधरता, जिनसे काम तमाम ।
सदाचार का, सत्य का, रखना दामन थाम ।।

मानव जीवन का पतन, होता जिससे खास ।
खोटी संगत के कभी, नही फटकना पास ।।

धर्म-देश पर क़ौम पर, गए जान जो वार ।
अय 'चन्दन' बलिहार है, उन पर सब संसार ।।

कभी आप थे बाल तो– पूरे आज जवान ।
होना है फिर वृद्ध भी, रहे धर्म का ध्यान ।।

।। ३० दोहे सम्पूर्ण ।।

'चन्दन' अपनी सभ्यता, जब से भूले लोग।
दिन-दिन देखो बढ़ चले, कैंसर जैसे रोग॥

बाबू बनने के लिये, लोग हुए पथ भ्रष्ट।
धुआं निकाले नाक से, करके पैसे नष्ट!!

धुआ निकाले नाक से, इस में कौन कमाल।
अगर निकाले कान से, माने 'चन्दनलाल॥'

वे ही पैसे दूध पर, अगर लगायें लोग।
'चन्दन' प्रज्ञा-बल बढ़े, कम ही व्यापें रोग॥

अब तो डाक्टर-वैद्य भी, है कहते यह बात।
'बीड़ी न सिगरेट को, कभी लगाओ हाथ॥'

अमरीका - इंग्लैंड भी, अब करते ऐलान।
'तम्बाकू - सिगरेट हैं, निरे रोग की खान॥'

कारतूस कहिये इसे, कहिये मत सिगरेट।
'चन्दन' चूसे रक्त यह, करे न लाग-लपेट॥

धुआं बुरा सिगरेट का, करे मुन्ज-सी मूंछ।
'चन्दन' अन्दर की दशा, मन से प्यारे! पूछ॥

'चन्दन'-खुश्की-कब्ज से, हो करके फिर ग्रस्त ।
टट्टी बैठे भी बनें, पीने के अभ्यस्त !!

'चन्दन' मेरे देश की, कैसी उलटी चाल ।
शादी पर सिगरेट के, भर-भर बाटे थाल !!

विगड़े ही थे वृद्ध तो, पहले 'चन्दनलाल' ।
बाल, युवक भी विगड़ते, देख मुफ़्त का माल ।।

वच्चो का जो विगड़ना, 'चन्दन' नही पसन्द ।
व्याह बीच सिगरेट का, देना कीजे बन्द ।।

नशा न कोई भी भला, नशा बुरा हर एक ।
'चन्दन' जो करता नशा, दशा बुरी लो देख ।।

बिगड़े उसका लोक भी, विगड़े फिर परलोक ।
'चन्दन' वदले हर्ष के, पड़ता पल्ले शोक ।।

धन, सेहत का नाश हो, और अनेकों रोग ।
करें कभी भी न नशा, अतः सयाने लोग ।।

जीवन समझो न इसे, समझो इक वरदान ।
दुर्व्यसनो को छोड़ कर, मानव बनो महान ।।

।। ३० दोहे सम्पूर्ण ।।

बात-बात पर धमकिया, देता वह खुर्राट ।
कभी रहेगा न खड़ा, अगर पिलाए डांट ॥

फ़ौरन ही तब बोलता, वह छलिया इस तौर ।
'मतलब मेरा और था, लिया आपने और ॥'

नही एक भी बोलता, कभी काम की बात ।
व्यर्थ बोलता - डोलता; रहता वह दिन-रात ॥

'चन्दन' ज्यादा बोलते, मूर्ख और अशक्त ।
बड-बड़ करते देखिये, दोनों को हर वक्त ॥

तरकश सम जिसमें रहे, भरे वचन के वाण ।
उसको मुखड़ा नीच का, अय 'चन्दन' लो जान ॥

पर-निन्दा, अपशब्द तो, रहें सदा मुख बीच ।
गला फाड़ कर बोलता, दुर्मुख-कर्कश - नीच ॥

स्वार्थवश वह नीच जन, बनता बड़ा मधुर ।
हिरण-शिकारी व्याध ज्यो, छेड़े मीठा स्वर ॥

काक वृत्ति उसकी कभी, छुपती नही छुपाय ।
हो ही जाती है प्रगट, कितने करे उपाय ॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥

गहन विषय में बात जब करता कोई धीर ।
'चन्दन' स्वर से-शकल से, हो वह गहन गम्भीर ॥

भावो में गम्भीरता, स्वर में दृढ़ता होय ।
'चन्दन' विषय अनावश्यक, विज्ञ छुए न कोय ॥

पुनः-पुन इक बात को, घोटे न विद्वान ।
तौल-तौल कर शब्द हर, बोले प्रज्ञावान ॥

पुनः-पुनः इक बात को, जो जन कहे निशंक ।
'चन्दन' उसको जानिये, ज्ञान-गुणों से रंक ॥

सज्जन बोले अल्प ही, मन मे विनय बसाय ।
पर-निन्दा, पर-भामिनी—चर्चा नही सुहाय ॥

दुर्विनीत - दम्भी करे, कर्कश स्वर में बात ।
आकृति से ऐसे लगे, जैसे यम साक्षात ॥

धूर्त का 'चन्दन' विपय, पर-निन्दा हो एक ।
मुख मुद्रा रहस्यमयी, दबा हुआ स्वर देख ॥

मुख छोटा, बाते बड़ी, बाणी [illegible] लच्छेदार ।
चाटुकार 'चन्दन' सदा, बने विनय—अवतार ॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥

नही इष्ट जो अपको, 'चन्दन' मन-सन्ताप ।
आदर में न कृपणता, कभी कीजिये आप ।।

आदर से आदर सभी, करते 'चन्दन' लोग ।
बिन आदर आदर करे, वही बड़ाई योग ।।

करे भले ही न करे, औरों का सत्कार ।
तिरस्कार का आपको, मगर नही अधिकार ।।

करे अनादर न कभी, सहकर भी अपमान ।
सज्जन की सबसे बड़ी, अय 'चन्दन' पहचान ।।

औरों का अपमान कर, अपना चाहे मान ।
दुर्जन की सबसे बडी, अय 'चन्दन' पहचान ।।

सहता क्यों अपमान अहि, जो गुण होते बीच ।
जिसको भी बस देखता, डक चलाता नीच ।।

अय 'चन्दन' गुणवान बन, जो चाहे सत्कार ।
गुण से कोयल का करे, आदर सब ससार ।।

अगर अनादर से मिले, मत खा हलवा-खीर ।
'चन्दन' अमृत तुल्य पर, आदर का तो नीर ।।

।। १४ दोहे सम्पूर्ण ।।

गृह-स्वामी को चाहिए, मधुर-मृदुल व्यवहार ।
स्वयं सभी स-स्नेह रहे, 'चन्दन' तावेदार ।।

वालक, वूढे, नारिया, तीन तरह के लोग ।
अलग-अलग सत्कार के, समझो 'चन्दन' योग ।।

शुद्ध स्नेह, सुख; सरलता- मिश्रित जो व्यवहार ।
'चन्दन' वालक है सभी, उस के ही हक़दार ।।

गेह-देवियों के लिये, वोल गए गुणवान ।
रमा-रूप है वे सभी, कभो न हो अपमान ।।

नही ठहरती लक्ष्मी, उसके घर दरम्यान ।
जहां सदा होता रहे, गृहिणी का अपमान ।।

वृद्धो का हो वाल-सा, अय 'चन्दन' स्वभाव ।
विनय विना नहिं कीजिए, कोई भी वरताव ।।

निर्वलता के ही सबव, रहते वृद्ध हताश ।
समझदार उनको नही, करते कभी निराश ।।

वच्चो-सी हो सरलता, युवको-सा हो जोश ।
स्वर्ग सदन न क्यो वने, वृद्धो-सा जो होश ।।

।। १४ दोहे सम्पूर्ण ।।

साख उखड़ जाए अगर, फिर नहि विकता माल।
होता है नीलाम ही, कहता 'चन्दनलाल'॥

अय 'चन्दन' उत्साह औ, आशा औ विश्वास।
इनको जागृत बिन किये, रमा न फटके पास॥

एकाग्रता औ लगन औ- तीजा अध्यवसाय।
तीनों बिन व्यापार मे, कौन सफलता पाय॥

अधिक लाभ के लोभ से, ग्राहक से धो हाथ।
व्यापारी पछतायगा, अय 'चन्दन' दिन-रात॥

जो जन स्थायी लाभ हित, क्षणिक लोभ दे छोड़।
धनाधीश वनता वही, 'चन्दन' दौलत जोड़॥

अर्थ-शुद्धि विन धन कभी, कही ठहरता नाहिं।
अनुचित साधन त्याग दें, अर्थोपार्जन माहि॥

दुरुपयोग धन-धान्य का, करे कभी नहिं भूल।
धनपति वनने के लिये, यही मन्त्र है मूल॥

दुराचार - दुर्व्यसन का, जो नहि रोग लगाय।
व्यापारी 'चन्दन' चतुर, वही एक कहलाय॥

देते तो हो मित्रता, लेते पड़े बिगाड़ ।
'चन्दन' दुश्मन कर लिया, जिसको दिया उधार ।।

निर्धन हो या सेठ हो, चाहे हो भूपाल ।
लेना-देना कर्ज का, शुभ नहिं 'चन्दनसाल' ।।

पल में मालामाल तो, पल में ही कंगाल ।
सट्टे की खटपट तजे, चटपट 'चन्दनलाल' ।।

न्याय-नीति-हो-धर्म हो, अगर वनज के साथ ।
सोना और सुगन्ध की, अय 'चन्दन' है बात ।।

याद रहे व्यापार में, 'चन्दन' की यह बात ।
अन्त समय परलोक मे, चले न कौड़ी साथ ।।

अय व्यापारी आदमी ! अत धर्म नहिं भूल ।
धन से बढकर धर्म है, सर्व सुखों का मूल ।।

धर्म सामने रख करे, जो भी कारोबार ।
दिन-दिन दुगुना-चौगुना, चमकेगा व्यापार ।।

न्याय-नीति को लोग नहि, बैठें कही बिसार ।
किंचित-सा व्यापार का, किया अतः विस्तार ।।

।। ३० दोहे सम्पूर्ण ।।

चाहे हो—कितना धनी; बली और विद्वान।
सज्जनद्वेषी दुष्ट जन, कभी न पाए मान॥

वनिताओ पर बद नज़र, और उठाना हाथ।
'चन्दन' परम असभ्यता— की ही समझे बात॥

वनिता-बालक-वृद्ध से, हर दारुण व्यवहार।
'चन्दन' सदा असह्य ही, होता सभी प्रकार॥

'चन्दन' सर्व समाज मे, निर्बल जन का मान।
रक्षणीय है कह गए, चोटी के विद्वान॥

धर्म-शास्त्र औ नीतियाँ, 'चन्दन' कहे पुकार।
वनिता-बालक-वृद्ध पर, करे न अत्याचार॥

वैरभाव को दृढ करे, बार-बार का कोप।
जिससे 'चन्दन' शांति सुख, हो जाते है लोप॥

अमन-चैन-आनन्द है, 'चन्दन' जिसे पसन्द।
सामाजिक ससार मे, बने कभी नहि अन्ध॥

स्वार्थ-अन्ध मदान्ध औ— धर्म-अन्ध फिर जान।
तीन तरह के अन्ध है, दुनिया के दरम्यान॥

सिरहाने लकेश के, लखन खडा तव जाय ।
कारण रावण जान कर, वोला यो मुस्काय ॥

“धन्य ! लखन ! है आपको; होकर राजकुमार ।
इतना भी नहि जानते, क्या है शिष्टाचार ॥

‘चन्दन’ जाए माँगने, शिक्षा की जो भीख ।
शिक्षक के सिर पर नही, खड़े पांव नजदीक ॥

करे लोक-मर्याद का, आप न जब तक मान ।
दे सकता मैं किस तरह, कहो ज्ञान का दान” ॥

लखनलाल चेते तभी, खडे पाव के पास ।
रावण ने उपदेश तब, दिया उन्हे यों खास ॥

“नया आप पर आ रहा, यौवन दशरथ-लाल !
खूव संभल इस मे रहे, लख कर मेरा हाल ॥

जिसने मारा है मुझे, नही लखन, नहि राम ।
उस जालिम का नाम है, मनसिज-मन्मथ-काम ॥

अधिक कहूं क्या आप हो, ‘चन्दन’ चतुर-सुजान ।
भले-वुरे की आप ही, कर लेना पहचान ॥”

॥ ३० दोहे सम्पूर्ण ॥

करने को इनसान की, और अधिक पहचान।
उसके मा औ बाप का, लीजे जीवन जान॥

होगे जैसे बाप-मा, हो वैसी सन्तान।
मीन-मेख इसमे नही, कहते प्रज्ञावान॥

मात-पिता हो सयमी, शीलवान गुण-खान।
प्राय होगी सद्‌गुणी, उनकी सब सन्तान॥

'चन्दन' चाहे अन्य का, सेर पड़े या पाव।
मा का पर सन्तान पर, सबसे अधिक प्रभाव॥

माता के मन की दशा, है दिखलाती रग।
गर्भ-जीव फूले-फले, उसके ही तो सग॥

मा का हो 'चन्दन' अगर, मिथ्या हाराचार।
रोग जन्म से लायगी, सन्तति विविध प्रकार॥

दुराचारिणी मात हो, जिसकी जग दरम्यान।
सदाचारिणी-सद्‌गुणी, हो-कैसे सन्तान?

मात-पिता को चाहिये, जैसी भी सन्तान।
उनके ही है हाथ मे, सन्तति का निर्मान॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥

'चन्दन' रखता उद्यमी, नर पहनावा चुस्त ।
नारी को पर वेश नहि, 'चन्दन' चुस्त दुरुस्त ।।

जिसका अय 'चन्दन' रहे, अस्त-व्यस्त ही चित्त ।
अस्त-व्यस्त ही वेश भी, होगा उसका नित्त ।।

भडकीली तवियत रखें, जो 'चन्दन' नर-नार ।
होगा उनका वेश भी, भड़कीला हर वार ।।

'नेहरू' नेता जब वने, त्यागे टाई-टोप ।
सादा सभी लिवास था, जब भी गए यूरोप ।।

ईसा - शूली - चिन्ह है, यह नकटाई साफ ।
रहे इसे क्यों वान्ध जव, नहि ईसाई आप ?

अंग्रेजो के राज मे, 'चन्दन' चला जनून ।
लगे लोग वनने वडे, पहन-पहन पतलून ।।

देश-प्रेम दिल बीच का, करने को फिर व्यक्त ।
लोग वने थे खूब ही, खद्दर के भी भक्त ।।

खद्दर मे भी आ घुसा, अय 'चन्दन' इक खोट ।
कई करे मन-मानियां, लेकर इसकी ओट ।।

।। १४ दोहे सम्पूर्ण ।।

अन्य अग प्राय. रहे, विल्कुल नही समक्ष ।
शीलवान नर की नजर, सदा देखती वक्ष ॥

नीच नरन की नज़र का, अजव-निराला ढग ।
अधिक कमर ही देखती, अन्य छोड़ सव अंग ॥

अय 'चन्दन' अति नीच के, सन्मुख जो भी आय ।
उसके पावो मे पडा, जूता खडा लखाय ॥

महानिकम्मा और की, केवल लखता पीठ ।
क्योकि पीछे गमन का, हो अभ्यासी ढीठ ॥

लज्जित-जन का देखिये, अधिक अनोखा ढग ।
रहता है वह देखता, अपने ही तो अग ॥

पुरुप भाण्ड स्वभाव का, आंखों को मटकाय ।
देखे उसको तो सभी, वह नहिं मगर लखाय ॥

सच्चे सन्तो की नजर, सरल-शान्त-निष्पाप ।
देखे सव को प्रेम से, ज्यो 'चन्दन' मां-वाप ॥

वच्चो की निर्मल नजर, सर्वाधिक निर्दोप ।
न ही देखे गहन गुण, न ही देखे दोष ॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥

दुराचारिणी क्या नही, वेश्या पाकर रूप ?
अत अकेले रूप पर, रीझें मूढ़न - भूप !

होना 'चन्दन' चाहिये, सही परीक्षा - ढंग ।
कस्तूरी नहिं फैंकिये, लख कर काला रंग ॥

हो नहिं योग्य-अयोग्य का, रूप - रंग से ज्ञान ।
उसके कार्य-स्वभाव से, लीजे 'चन्दन' जान ॥

चमक-दमक से ही नही, रुपया परखा जाय ।
खोटा है या है खरा, 'चन्दन' लखें वजाय ॥

सर-गहराई का पता, दे न प्रथम सोपान ।
अन्दर पैठे विन कभी, ठीक कही अनुमान ॥

स्वच्छ पुरुष नहिं जान ले, लख कर स्वच्छ कमीज ।
सम्भव है वनियान हो, अन्दर सड़ी-गलीज़ !!

सुखी जिसे भी जानना, चाहें 'चन्दन' आप ।
उसके सव परिवार पर, देखे सुख की छाप ॥

आप भले हो नर सुखी, दुखी अगर परिवार ।
सुखी उसे तव समझना, अय 'चन्दन' वेकार ॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥

'चन्दन' दुर्गुण छोड़िये, जिसके भी हों पास ।
सद्गुण लेकर कीजिये, अपना परम विकास ।।

प्रज्ञा, गुण का कीजिये, 'चन्दन' सद् उपयोग ।
बुरे काम में जो करे, बुरे समझिये लोग ।।

चाहे कितना कीजिये, यत्न आप दिन-रात ।
'चन्दन' पहुची तीन मे, गुप्त रहे नहि बात ।।

'चन्दन' पहुची तीन मे, गुप्त रहे तब बात ।
उनमे से दो देह का, अगर छोड़ दे साथ ।।

अय 'चन्दन' जो बात हो, पहुंची दो के पास ।
रह सकती है वह छुपी, काफी किये प्रयास ।।

सिवा एक के और तक, बात न पहुची जौन ।
उसको तो भगवान बिन, 'चन्दन' जाने कौन ।।

'चन्दन' शिष्टाचार से, व्यक्त बड़प्पन होय ।
बुद्धिमान इसको अत., कभी न भूले कोय ।।

भूले न व्यवहार मे, स्वाभिमान इनसान ।
औरो के अपमान औ– रहे मान का ध्यान ।।

वज्र हृदय के, है कही– कोमल कुसुम समान ।
महापुरुष की जीवनी, 'चन्दन' लखो महान ।।

सज्जन कम, जग में अधिक– मायावी इनसान ।
'चन्दन' आश्रय नीति का, लेते अतः सुजान ।।

सह सकता नहिं और की, अय 'चन्दन' जो बात ।
हसी-दिल्लगी क्यों करे, वह औरों के साथ ।।

जो औरों की बात को, सकता स्वयं सहार ।
उसको ही उपहास का, है 'चन्दन' अधिकार ।।

सद्‌गुण जहां पचास हों, दुर्गुण हों दो-चार ।
गुठली जैसे आम में, छुपते उसी प्रकार ।।

'चन्दन' चाहें लोग जो, स्वय मान-सम्मान ।
कभी भूल भी नहिं करें, औरो का अपमान ।।

औरों का अपमान कर, जो चाहे सम्मान ।
अय 'चन्दन' नहिं दूसरा, उस-सा है नादान ।।

'चन्दन' चान्दी-स्वर्ण से, सुखी न हो इनसान ।
केवल सद्‌गुण ही सही, सुख-आनन्द निधान ।।

प्रेम-प्रेम सब ही कहे, पर नहि जाने मर्म ।
नाम प्रेम का दूसरा, अय 'चन्दन' है धर्म ।।

प्रेम-प्यार से काम जो, बनता 'चन्दनलाल' ।
भय-धमकी-आतक से, बने नहीं त्रैकाल ।।

अगर अधिक सम्मान के, नही पात्र है आप ।
मिलने पर कम मान के, क्यो करते सन्ताप ?

गुरुता, लघुता, योग्यता, औ अयोग्यता जान ।
अन्य नजर मे आपका, इनसे बनता स्थान ।।

थोडो से ही ठीक है, अधिक जान-पहचान ।
परिचय अधिको से अधिक, अधिक करे नुक़सान ।।

प्रगट करो वैसे नही, जैसे नहि हो आप ।
करना होगा अन्यथा, 'चन्दन' पश्चाताप ।।

पहले ही हर बात को, सोचो खूब संभाल ।
पीछे निर्णय जो करो, 'चन्दन' मत वह टाल ।।

करना पार पहाड को, 'चन्दन' कर इकसार ।
अधिक सुगम उससे कही, चढकर करना पार ।।

जो चाहो 'चन्दन' रहे, रहस्य आपका लुप्त ।
सर्व प्रथम तो आप ही, रखना उसको गुप्त ॥

जो चाहो तुम दूसरे, उसको मत फैलांयं ।
तीन काल भी वात यह, होने वाली नांयं ॥

निज रहस्य जो स्वयं ही, सेवक को वतलाय ।
'चन्दन' सेवक को वही, स्वामी स्वयं बनाय ॥

नकली नक़ली है सदा, असली का क्या काम ।
अभिनय करने से कभी, वने न कोई राम ॥

ठीक दिशा मे जो चले, होकर मंगल-युक्त ।
उस नेता का अनुसरण, करें लोग भय-मुक्त ॥

'चन्दन' भली भलाइयों- की है कैसी रीत ।
रहे मीत तो मीत ही, हों वैरी भी मीत ॥

कोई कूड़ा भर चले, अपनी गाड़ी बीच ।
अय 'चन्दन वस जानिये, तैसे निन्दक नीच ॥

'चन्दन' चाहे आप जो, जीवन का उत्थान ।
गुणी स्वय वनकर करे, गुणियों का सम्मान ॥

॥ ६२ दोहे सम्पूर्ण ॥

'शान्तिस्वरूप' अनेक है, 'चन्दन' जग में नाम ।
मिला मगर नहि एक भी, कोई 'क्रोधीराम' ।।

क्रोध-क्रोध न एक-से, क्रोध-क्रोध मे फर्क ।
एक क्रोध से स्वर्ग तो, एक क्रोध से नर्क ।।

जान जलाता जो रहे, जीवन भर नहि जाय ।
'चन्दन' पत्थर-लीक-सा, क्रोध नर्क दिखलाय ।।

एक वर्ष से जो अधिक, क्रोध रखे नादान ।
'चन्दन' अगले जन्म मे, वह बनता हैवान ।।

चार महीने से अधिक, रहने नहि जो पाय ।
मानव को मानव पुनः, ऐसा क्रोध बनाय ।।

जो पखवाड़े से अधिक, कभी न रहने पाय ।
अय 'चन्दन' जल-लीक-सा, क्रोध स्वर्ग पहुंचाय ।।

उत्तम जन क्षण कोप ही, रखता 'चन्दनलाल' ।
आठ पहर मध्यम मगर, जीवन भर चंडाल ।।

क्रुद्ध अवस्था मे कभी, करे न कोई काम ।
केवल 'चन्दन' चाहिये, चुप हो जपना नाम ।।

जो दिखलाए नर्क गति, जो दिखलाए जेल।
अय 'चन्दन' इस क्रोध के, डालो नाक नकेल ॥

क्रोध कठिन है जीतना, जीते कोई सन्त।
'चन्दन' कोई विज्ञ या- ज्ञानी या गुणवन्त ॥

अय 'चन्दन' है क्रोध का, कठिन जीतना कौन।
बन्द कीजिये बोलना, धार लीजिये मौन ॥

चेले के अपराध पर, आया गुरु को क्रोध।
चण्डकौशिया सर्प वह, मर कर बना अबोध ॥

समता सागर 'वीर' से, पा कर 'चन्दन' बोध।
चण्डकौशिया आठवे, स्वर्ग गया तज क्रोध ॥

चक्रवर्ती बनने चला, वह कौणिक भूपाल।
छठी नर्क मे क्रोध से, पहुचा 'चन्दनलाल' ॥

क्रोधी कौरव नहिं रहे, रहा न क्रोधी कंश।
अय 'चन्दन' ससार से, मिटा उन्हीं का वंश ॥

क्रोध, कोप, संज्वलन, कलह, क्रुध, रुट, रोष, विवाद।
प्रतिघः और अमर्ष दश, क्रोध-नाम रख याद ॥

॥ ३० दोहे सम्पूर्ण ॥

हाथ मिलाता मीत से, मन मे भर कर जोश ।
अंग-अंग उठता झटक, गुम हो उसके होश !

वाणी से व्यवहार से, अन्य न कुछ दिखलाय ।
बस स्वविद्या, वंश का, अहंकार प्रगटाय ।।

उसके मिथ्या मान का, जहा समर्थन होय ।
मन्त्र-मुग्ध-सा हो सुने, उसमें ही बस खोय ।।

जो सामाजिक आ गया, सम्मुख कभी प्रसग ।
वहा सिकोडे नाक-भौ, बदले मुख का रंग ।।

रुचे लोक व्यवहार नहि, रुचे नहि शिष्टाचार ।
औरो से कर बैठता, अकसर दुर्व्यवहार ।।

सच्चा साक्षर है वही, निर अभिमानी जौन ।
महा घमण्डी का भला, आदर करता कौन ।।

होता जिसे अजीर्ण है, विद्या का भरपूर ।
रहना 'चन्दन' चाहिये, उस से कोसों दूर ।।

अहंकार से नर्क है, फर्क न इसमें जान ।
सब धर्मो का अर्क यह, अय 'चन्दन' पी छान ।।

।। १४ दोहे सम्पूर्ण ।।

सत्य उसे नहि जानिये, जो हो छल से युक्त।
सत्य उसे ही मानिये, जो हो छल से मुक्त॥

कच्चे घट जल भर धरे, कोई ज्यों नादान।
धन धोखे से जोड़ना, 'चन्दन' तैसे जान॥

माया ! तेरे चल पड़े, कैसे - कैसे ढग !
रग-रूप में बेचते, बालू रेत भी रग !!

पीतल पर कर स्वर्ण की, पालिश 'चन्दनलाल'।
मायावी जन बेचते, कहकर असली माल !!

असली अब बादाम का, मिलना मुश्किल तेल।
'चन्दन' खसखस-तेल का, उस में भी हो मेल !!

कैसे आए रोग में, अय 'चन्दन' आराम।
डली बना चूना विके, तवाशीर के नाम !!

तेरी माया मोहिनी ! कही न महिमा जाय।
रगा हुआ है घास पर, कहे उसे भी चाय !!

नीचे बुरी कपास तो, ऊपर भली कपास।
वेचे कर-कर ढेरिया, माया ! तेरे दास !!

गमनशील है वैल का, यथा मूत्र का बल ।
मानवगति नहि रोकता, 'चन्दन' थोडा छल ।।

झटपट वट ज्यो ऊन का, अय 'चन्दन' खुल जाय ।
नाम मात्र माया-सहित, प्राणी स्वर्ग सिधाय ।।

कपट-कुटिलता का नही, जिन मे नाम-निशान ।
महा सरल मानव बने, अय 'चन्दन' भगवान ।।

कपट कर्म नहिं भूल भी, कोई कभी कमाय ।
'चन्दन' मानव अन्यथा, वनिता बन पछताय ।।

ज्यो-ज्यो माया के अधिक, होता जीव करीब ।
चार-तीन-दो-एक हो, इन्द्रिय वाला जीव ।।

माया से इनसान है, रुलता जग दरम्यान ।
जीत सरलता से इसे, 'चन्दन' कर कल्याण ।।

उपधि, दम्भ, कैतव, कपट, शाठ्य, छद्म, छल जान ।
कुसृति, निसृति औ व्याज दश, माया-नाम बखान ।।

नये नाम की और की, माया ने बख्शीस ।
'चन्दन' उसको कह रहे, सभी 'चार सौ बीस' ।।

।। ३० दोहे सम्पूर्ण ।।

सन्ध्या नहिं, सत्सग नहिं, अय 'चन्दन' नहि दान ।
कहिये कैसे लालची, कर सकता कल्याण ।।

'चन्दन' दौलत के लिये, पलट-पलट कर वेश ।
कितना मानव भटकता, फिरता देश-विदेश !!

जो चाहो तुम स्वर्ग के, सुख से भरे विमान ।
'चन्दन' पैसे के लिये, नहिं वेचो ईमान ।।

'चन्दन' दौलत देख जो, तजे दीन - ईमान ।
दुनिया मे नहिं दूसरा, उसा-सा फिर नादान ।।

वन पाकर नहि कीजिये, थोड़ा भी अभिमान ।
वन-दौलत यह नहिं रहे, 'चन्दन' एक स्थान ।।

अय 'चन्दनमुनि' मगनी, और व्याह के वीच ।
खलल आजकल डालता, यह लालच ही नीच !!

फंसे लोभ से जाल खग, वनता वन्दी चोर ।
मीन मरे, मर्कट लहे, अय 'चन्दन' दुख घोर ।।

रूप होटलो में विके, फिल्म स्टुडियो लाज ।
सव कुछ नगे नाच मे, नीच लोभ के काज ।।

धर्म तथा भगवान का, लेकर लोभी नाम ।
फिरते स्वार्थ साधते, मांग-मांग कर दाम ॥

न करवाये नीच जो, नही एक भी पाप ।
ग्रन्थ-पन्थ सव कह रहे, 'लोभ पाप का वाप' ॥

अय 'चन्दन' निर्लोभता, दूजा फिर सन्तोष ।
दोनो विन नहि लोभ के, लगे ठिकाने होश ॥

अय 'चन्दन' जो लाडली, लालच की सन्तान ।
दुर्गत - दुख - दाता तजें, 'पन्द्रह कर्मादान' ॥

कैसे रहना, और क्या- करना जग दरम्यान ?
सोच शान्त एकान्त में, अय लोभी इनसान !

सोने मे है सुख कहां, सोना दुख की खान ।
'सो ना, सोना कह रहा, समझे नहि नादान ॥

वुझ सकती है पलक मे, पानी की तो प्यास ।
पैसो की पर प्यास को, कम हैं लाख गिलास ॥

वुरे तरीको से अगर, अय 'चन्दन' वन आय ।
सग वहुत हैरानियां, परेशानियां लाय ॥

'चन्दन' लालच-लोभ जो, सीमा से बढ जाय।
दया, सत्य, सन्तोष, सुख, समता सभी नसाय॥

हीन-अधिक ही तोल तो— हीन-अधिक ही माप।
करवाता है लोभ ही, और अनेकों पाप॥

'नर्क भेजदे आपको, या कि स्वर्ग मंझार'?
'कहे लालची चाहिए, मुझको पैसे चार'॥

पैसे को ही देवता, वर्तमान मे मान।
दौडे जाते जर्मनी, अमरीका जापान॥

नहि धनिको को चैन है, नहि निर्धन को चैन!
दोनो ही बे-चैन है, अय 'चन्दन' दिन-रैन!!

ज्ञान, ध्यान का, दान का, तप का लोभ प्रशस्त।
धन, भोजन का, भोग का, लालच बुरे समस्त॥

खाने के जो लालची, जाते वहुत समेट।
क्या बतलायें बाद जो, भुगते उनका पेट!!

हमे दिया है खाक जो, कहता बारम्बार।
उस लोभी दामाद का, कौन करे सत्कार॥

'चन्दन' माया मोहिनी, जादू जिसके पास।
जीत-जीत जिसने किया, जगत चरण का दास॥

तख्त-ताज के लोभ का, करके खडा फिसाद।
सौ के सौ कौरव हुए, अय 'चन्दन' बर्बाद॥

तख्त-ताज के लोभ को, दिखलाया जिस जीत।
धन्य! 'राम' के साथ की, 'भरत' भ्रात की प्रीत॥

लालच करवाता नही, कहो कौन सा पाप।
राजा 'कौणिक' ने किया, वन्दी अपना बाप॥

'चन्दन' जोड़ा था जिन्हे, मेहनत कर दिन-रात।
छिने वैल तो रह गया, 'मम्मन' मलता हाथ॥

वादशाह यूनान का, लोभी जग विख्यात।
कहो 'सिकन्दर' ले गया, जाते दम क्या साथ॥

कवरें आदिक तोड़ कर, जोड़े गंज अनेक।
क्या कुछ 'कारू' ले गया, अय 'चन्दन' ले देख॥

किसे नही मालूम है, 'शाहजहां' का हाल।
वन्दी वेटे ने किया, जिसको 'चन्दनलाल'॥

॥ ६२ दोहे सम्पूर्ण ॥

रवि रजनी नहिं ठहरते, जैसे एक स्थान।
मानी में न रहे विनय, विनयी मे नहिं मान ॥

जिसको 'चन्दन' चाहिये, विद्या, गहरा ज्ञान।
है वनता विनयी वही, वालक, वृद्ध, जवान ॥

राग, रुपया, विनय औ, शील, रूप, मधु बोल।
'चन्दन' ये हैं जगत में, छः जादू अनमोल ॥

अर्थ-विनय और भय-विनय, काम-विनय फिर और।
धर्म-विनय ही एक है, विनयों की सिरमौर ॥

सेवक, शिष्या, शिष्य, सुत, नव वधुए, परिवार।
वहुत-वहुत ही विनय से, लहें सदा सत्कार ॥

नम्र रहे जो अहर्निश, ज्ञान गुणो के साथ।
गणधर 'गौतम' की विनय, विश्व वीच विख्यात ॥

'पथक जी' मुनिराज-सा, विनयवान गुणवान।
'चन्दन' मिलना है कठिन, आज जगत दरम्यान ॥

चन्दनवाला भी जिसे, थकी न कहते धन्य।
'मृगा सती'-सी केवली, विनयवती नहि अन्य ॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥

वने सहस्रनाग नित्य, निन्दा करे निशक ।
गुणियो की तारीफ मे, पर क्या वाणी-रंक ?

पर-दोषो को खोज कर, रखने में कण्ठस्थ ।
ठीक जरा वतलाइये, हो कितने अभ्यस्त ?

औरो का खुद आप ही, करते सदा बखान ?
करे आपका भी कभी, कोई या गुणगान ?

कौन अधिकतर आपके, गाता है यश - गीत ?
आप स्वय ? या आपके— वैरी ? अथवा मीत ?

आते ही घर आपके, चलता क्या तूफ़ान ?
सन्नाटा या एकदम, जैसे बन सुनसान ?

कितना मन मे क्रोध है ? कितना मन में मान ?
कितना मन मे लोभ-छल ? किया कभी क्या ध्यान ?

निर्धन-दुखिया-दीन के, कुचल-कुचल अरमान ।
नही किये क्या नव्य ये, भव्य भवन निर्माण ?

नर्क वना या आपसे, स्वर्ग वना संसार ?
अय 'चन्दन' वतलाइये, करते कभी विचार ?

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥

अल्पावस्था में गए, दोनों स्वर्ग सिधार ।
'कंवरचन्द' है, और है– उसका अब परिवार ॥

भगिनी की सुसराल शुभ, जीजा जी 'गोपाल' ।
भूलू क्यो 'हनुमानगढ', जहां पढ़ा कुछ साल ॥

विद्यालय फिर सेठिया, पहुंचा 'बीकानेर' ।
बाबू 'भैरोंदान जी', दया दिखाई ढेर ॥

'पूज्य जवाहरलाल' के, दिल्ली के चौमास ।
जा करके फिर था किया, कुछ-कुछ शास्त्राभ्यास ॥

उन्नीसौ अट्ठासिया, आया माघ बसन्त ।
गुरुवर 'पन्नालाल' से, बना जैन था सन्त ॥

'पूज्य आत्माराम जी', कवि 'अमर उपाध्याय' ।
के भी चरणों में किया, शास्त्रों का स्वाध्याय ॥

बचपन में ही बहुत था, काव्य-कला से प्यार ।
गुणियों के संसर्ग से, आए अक्षर चार ॥

है तो यह भी धृष्टता, यों ही किया खयाल ।
'आत्म-परिचय' और अब, क्या दे 'चन्दनलाल' ॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥

जिनकी कृतियां भी वनी, दोहो की आधार।
'चन्दन' लेखक-वृन्द का, रहा मान आभार॥

'स्थानकवासी जैन' मे, जिनका उच्च स्थान।
धर्म-धुरन्धर धीर-धर, आगम-ज्ञान-निधानै॥

आचार्य 'श्रीचन्द्र' के, जो है शिष्य महान।
वैरागी, त्यागी, तपी, जैन जगत की शान॥

गुरुवर 'पन्नालाल' का, सारा है उपकार।
जो 'चन्दन दोहावली', सहज हुई तैयार॥

'वरताला मण्डी' जहां, धर्मी-प्रेमी लोग।
लिखने का दोहावली, वना यही संयोग॥

विक्रम सम्वत् 'दोसहस– सत्ताइस' शुभ जान।
करी पूर्ण दोहावली, माघ शुक्ल दरम्यान॥

दीक्षा दिन भी आ गया, मंगलकारी साथ।
सोना और सुगन्ध की, वनी सहज ही वात॥

दया-धर्म-सा अन्य नहि, धर्म परम निर्भय।
दया धर्म की प्रेम से, कहता 'चन्दन' जय॥

॥ १४ दोहे सम्पूर्ण ॥